प्रतिष्ठा पूजाञ्जलि

संकलन/सम्पादन

पं. अभयकुमार शास्त्री

एम.कॉम, जैनदर्शनाचार्य

प्रकाशक

श्री कुन्दकुन्द कहान तीर्थ सुरक्षा ट्रस्ट, मुम्बई

....

फोन : ....

Email - ....

प्रथम संस्करण : ५ हजार

(24 नवम्बर 2012,

पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सव, सम्मेदशिखर)

मूल्य : ....

मुद्रक :

देशना कम्प्यूटर्स, जयपुर

मोबा. 9928517346

विषयानुक्रमणिका

प्रकाशकीय
....

प्रतिष्ठा पूजाञ्जलि

मंगलाचरण

पंचपरमेष्ठी वंदना

अरहंत सिद्ध सूरि उपाध्याय साधु सर्व,
अर्थ के प्रकाशी मांगलीक उपकारी हैं।
तिनको स्वरूप जान राग तैं भई जो भक्ति,
काय को नमाय स्तुति को उचारी है।।
धन्य-धन्य तुमही तें काज सब आज भये,
कर जोरि बार-बार वन्दना हमारी है।
मंगल कल्याण सुख ऐसो हम चाहत हैं,
होहु मेरी ऐसी दशा जैसी तुम धारी है।।

वन्दनीय हो गये

वन्दनीय हो गये प्रभु, निज का वन्दन कर।
हुए जगत आराध्य, स्वयं का आराधन कर।।
परमतत्त्व की श्रद्धा से, श्रद्धेय हो गये।
आप आपको ध्याय, ध्यान के ध्येय हो गये।।

क्या करें गुणगान

क्या करें गुणगान प्रभुवर आपके उपकार का।
आपने निज निधि हमें दी नमन करते आपका।।
आप में प्रभु आप से ही आप-सी श्रद्धा जगे।
दूर होंगे पाप सारे परिणति निज में रमें।।

मंगलाष्टक

(शार्दूलविक्रीडित)

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्रमहिताः सिद्धाश्च सिद्धीश्वराः
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः।
श्रीसिद्धान्तसुपाठकाः मुनिवराः रत्नत्रयाराधकाः
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु ते मंगलम्।।१।।

श्रीमन्नम्र – सुरासुरेन्द्र – मुकुट – प्रद्योत– रत्नप्रभा–
भास्वत्पाद–नखेन्दवः प्रवचनाम्भोधीन्दवः स्थायिनः।
ये सर्वे जिनसिद्ध–सूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः,
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मंगलम्।।२।।

सम्यग्दर्शन–बोध–वृत्तममलं रत्नत्रयं पावनं,
मुक्तिश्री नगराधिनाथ–जिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रदः।
धर्मः सूक्तिसुधा च चैत्यमखिलं चैत्यालयं श्र्यालयं,
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मंगलम्।।३।।

नाभेयादि–जिनाधिपास्त्रिभुवनख्याताश्चतुर्विंशतिः,
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश।
ये विष्णु–प्रतिविष्णु–लाङ्गलधराः सप्तोत्तरा विंशतिः,
त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्टिपुरुषाः कुर्वन्तु ते मंगलम्।।४।।

ये सर्वौषधऋद्धयः सुतपसो वृद्धिंगता पञ्च ये,
ये चाष्टांगमहानिमित्तकुशला येऽष्टाविधाश्चारणाः।
पञ्चज्ञानधरास्त्रयोऽपि बलिनो ये बुद्धि–ऋद्धीश्वराः,
सप्तैते सकलार्चिता गणभृतः कुर्वन्तु ते मंगलम्।।५।।

कैलाशे वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरे,
चम्पायां वसुपूज्य सज्जिनपतेः सम्मेदशैलेऽर्हताम्।
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे नेमीश्वरस्यार्हतो,
निर्वाणावनयः प्रसिद्धविभवाः कुर्वन्तु ते मंगलम्।।६।।

ज्योतिर्व्यन्तर–भावनामरगृहे मेरौ कुलाद्रौ तथा,
जम्बू–शाल्मलि–चैत्यशाखिषु तथा वक्षार–रौप्याद्रिषु।
इष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नन्दीश्वरे,
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मंगलम्।।७।।

यो गर्भावतरोत्सवो भगवतां जन्माभिषेकोत्सवो,
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो यः केवलज्ञानभाक्।
यः कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा संपादितः स्वर्गिभिः,
कल्याणानि च तानि पञ्च सततं कुर्वन्तु ते मंगलम्।।८।।

इत्थं श्री जिनमंगलाष्टकमिदं सौभाग्यसंपत्प्रदम्,
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थङ्कराणामुषः।
ये शृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैर्धर्मार्थकामान्विता,
लक्ष्मीराश्रियते व्यपायरहिता निर्वाणलक्ष्मीरपि।।९।।

****

निरखत जिनचन्द्रवदन

निरखत जिनचन्द्र–वदन स्व–पद सुरुचि आई।
प्रकटी निज आन की पिछान ज्ञान भान की।
कला उद्योत होत काम–जामनी पलाई।।निरखत.।।
शाश्वत आनन्द स्वाद पायो विनस्यो विषाद।
आन में अनिष्ट–इष्ट कल्पना नसाई।।निरखत.।।
साधी निज साध की समाधि मोह–व्याधि की।
उपाधि को विराधि कैं आराधना सुहाई।।निरखत.।।
धन दिन छिन आज सुगुनि चिन्ते जिनराज अबै।
सुधरो सब काज 'दौल' अचल रिद्धि पाई।।निरखत.।।

मंगल पञ्चक

(*हरिगीतिका*)

गुणरत्नभूषा विगतदूषा: सौम्यभावनिशाकरा:
सद्बोध-भानुविभा-विभाषितदिक्चया विदुषांवरा: ।
नि:सीमसौख्यसमूह मण्डितयोगखण्डितरतिवरा:
कुर्वन्तु मङ्गलमत्र ते श्री वीरनाथ जिनेश्वरा: ।।१।।

सद्ध्यानतीक्ष्ण-कृपाणधारा निहतकर्मकदम्बका,
देवेन्द्रवृन्दनरेन्दवन्द्या: प्राप्तसुखनिकुरम्बका: ।
योगीन्द्रयोगनिरूपणीया: प्राप्तबोधकलापका:
कुर्वन्तु मङ्गलमत्र ते सिद्धा: सदा सुखदायका ।।२।।

आचारपंचकचरणचारणचुंचव: समताधरा:
नानातपोभरहेतिहापितकर्मका: सुखिताकरा: ।
गुप्तित्रयीपरिशीलनादिविभूषिता वदतांवरा:
कुर्वन्तु मङ्गलमत्र ते श्री सूरयोऽर्जितशंभरा: ।।३।।

द्रव्यार्थ-भेद-विभिन्न-श्रुतभरपूर्णतत्त्वनिभालिनो,
दुर्योगयोगनिरोधदक्षा: सकलवरगुणशालिन: ।
कर्तव्यदेशनतत्परा विज्ञानगौरवशालिन:
कुर्वन्तु मङ्गलमत्र ते गुरुदेवदीधितिमालिन: ।।४।।

संयमसमित्यावश्यकापरिहाणि-गुप्ति-विभूषिता:
पंचाक्षदान्तिसमुद्यता: समतासुधापरिभूषिता: ।
भूपृष्ठविष्टरसायिनो विविधर्द्धिवृन्दविभूषिता
कुर्वन्तु मङ्गलमत्र ते मुनय: सदा शमभूषिता: ।।५।।

****

घड़ी जिनराज दर्शन की...

घड़ी जिनराज दर्शन की, हो आनंदमय हो मंगलमय,
घड़ी यह सत्समागम की, हो आनंदमय हो मंगलमय ।।1।।
अहो प्रभुभक्ति जिनपूजा, और स्वाध्याय तत्त्व-निर्णय,
भेद-विज्ञान स्वानुभूति, हो आनंदमय हो मंगलमय ।।2।।
असंयम भाव का त्यागन, सहज संयम का हो पालन,
अनूपम शान्त जिन-मुद्रा, हो आनंदमय हो मंगलमय ।।3।।
क्षमादिक धर्म स्वाश्रय से, सहज वर्तें सदा वर्तें,
परम निर्ग्रन्थ मुनि जीवन, हो आनंदमय हो मंगलमय ।।4।।
हो अविचल ध्यान आतम का, कर्म बंधन सहज छूटें,
अचल ध्रुव सिद्ध पद प्रगटे, हो आनंदमय हो मंगलमय ।।5।।

कैसी सुन्दर जिनप्रतिमा...

कैसी सुन्दर जिनप्रतिमा है, कैसा सुन्दर है जिनरूप।
जिसे देखते सहज दीखता, सबसे सुन्दर आत्मस्वरूप ।।टेक ।।
नग्न दिगम्बर नहीं आडम्बर, स्वाभाविक है शांत स्वरूप।
नहीं आयुध नहीं वस्त्राभूषण नहीं संग नारी दुखरूप ।।1।।
बिन श्रृंगार सहज ही सोहे, त्रिभुवन माँही अतिशय रूप।
कायोत्सर्ग दशा अविकारी, नासादृष्टि आनन्द रूप ।।2।।
अर्हंत प्रभु की याद दिलाती, दर्शाती अपना प्रभु रूप।
बिन बोले ही प्रगट कर रही, मुक्तिमार्ग अक्षय सुखरूप ।।3।।
जिसे देखते सहज नशावे, भव-भव के दुष्कर्म विरूप।
भावों में निर्मलता आवे, मानो हुए स्वयं जिनरूप ।।4।।
महाभाग्य से दर्शन पाया, पाया भेदविज्ञान अनूप।
चरणों में हम शीश नवावें, परिणति होवे साम्यस्वरूप ।।5।।

ऐसा ही प्रभु मैं भी...

ऐसा ही प्रभु मैं भी हूँ, ये प्रतिबिम्ब सु-मेरा है।
भली-भांति मैंने पहचाना, ऐसा रूप सु-मेरा है।।टेक।।

ज्ञान शरीरी अशरीरी प्रभु, सब कर्मों से न्यारा है।
निष्क्रिय परमप्रभु ध्रुव ज्ञायक, अहो प्रत्यक्ष निहारा है।।
जैसे प्रभु सिद्धालय राजें, वही स्वरूप सु-मेरा है।
भली-भांति मैंने पहचाना, ऐसा रूप सु-मेरा है।।1।।

रागादिक दोषों से न्यारा, पूर्ण ज्ञानमय राज रहा।
असम्बद्ध सब परभावों से, चेतन-वैभव छाज रहा।।
चिन्मूरति चिन्मूरति अनुपम, ज्ञायकभाव सु-मेरा है।
भली-भांति मैंने पहचाना, ऐसा रूप सु-मेरा है।।2।।

दर्शन-ज्ञान-अनन्त विराजे, वीर्य अनन्त उछलता है।
सुखसागर अनन्त लहरावे, ओर-छोर नहीं दिखता है।।
परमपारिणामिक अविकारी, ध्रुव स्वरूप ही मेरा है।
भली-भांति मैंने पहचाना, ऐसा रूप सु-मेरा है।।3।।

ध्रुव दृष्टि प्रगटी अब मेरे, ध्रुव में ही स्थिरता हो।
ज्ञेयों में उपयोग न जावे, ज्ञायक में ही रमता हो।।
परम स्वच्छ स्थिर आनन्दमय, शुद्धस्वरूप ही मेरा है।
भली-भांति मैंने पहचाना, ऐसा रूप सु-मेरा है।।4।।

जिन-स्तवन

है यही भावना हे स्वामिन्, तुम सम ही अन्तदृष्टि हो।
है यही कामना हे प्रभुवर, तुम सम ही अन्तर्वृत्ति हो।।टेक।।

तुमको पाकर संतुष्ट हुआ, निज शाश्वतपद का भान हुआ।
पर तो पर ही है देह स्वांग, तुमको लख भेदविज्ञान हुआ।।
मैं ज्ञानानंद स्वरूप सहज, ज्ञानानन्दमय सृष्टि हो।।1।।

तुम निर्मोही रागादि रहित, निष्काम परम निर्दोष प्रभो।
निष्कर्म, निरामय, निष्कलंक, निर्ग्रन्थ सहज अक्षोभ अहो।।
मेरा भी ऐसा ही स्वरूप, अनुभूति धर्ममय वृष्टि हो।।2।।
इन्द्रादिक चरणों में नत हो, पर आप परम निरपेक्ष रहो।
अक्षयवैभव अद्भुत प्रभुता, लखते ही चित्त आनन्दमय हो।।
हे परम पुरुष आदर्श रहो, उर में निष्काम सु भक्ति हो।।3।।
संसार प्रपंच महा दुखमय, मेरा मन अति ही घबराया।
होकर निराश सबसे प्रभुवर, मैं चरण शरण में हूँ आया।।
मम परिणति में भी स्वाश्रय से, रागादिक से निवृत्ति हो।।4।।
जगख्याति लाभ की चाह नहीं, हो प्रगट आत्मख्याति जिनवर।
उपसर्गों की परवाह नहीं, आराधन हो सुखमय प्रभुवर।।
सब कर्म कलंक सहज विनशे, विभु निजानन्द में तृप्ति हो।।5।।

दर्शन-स्तुति

नाथ तुम्हारे दर्शन से, निज दर्शन मैंने पाया।
तुम जैसी प्रभुता निज में लख, चित मेरा हर्षाया।।टेक।।

तुम बिन जाने निज से च्युत हो, भव-भव में भटका हूँ।
निज का वैभव निज में शाश्वत, अब मैं समझ सका हूँ।।
निज प्रभुता में मगन होऊँ, मैं भोगूँ निज की माया।
नाथ तुम्हारे दर्शन से, निज दर्शन मैंने पाया।।1।।

पर्यय में पामरता, तब भी द्रव्य सुखमयी राजे।
लक्ष्य तजूँ पर्यायों का, निजभाव लखूँ सुख काजे।।
पर्यायों में अटक-भटक कर, मैं बहु दुःख उठाया।
नाथ तुम्हारे दर्शन से, निज दर्शन मैंने पाया।।2।।

पद्मासन थिर मुद्रा, स्थिरता का पाठ पढ़ाती।
निजभाव लखे से सुख होता, नासादृष्टि सिखलाती।।
कर पर कर ने कर्तृत्व रहित, सुखमय शिवपंथ सुझाया।
नाथ तुम्हारे दर्शन से, निज दर्शन मैंने पाया।।३।।

प्रतिमा प्रक्षाल पाठ

(दोहा)

परिणामों की स्वच्छता, के निमित्त जिनबिम्ब।
इसीलिए मैं निरखता, इनमें निज प्रतिबिम्ब।।
पञ्च प्रभु के चरण में, वन्दन करूँ त्रिकाल।
निर्मल जल से कर रहा, प्रतिमा का प्रक्षाल।।

अथ पौर्वाह्निकदेववन्दनायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भावपूजास्तवन-वन्दनासमेतं श्री पंचमहागुरुभक्तिपूर्वककायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(नौ बार णमोकार मन्त्र पढ़ें)

(छप्पय)

तीन लोक के कृत्रिम और अकृत्रिम सारे।
जिनबिम्बों को नित प्रति अगणित नमन हमारे।।
श्री जिनवर की अन्तर्मुख छवि उर में धारूँ।
जिन में निज का निज में जिन-प्रतिबिम्ब निहारूँ।।
मैं करूँ आज संकल्प शुभ, जिन प्रतिमा प्रक्षाल का।
यह भाव सुमन अर्पण करूँ, फल चाहूँ गुणमाल का।।

ॐ ह्रीं प्रक्षालप्रतिज्ञायै पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

(प्रक्षाल की प्रतिज्ञा हेतु पुष्प क्षेपण करें)

(रोला)

अन्तरंग बहिरंग सुलक्ष्मी से जो शोभित।
जिनकी मंगल वाणी पर है त्रिभुवन मोहित।।
श्री जिनवर सेवा से क्षय मोहादि विपत्ति।
हे जिन! श्री लिख पाऊँगा निजगुण सम्पत्ति।।

(प्रक्षाल की चौकी पर केशर से श्री लिखें)

(दोहा)

अन्तर्मुख मुद्रा सहित, शोभित श्री जिनराज।
प्रतिमा प्रक्षालन करूँ, धरूँ पीठ यह आज।।

ॐ ह्रीं श्री पीठस्थापनं करोमि।

(प्रक्षाल हेतु चौकी पर थाली स्थापित करें)

(रोला)

भक्ति रत्न से जड़ित आज मंगल सिंहासन।
भेद-ज्ञान जल से क्षालित भावों का आसन।।
स्वागत है जिनराज! तुम्हारा सिंहासन पर।
हे जिनदेव पधारो श्रद्धा के आसन पर।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मतीर्थाधिनाथ भगवन्निह सिंहासने तिष्ठ तिष्ठ।

(थाली में जिनबिम्ब विराजमान करें)

क्षीरोदधि के जल से भरे कलश ले आया।
दृग-सुख-वीरज ज्ञानस्वरूपी आतम पाया।।
मंगल कलश विराजित करता हूँ जिनराजा।
परिणामों के प्रक्षालन से सुधरें काजा।।

ॐ ह्रीं अर्हं कलशस्थापनं करोमि।

(चारों कोनों में निर्मल जल से भरे कलश स्थापित करें)

जल-फल आठों द्रव्य मिलाकर अर्घ्य बनाया।
अष्ट अंग युत मानो सम्यग्दर्शन पाया।।
श्री जिनवर के चरणों में यह अर्घ्य समर्पित।
करूँ आज रागादि विकारी भाव विसर्जित।।

ॐ ह्रीं श्री स्नपनपीठस्थितजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(पीठ स्थित जिनप्रतिमा को अर्घ्य चढ़ायें)

मैं रागादि विभावों से कलुषित, हे जिनवर!
और आप परिपूर्ण वीतरागी हो प्रभुवर।।
कैसे हो प्रक्षाल, जगत के अघ क्षालक का।
क्या दरिद्र होगा पालक? त्रिभुवन पालक का।।
भक्ति भाव के निर्मल जल से अघ मल धोता।
है किसका अभिषेक भ्रान्त चित खाता गोता।।
नाथ! भक्तिवश जिनबिम्बों का करूँ न्हवन मैं।
आज करूँ साक्षात् जिनेश्वर का स्पर्शन मैं।।

ॐ ह्रीं श्रीमन्तं भगवन्तं कृपालसन्तं वृषभादिमहावीरपर्यन्तं चतुर्विंशतितीर्थंकर-परमदेवमाद्यानामाद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखण्डे.....नाम्निनगरे मासानामुत्तमे ....मासे.....पक्षे.....तिथौ......वासरे मुन्यार्यिकाश्रावकश्राविकाणां सकलकर्म-क्षयार्थं पवित्रतर-जलेन जिनमभिषेचयामि।

(चारों कलशों से अभिषेक करें तथा वादित्र नाद करायें एवं जय-जय शब्दोच्चारण करें)

(दोहा)

क्षीरोदधि-सम नीर से, करूँ बिम्ब प्रक्षाल।
श्री जिनवर की भक्ति से, जानूँ निज पर चाल।।
तीर्थंकर का न्हवन शुभ, सुरपति करें महान।
पंचमेरु भी हो गये, महातीर्थ सुखदान।।
करता हूँ शुभ भाव से, प्रतिमा का अभिषेक।
बचूँ शुभाशुभ भाव से, यही कामना एक।।

(यदि अभिषेक करनेवाले भाई अधिक हों तो अन्य अभिषेक पाठ भी पढ़ें)

जल-फलादि वसु द्रव्य ले, मैं पूजूँ जिनराज।
हुआ बिम्ब अभिषेक अब, पाऊँ निजपदराज।।

ॐ ह्रीं अभिषेकान्ते वृषभादिवीरान्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्री जिनवर का धवल यश, त्रिभुवन में है व्याप्त।
शान्ति करें मम चित्त में, हे परमेश्वर आप्त।।

(पुष्पाञ्जलि क्षेपण करें)

(रोला)

जिनप्रतिमा पर अमृतसम जलकण अति शोभित।
आत्म-गगन में गुण अनन्त तारे भवि मोहित।।
हो अभेद का लक्ष्य भेद का करता वर्जन।
शुद्ध वस्त्र से जल-कण का करता परिमार्जन।।

(प्रतिमा को शुद्ध वस्त्र से पोंछे)

(दोहा)

श्री जिनवर की भक्ति से, दूर होय भव-भार।
उर-सिंहासन थापिये, प्रिय चैतन्य कुमार।।

(जिनप्रतिमा को सिंहासन पर विराजमान करें तथा निम्न छन्द बोलकर अर्घ्य चढ़ायें।)

जल-गन्धादिक द्रव्य से, पूजूँ श्री जिनराज।
पूर्ण अर्घ्य अर्पित करूँ, पाऊँ चेतनराज।।

ॐ ह्रीं श्री पीठस्थितजिनाय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जिन संस्पर्शित नीर यह, गन्धोदक गुण खान।
मस्तक पर धारूँ सदा, बनूँ स्वयं भगवान।।

(मस्तक पर गन्धोदक चढ़ायें। अन्य किसी अंग से गन्धोदक का स्पर्श वर्जित है।)

****

प्रक्षाल के सम्बन्ध में विचारणीय प्रमुख बिन्दु ह्ल

१. अरहन्त भगवान का अभिषेक नहीं होता, जिनबिम्ब का प्रक्षाल किया जाता है, जो अभिषेक के नाम से प्रचलित है।
२. जिनबिम्ब का प्रक्षाल शुद्ध वस्त्र पहनकर मात्र शुद्ध जल से किया जाये।
३. प्रक्षाल मात्र पुरुषों द्वारा ही किया जाये। महिलायें जिनबिम्ब को स्पर्श न करें।
४. जिनबिम्ब का प्रक्षाल प्रतिदिन एक बार हो जाने के पश्चात् बार-बार न करें।

लघु अभिषेक पाठ

मैं परम पूज्य जिनेन्द्र प्रभु को भाव से वन्दन करूँ।
मन-वचन-काय त्रियोगपूर्वक शीष चरणों में धरूँ।।
सर्वज्ञ केवलज्ञानधारी की सुछवि उर में धरूँ।
निर्ग्रन्थ पावन वीतराग महान की जय उच्चरूँ।।
उज्वल दिगम्बर वेश दर्शन कर हृदय आनन्द भरूँ।
अति विनय पूर्वक नमन करके सफल यह जीवन करूँ।।
मैं शुद्ध जल से कलश प्रभु के पूज्य मस्तक पर धरूँ।
जलधार देकर हर्ष से अभिषेक प्रभुजी का करूँ।।
मैं न्हवन प्रभु का भाव से कर सफल भव पातक हरूँ।
प्रभु चरण कमल पर वारकर सम्यक्त्व की संपत्ति वरूँ।।

मैंने प्रभुजी के चरण पखारे

मैंने प्रभुजी के चरण पखारे
जनम-जनम के संचित पातक तत्क्षण ही निरवारे।।१।।
वीतराग अर्हन्त देव के गूँजे जय-जयकारे।।२।।
प्रासुक जल के कलश श्री जिनप्रतिमा ऊपर ढारे।।३।।
पावन तन-मन जयज भए सब दूर भए अंधियारे।।४।।

दरबार तुम्हारा मनहर है, प्रभु दर्शन कर हर्षाये हैं।
दरबार तुम्हारे आये हैं, दरबार तुम्हारे आये हैं।।टेक।।
भक्ति करेंगे चित से तुम्हारी, तृप्त भी होगी चाह हमारी।
भाव रहें नित उत्तम ऐसे, घट के पट में लाये हैं।।दरबार.।।१।।
जिसने चिंतन किया तुम्हारा, मिला उसे संतोष सहारा।
शरणे जो भी आये हैं, निज आतम को लख पाये हैं।।दरबार.।।२।।
विनय यही है प्रभू हमारी, आतम की महके फुलवारी।
अनुगामी हो तुम पद पावन, 'वृद्धि' चरण सिर नाये हैं।।दरबार.।।३।।

आराधना पाठ

(पं. द्यानतरायजी कृत)

मैं देव नित अरहंत चाहूँ, सिद्ध का सुमिरन करौं।
मैं सूर गुरु मुनि तीन पद ये, साधुपद हिरदय धरौं।।
मैं धर्म करुणामयी चाहूँ, जहाँ हिंसा रंच ना।
मैं शास्त्र ज्ञान विराग चाहूँ, जासु में परपंच ना।।१।।
चौबीस श्री जिनदेव चाहूँ, और देव न मन बसैं।
जिन बीस क्षेत्र विदेह चाहूँ, वंदितैं पातक नसैं।।
गिरनार शिखर सम्मेद चाहूँ, चम्पापुर पावापुरी।
कैलाश श्री जिनधाम चाहूँ, भजत भाजैं भ्रम जुरी।।२।।
नव तत्त्व का सरधान चाहूँ, और तत्त्व न मन धरौं।
षट् द्रव्य गुण परजाय चाहूँ, ठीक तासों भय हरौं।।
पूजा परम जिनराज चाहूँ, और देव नहीं कदा।
तिहुँकाल की मैं जाप चाहूँ, पाप नहिं लागे कदा।।३।।
सम्यक्त्व दर्शन-ज्ञान-चारित, सदा चाहूँ भाव सों।
दशलक्षणी मैं धर्म चाहूँ, महा हरख उछाव सों।।
सोलह जु कारण दुख निवारण, सदा चाहूँ प्रीति सों।
मैं नित अठाई पर्व चाहूँ, महामंगल रीति सों।।४।।
मैं वेद चारों सदा चाहूँ, आदि अन्त निवाह सों।
पाये धरम के चार चाहूँ, अधिक चित्त उछाह सों।।
मैं दान चारों सदा चाहूँ, भुवनवशि लाहो लहूँ।
आराधना मैं चार चाहूँ, अन्त में ये ही गहूँ।।५।।
भावना बारह जु भाऊँ, भाव निरमल होत हैं।
मैं व्रत जु बारह सदा चाहूँ, त्याग भाव उद्योत हैं।।
प्रतिमा दिगम्बर सदा चाहूँ, ध्यान आसन सोहना।
वसुकर्म तैं मैं छुटा चाहूँ, शिव लहूँ जहँ मोह ना।।६।।

मैं साधुजन को संग चाहूँ, प्रीति तिनही सों करौं।
मैं पर्व के उपवास चाहूँ, और आरँभ परिहरौं।।
इस दुखद पंचमकाल माहीं, सुकुल श्रावक मैं लह्यौ।
अरु महाव्रत धरि सकौं नाहीं, निबल तन मैंने गह्यौ।।७।।
आराधना उत्तम सदा, चाहूँ सुनो जिनराय जी।
तुम कृपानाथ अनाथ 'द्यानत' दया करना न्याय जी।।
वसुकर्म नाश विकास, ज्ञान प्रकाश मुझको दीजिये।
करि सुगति गमन समाधिमरन, सुभक्ति चरनन दीजिये।।८।।

श्री अरहंत सदा मंगलमय...

श्री अरहन्त सदा मंगलमय, मुक्तिमार्ग का करें प्रकाश।
मंगलमय श्री सिद्धप्रभु जो, निजस्वरूप में करें विलास।।
शुद्धातम के मंगल साधक, साधु पुरुष की सदा शरण हो।
धन्य घड़ी वह धन्य दिवस, जब मंगलमय मंगलाचरण हो।।१।।
मंगलमय चैतन्यस्वरों में परिणति की मंगलमय लय हो।
पुण्य-पाप की दुःखमय ज्वाला, निज आश्रय से त्वरित विलय हो।।
देव-शास्त्र-गुरु को वंदन कर, मुक्तिवधू का त्वरित वरण हो।
धन्य घड़ी वह धन्य दिवस, जब मंगलमय मंगलाचरण हो।।२।।
मंगलमय पाँचों कल्याणक, मंगलमय जिनका जीवन है।
मंगलमय वाणी सुखकारी शाश्वत सुख की भव्य सदन है।।
मंगलमय सत्धर्मतीर्थ कर्ता की मुझको सदा शरण हो।
धन्य घड़ी वह धन्य दिवस, जब मंगलमय मंगलाचरण हो।।३।।
सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चरणमय मुक्तिमार्ग मंगलदायक है।
सर्व पापमल का क्षय करके, शाश्वत सुख का उत्पादक है।।
मंगल गुण-पर्यायमयी चैतन्यराज की सदा शरण हो।
धन्य घड़ी वह धन्य दिवस, जब मंगलमय मंगलाचरण हो।।४।।

****

विनय-पाठ

सफल जन्म मेरा हुआ, प्रभु दर्शन से आज।
भव समुद्र नहिं दीखता, पूर्ण हुए सब काज।।१।।
दुर्निवार सब कर्म अरु, मोहादिक परिणाम।
स्वयं दूर मुझसे हुए, देखत तुम्हें ललाम।।२।।
संवर कर्मों का हुआ, शान्त हुए गृह जाल।
हुआ सुखी सम्पन्न मैं, नहिं आये मम काल।।३।।
भव कारण मिथ्यात्व का, नाशक ज्ञान सुभानु।
उदित हुआ मुझमें प्रभो, दीखे आप समान।।४।।
मेरा आत्मस्वरूप जो, ज्ञान सुखों की खान।
आज हुआ प्रत्यक्ष सम, दर्शन से भगवान।।५।।
दीन भावना मिट गई, चिन्ता मिटी अशेष।
निज प्रभुता पाई प्रभो, रहा न दुख का लेश।।६।।
शरण रहा था खोजता, इस संसार मंझार।
निज आतम मुझको शरण, तुमसे सीखा आज।।७।।
निज स्वरूप में मगन हो, पाऊँ शिव अभिराम।
इसी हेतु मैं आपको, करता कोटि प्रणाम।।८।।
मैं वन्दौं जिनराज को, धर उर समता भाव।
तन-धन-जन-जगजाल से, धरि विरागता भाव।।९।।
यही भावना है प्रभो, मेरी परिणति माहिं।
राग-द्वेष की कल्पना, किंचित् उपजै नाहिं।।१०।।

****

पूजा पीठिका

ॐ जय जय जय। नमोऽस्तु नमोऽस्तु नमोऽस्तु।
णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं।।

ॐ ह्रीं अनादिमूलमन्त्रेभ्यो नमः पुष्पांञ्जलिं क्षिपामि।

चत्तारि मंगलं ह्न अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णतो धम्मो मंगलं। चत्तारि लोगुत्तमा ह्न अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो। चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं, सरणं पव्वज्जामि।

ॐ नमोऽर्हते स्वाहा, पुष्पांजलिं क्षिपामि।

मंगल विधान

अपवित्रः पवित्रो वा सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा।
ध्यायेत्पञ्च-नमस्कारं सर्वपापैः प्रमुच्यते।।१।।

अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्परमात्मानं स बाह्याभ्यन्तरे शुचिः।।२।।

अपराजित-मन्त्रोऽयं सर्व-विघ्न-विनाशनः।
मङ्गलेषु च सर्वेषु प्रथमं मङ्गलं मतः।।३।।

एसो पंच णमोयारो सव्व पावप्पणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं होई मंगलं।।४।।

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मवाचकं परमेष्ठिनः।
सिद्धचक्रस्य सद्वीजं सर्वतः प्रणमाम्यहम्।।५।।

कर्माष्टक-विनिर्मुक्तं मोक्ष-लक्ष्मी निकेतनम्।
सम्यक्त्वादि-गुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम्।।६।।

विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति शाकिनी-भूत-पन्नगाः।
विषं निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे।।७।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

जिनसहस्रनाम अर्घ्य

उदक-चन्दन-तन्दुलपुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः।
धवल-मङ्गल-गान-रवाकुले जिन-गृहे जिननाथमहं यजे।।

ॐ ह्रीं श्री भगवज्जिनसहस्रनामेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूजा प्रतिज्ञा पाठ

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवन्द्य जगत्त्रयेशं,
स्याद्वाद-नायकमनन्त-चतुष्टयार्हम्।
श्रीमूलसंघ-सुदृशां सुकृतैकहेतु
जैनेन्द्र-यज्ञ-विधिरेष मयाऽभ्यधायि।।१।।

स्वस्ति त्रिलोक-गुरवे जिन-पुङ्गवाय,
स्वस्ति स्वभाव-महिमोदय-सुस्थिताय।
स्वस्ति प्रकाश-सहजोर्ज्जि-तदृङ्मयाय,
स्वस्ति प्रसन्न-ललिताद्भुत-वैभवाय।।२।।

स्वस्त्युच्छलद्विमल-बोधसुधाप्लवाय,
स्वस्ति स्वभाव-परभाव-विभासकाय।
स्वस्ति त्रिलोकविततैक-चिदुद्गमाय,
स्वस्ति त्रिकाल-सकलायत-विस्तृताय।।३।।

द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपं,
भावस्य शुद्धिमधिकामधिगन्तुकामः।

आलम्बनानि विविधान्यवलम्ब्य वल्गन्,
भूतार्थ-यज्ञ-पुरुषस्य करोमि यज्ञम् ।।४।।
अर्हन् पुराणपुरुषोत्तम पावनानि,
वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव।
अस्मिञ्ज्वलद्विमल-केवल-बोधवह्नौ,
पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि।।५।।

ॐ यज्ञविधिप्रतिज्ञायै जिनप्रतिमाग्रे पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि।

स्वस्ति मंगलपाठ

श्रीवृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअजितः।
श्रीसम्भवः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअभिनन्दनः।
श्रीसुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीपद्मप्रभः।
श्रीसुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीचन्द्रप्रभः।
श्रीपुष्पदन्तः स्वस्ति स्वास्तिश्री शीतलः।
श्रीश्रेयांसः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवासुपूज्यः।
श्रीविमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअनन्तः।
श्रीधर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीशान्तिः।
श्रीकुन्थुः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीअरनाथः।
श्रीमल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीमुनिसुव्रतः।
श्रीनमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीनेमिनाथः।
श्रीपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्रीवर्द्धमानः।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

परमर्षि स्वस्ति मंगलपाठ

(प्रत्येक श्लोक के बाद पुष्प क्षेपण करें)

नित्याप्रकम्पाद्भुत-केवलौघाः स्फुरन्मनःपर्यय-शुद्धबोधाः।
दिव्यावधिज्ञान-बलप्रबोधाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।१।।

कोष्ठस्थ-धान्योपममेकबीजं संभिन्न-संश्रोतृ-पदानुसारि।
चतुर्विधं बुद्धिबलं दधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।२।।
संस्पर्शनं संश्रवणं च दूरादास्वादन-घ्राण-विलोकनानि।
दिव्यान्मतिज्ञान-बलाद्वहन्तः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।३।।
प्रज्ञाप्रधानाः श्रमणाः समृद्धाः प्रत्येकबुद्धा दशसर्वपूर्वैः।
प्रवादिनोऽष्टाङ्गनिमित्तविज्ञाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।४।।
जङ्घावलि-श्रेणि-फलाम्बु-तन्तुप्रसूनबीजांकुरचारणाह्वाः।
नभोऽङ्गणस्वैर-विहारिणश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।५।।
अणिम्निदक्षाः कुशलामहिम्नि लघिम्निशक्ताः कृतिनो गरिम्णि।
मनो-वपुर्वाग्बलिनश्च नित्यं स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।६।।
सकामरूपित्व-वशित्वमैश्यं प्राकाम्यमन्तर्द्धिमथाप्तिमाप्ताः।
तथाऽप्रतीघातगुणप्रधानाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।७।।
दीप्तं च तप्तं च तथा महोग्रं घोरं तपो घोरपराक्रमस्थाः।
ब्रह्मापरं घोर गुणाश्चरन्तः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।८।।
आमर्ष-सर्वौषधयस्तथाशीर्विषं-विषा दृष्टिविषं विषाश्च।
सखिल्ल-विड्जल्लमलौषधीशाः स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।९।।
क्षीरं स्रवन्तोऽत्र घृतं स्रवन्तो मधुस्रवन्तोऽप्यमृतं स्रवन्तः।
अक्षीणसंवास-महानसाश्च स्वस्ति क्रियासुः परमर्षयो नः।।१०।।

(इति परमर्षिस्वस्तिमङ्गलविधानं पुष्पांजलिं क्षिपेत्)

श्री देव-शास्त्र-गुरु पूजन

(दोहा)

देव-शास्त्र-गुरुवर अहो, मम स्वरूप दर्शाय।
किया परम उपकार मैं, नमन करूँ हर्षाय।।
जब मैं आता आप ढिंग, निज स्मरण सु आय।
निज प्रभुता मुझमें प्रभो, प्रत्यक्ष देय दिखाय।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुसमूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुसमूह! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(वीर छन्द)

जब से स्व-सन्मुख दृष्टि हुई, अविनाशी ज्ञायक रूप लखा।
शाश्वत अस्तित्व स्वयं का लखकर जन्म-मरणभय दूर हुआ।।
श्री देव-शास्त्र-गुरुवर सदैव, मम परिणति में आदर्श रहो।
ज्ञायक में ही स्थिरता हो, निज भाव सदा मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

निज परमतत्त्व जब से देखा, अद्भुत शीतलता पाई है।
आकुलतामय संतप्त परिणति, सहज नहीं उपजाई है।।
श्री देव-शास्त्र-गुरुवर सदैव, मम परिणति में आदर्श रहो।
ज्ञायक में ही स्थिरता हो, निज भाव सदा मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

निज अक्षयप्रभु के दर्शन से ही, अक्षयसुख विकसाया है।
क्षत् भावों में एकत्वपने का, सर्व विमोह पलाया है।।
श्री देव-शास्त्र-गुरुवर सदैव, मम परिणति में आदर्श रहो।
ज्ञायक में ही स्थिरता हो, निज भाव सदा मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम परम ज्ञायक प्रभुवर, जब से दृष्टि में आया है।
विभु ब्रह्मचर्य रस प्रकट हुआ, दुर्दान्त काम विनशाया है।।
श्री देव-शास्त्र-गुरुवर सदैव, मम परिणति में आदर्श रहो।
ज्ञायक में ही स्थिरता हो, निज भाव सदा मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

हुआ निमग्न तृप्ति सागर में, तृष्णा ज्वाल बुझाई है।
क्षुधा आदि सब दोष नशें, वह सहज तृप्ति उपजाई है।।
श्री देव-शास्त्र-गुरुवर सदैव, मम परिणति में आदर्श रहो।
ज्ञायक में ही स्थिरता हो, निज भाव सदा मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान भानु का उदय हुआ, आलोक सहज ही छाया है।
चिरमोह महातम हे स्वामी, क्षणभर में सहज विलाया है।।
श्री देव-शास्त्र-गुरुवर सदैव, मम परिणति में आदर्श रहो।
ज्ञायक में ही स्थिरता हो, निज भाव सदा मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

द्रव्य-भाव-नोकर्म शून्य, चैतन्य प्रभु जब से देखा।
शुद्ध परिणति प्रकट हुई, मिटती परभावों की रेखा।।
श्री देव-शास्त्र-गुरुवर सदैव, मम परिणति में आदर्श रहो।
ज्ञायक में ही स्थिरता हो, निज भाव सदा मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अहो पूर्ण निज वैभव देखा, नहीं कामना शेष रही।
निर्वाञ्छक हो गया सहज मैं, निज में ही अब मुक्ति दिखी।।
श्री देव-शास्त्र-गुरुवर सदैव, मम परिणति में आदर्श रहो।
ज्ञायक में ही स्थिरता हो, निज भाव सदा मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

निज से उत्तम दिखे न कुछ भी, पाई निज अनर्घ्य माया।
निज में ही अब हुआ समर्पण, ज्ञानानन्द प्रकट पाया।।
श्री देव-शास्त्र-गुरुवर सदैव, मम परिणति में आदर्श रहो।
ज्ञायक में ही स्थिरता हो, निज भाव सदा मंगलमय हो।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

ज्ञानमात्र परमात्मा, परम प्रसिद्ध कराय।
धन्य आज मैं हो गया, निज स्वरूप को पाय।।

(हरिगीत)

चैतन्य में ही मग्न हो, चैतन्य दरशाते अहो।
निर्दोष श्री सर्वज्ञ प्रभुवर, जगत्साक्षी हो विभो।।
सच्चे प्रणेता धर्म के, शिवमार्ग प्रकटाया प्रभो।
कल्याण वांछक भविजनों, के आप ही आदर्श हो।।
शिवमार्ग पाया आप से, भवि पा रहे अरु पायेंगे।
स्वाराधना से आप सम ही, हुए हो रहे होयेंगे।।
तव दिव्यध्वनि में दिव्य-आत्मिक, भाव उद्घोषित हुए।
गणधर गुरु आम्नाय में, शुभ शास्त्र तब निर्मित हुए।।
निर्ग्रन्थ गुरु के ग्रन्थ ये, नित प्रेरणायें दे रहे।
निजभाव अरु परभाव का, शुभ भेदज्ञान जगा रहे।।
इस दुषम भीषण काल में, जिनदेव का जब हो विरह।
तब मात सम उपकार करते, शास्त्र ही आधार हैं।।
जग से उदास रहें स्वयं में, वास जो नित ही करें।
स्वानुभव मय सहज जीवन, मूल गुण परिपूर्ण हैं।।
नाम लेते ही जिन्हों का, हर्ष मय रोमांच हो।
संसार-भोगों की व्यथा, मिटती परम आनन्द हो।।
परभाव सब निस्सार दिखते, मात्र दर्शन ही किए।
निजभाव की महिमा जगे, जिनके सहज उपदेश से।।
उन देव-शास्त्र-गुरु प्रति, आता सहज बहुमान है।
आराध्य यद्यपि एक, ज्ञायकभाव निश्चय ज्ञान है।।
प्रभु! अर्चना के काल में भी, भावना ये ही रहे।
धन्य होगी वह घड़ी, जब परिणति निज में रहे।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा

(दोहा)

अहो कहाँ तक मैं कहूँ, महिमा अपरम्पार।
निज महिमा में मगन हो, पाऊँ पद अविकार।।

(इति पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

समुच्चय पूजा

(दोहा)

देव-शास्त्र-गुरु नमन करि, बीस तीर्थंकर ध्याय।
सिद्ध शुद्ध राजत सदा, नमूँ चित्त हुलसाय।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुसमूह! श्री विद्यमानविंशतितीर्थंकर समूह! श्री अनन्तानन्त-सिद्धपरमेष्ठी समूह! अत्र अवतर अवतर संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

अष्टक

अनादिकाल से जग में स्वामिन, जल से शुचिता को माना।
शुद्ध निजातम सम्यक् रत्नत्रय, निधि को नहीं पहचाना।।
अब निर्मल रत्नत्रय जल ले, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः श्री अनन्तानन्त-सिद्धपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भव-आताप मिटावन की, निज में ही क्षमता समता है।
अनजाने में अबतक मैंने, पर में की झूठी ममता है।।
चन्दन-सम शीतलता पाने, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः श्री अनन्तानन्तसिद्ध-परमेष्ठिभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय पद बिन फिरा, जगत की लख चौरासी योनी में।
अष्ट कर्म के नाश करन को, अक्षत तुम ढिंग लाया मैं।।
अक्षयनिधि निज की पाने अब, श्री देवशास्त्रगुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः श्री अनन्तानन्त-सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

पुष्प सुगन्धी से आतम ने, शील स्वभाव नशाया है।
मन्मथ बाणों से विंध करके, चहुँगति दुःख उपजाया है।।

स्थिरता निज में पाने को, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः श्री अनन्तान्तसिद्ध-परमेष्ठिभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

षट्रस मिश्रित भोजन से, ये भूख न मेरी शांत हुई।
आतम रस अनुपम चखने से, इन्द्रिय मन इच्छा शमन हुई।।
सर्वथा भूख के मेटन को, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरु भ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः श्री अनन्तानन्त-सिद्धपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़दीप विनश्वर को अबतक, समझा था मैंने उजियारा।
निज गुण दरशायक ज्ञानदीप से, मिटा मोह का अँधियारा।।
ये दीप समर्पण करके मैं, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः श्री अनन्तानन्त-सिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ये धूप अनल में खेने से, कर्मों को नहीं जलायेगी।
निज में निज की शक्ति ज्वाला, जो राग-द्वेष नशायेगी।।
उस शक्ति दहन प्रकटाने को, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः श्री अनन्तानन्त-सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

पिस्ता बदाम श्रीफल लवंग, चरणन तुम ढिंग मैं ले आया।
आतमरस भीने निज गुण फल, मम मन अब उनमें ललचाया।
अब मोक्ष महाफल पाने को, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः श्री अनन्तानन्त-सिद्धपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अष्टम वसुधा पाने को, कर में ये आठों द्रव्य लिये।
सहज शुद्ध स्वाभाविकता से, निज में निज गुण प्रकट किये।।
ये अर्घ्य समर्पण करके मैं, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ।
विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु के गुण गाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः श्री अनन्तानन्त-सिद्धपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

देव शास्त्र गुरु बीस तीर्थंकर, सिद्ध प्रभु भगवान।
अब वरणूँ जयमालिका, करूँ स्तवन गुणगान।।

नशे घातिया कर्म अरहन्त देवा, करें सुर-असुर-नर-मुनि नित्य सेवा।
दरशज्ञान सुखबल अनंत के स्वामी, छियालिस गुणयुत महाईशनामी।।
तेरी दिव्यवाणी सदा भव्य मानी, महामोह विध्वंसिनी मोक्ष-दानी।
अनेकांतमय द्वादशांगी बखानी, नमो लोक माता श्री जैनवाणी।।
विरागी अचारज उवज्झाय साधू, दरश-ज्ञान भण्डार समता अराधू।
नगन वेशधारी सु एका विहारी, निजानन्द मंडित मुकति पथ प्रचारी।।
विदेह क्षेत्र में तीर्थंकर बीस राजें, विहरमान वंदूँ सभी पाप भाजें।
नमूँ सिद्ध निर्भय निरामय सुधामी, अनाकुल समाधान सहजाभिरामी।।

ॐ ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरुभ्यो विद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यः अनन्तानन्तसिद्धपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालामहार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(छन्द)

देव-शास्त्र-गुरु बीस तीर्थंकर, सिद्ध हृदय बिच धर ले रे।
पूजन ध्यान गान गुण करके, भवसागर जिय तर ले रे।।

पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

पंच-परमेष्ठी पूजन

अरहन्त सिद्ध आचार्य नमन, हे उपाध्याय हे साधु नमन।
जय पंच परम परमेष्ठी जय, भवसागर तारणहार नमन।।
मन-वच-काया पूर्वक करता हूँ, शुद्ध हृदय से आह्वानन।
मम हृदय विराजो तिष्ठ तिष्ठ, सन्निकट होहु मेरे भगवन।।
निज आत्मतत्त्व की प्राप्ति हेतु, ले अष्ट द्रव्य करता पूजन।
तुम चरणों की पूजन से प्रभु, निज सिद्ध रूप का हो दर्शन।।

ॐ ह्रीं श्री अरहंत-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर-अवतर संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्री अरहंत-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ, तिष्ठ, ठः ठः।

ॐ ह्रीं श्री अरहंत-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट्।

मैं तो अनादि से रोगी हूँ, उपचार कराने आया हूँ।
तुम सम उज्ज्वलता पाने को, उज्ज्वल जल भरकर लाया हूँ।।
मैं जन्म-जरा-मृतु नाश करूँ, ऐसी दो शक्ति हृदय स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुःख मेटो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

संसारताप में जल-जल कर, मैंने अगणित दुःख पाये हैं।
निज शान्त स्वभाव नहीं भाया, पर के ही गीत सुहाये हैं।।
शीतल चंदन है भेंट तुम्हें, संसार-ताप नाशो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुःख मेटो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

दुःखमय अथाह भवसागर में, मेरी यह नौका भटक रही।
शुभ-अशुभ भाव की भँवरों में चैतन्यशक्ति निज अटक रही।।
तन्दुल है धवल तुम्हें अर्पित, अक्षयपद प्राप्त करूँ स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुःख मेटो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं काम-व्यथा से घायल हूँ, सुख की न मिली किंचित् छाया।
चरणों में पुष्प चढ़ाता हूँ, तुम को पाकर मन हर्षाया।।

मैं काम-भाव विध्वंस करूँ, ऐसा दो शील हृदय स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुःख मेटो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

मैं क्षुधा-रोग से व्याकुल हूँ, चारों गति में भरमाया हूँ।
जग के सारे पदार्थ पाकर भी, तृप्त नहीं हो पाया हूँ।।
नैवेद्य समर्पित करता हूँ, यह क्षुधा-रोग मेटो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुःख मेटो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोहान्ध महा-अज्ञानी मैं, निज को पर का कर्त्ता माना।
मिथ्यातम के कारण मैंने, निज आत्मस्वरूप न पहिचाना।।
मैं दीप समर्पण करता हूँ, मोहान्धकार क्षय हो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुःख मेटो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्मों की ज्वाला धधक रही, संसार बढ़ रहा है प्रतिपल।
संवर से आस्रव को रोकूँ, निर्जरा सुरभि महके पल-पल।।
यह धूप चढ़ाकर अब आठों कर्मों का हनन करूँ स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुःख मेटो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अष्टकर्मविनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

निज आत्मतत्त्व का मनन करूँ, चिंतवन करूँ निज चेतन का।
दो श्रद्धा-ज्ञान-चरित्र श्रेष्ठ, सच्चा पथ मोक्ष निकेतन का।।
उत्तम फल चरण चढ़ाता हूँ, निर्वाण महाफल हो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुःख मेटो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल चन्दन अक्षत पुष्प दीप, नैवेद्य धूप फल लाया हूँ।
अबतक के संचित कर्मों का, मैं पुंज जलाने आया हूँ।।
यह अर्घ्य समर्पित करता हूँ, अविचल अनर्घ्य पद दो स्वामी।
हे पंच परम परमेष्ठी प्रभु, भव-दुःख मेटो अन्तर्यामी।।

ॐ ह्रीं श्री पंचपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(पद्धरि)

जय वीतराग सर्वज्ञ प्रभो, निज ध्यान लीन गुणमय अपार।
अष्टादश दोष रहित जिनवर, अरहन्त देव को नमस्कार ।।१।।
अविकल अविकारी अविनाशी, निजरूप निरंजन निराकार।
जय अजर अमर हे मुक्तिकंत, भगवंत सिद्ध को नमस्कार ।।२।।
छत्तीस सुगुण से तुम मण्डित, निश्चय रत्नत्रय हृदय धार।
हे मुक्तिवधू के अनुरागी, आचार्य सुगुरु को नमस्कार ।।३।।
एकादश अंग पूर्व चौदह के, पाठी गुण पच्चीस धार।
बाह्यान्तर मुनि मुद्रा महान, श्री उपाध्याय को नमस्कार ।।४।।
व्रत समिति गुप्ति चारित्र धर्म, वैराग्य भावना हृदय धार।
हे द्रव्य-भाव संयममय मुनिवर, सर्व साधु को नमस्कार ।।५।।
बहु पुण्यसंयोग मिला नरतन, जिनश्रुत जिनदेव चरण दर्शन।
हो सम्यग्दर्शन प्राप्त मुझे, तो सफल बने मानव जीवन ।।६।।
निज-पर का भेद जानकर मैं, निज को ही निज में लीन करूँ।
अब भेदज्ञान के द्वारा मैं, निज आत्म स्वयं स्वाधीन करूँ ।।७।।
निज में रत्नत्रय धारण कर, निज परिणति को ही पहचानूँ।
परपरिणति से हो विमुख सदा, निज ज्ञानतत्त्व को ही जानूँ ।।८।।
जब ज्ञानज्ञेयज्ञाता विकल्प तज, शुक्लध्यान मैं ध्याऊँगा।
तब चार घातिया क्षय करके, अरहन्त महापद पाऊँगा ।।९।।
है निश्चित सिद्ध स्वपद मेरा, हे प्रभु! कब इसको पाऊँगा।
सम्यक् पूजा फल पाने को, अब निजस्वभाव में आऊँगा ।।१०।।
अपने स्वरूप की प्राप्ति हेतु, हे प्रभु! मैंने की है पूजन।
तबतक चरणों में ध्यान रहे, जबतक न प्राप्त हो मुक्ति सदन ।।११।।

ॐ ह्रीं श्री अरहन्त-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधुपंचपरमेष्ठिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालामहार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हे मंगल रूप अमंगल हर, मंगलमय मंगल गान करूँ।
मंगल में प्रथम श्रेष्ठ मंगल, नवकार मंत्र का ध्यान करूँ ।।१२।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

सिद्ध पूजन

(हरिगीतिका)

निज वज्र पौरुष से प्रभो! अन्तर-कलुष सब हर लिये।
प्रांजल प्रदेश-प्रदेश में, पीयूष निर्झर झर गये।।
सर्वोच्च हो अतएव बसते, लोक के उस शिखर रे!
तुम को हृदय में स्थाप, मणि-मुक्ता चरण को चूमते।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्।

(वीरछन्द)

शुद्धातम-सा परिशुद्ध प्रभो! यह निर्मल नीर चरण लाया।
मैं पीड़ित निर्मम ममता से, अब इसका अंतिम दिन आया।।
तुम तो प्रभु अंतर्लीन हुए, तोड़े कृत्रिम सम्बन्ध सभी।
मेरे जीवन-धन तुमको पा, मेरी पहली अनुभूति जगी।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलम्.....

मेरे चैतन्य-सदन में प्रभु! धू-धू क्रोधानल जलता है।
अज्ञान-अमा के अंचल में, जो छिपकर पल-पल पलता है।।
प्रभु! जहाँ क्रोध का स्पर्श नहीं, तुम बसो मलय की महकों में।
मैं इसीलिए मलयज लाया, क्रोधासुर भागे पलकों में।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने संसारतापविनाशनाय चन्दनम्...

अधिपति प्रभु! धवल भवन के हो, और धवल तुम्हारा अंतस्तल।
अंतर के क्षत सब विक्षत कर, उभरा स्वर्णिम सौंदर्य विमल।।
मैं महामान से क्षत-विक्षत, हूँ खंड-खंड लोकांत-विभो!
मेरे मिट्टी के जीवन में, प्रभु! अक्षत की गरिमा भर दो।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अक्षयपदप्राप्तये अक्षतम्..........

चैतन्य-सुरभि की पुष्पवाटिका, में विहार नित करते हो।
माया की छाया रंच नहीं, हर बिन्दु सुधा की पीते हो।।

निष्काम प्रवाहित हर हिलोर, क्या काम काम की ज्वाला से।
प्रत्येक प्रदेश प्रमत्त हुआ, पाताल-मधु-मधुशाला से।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने कामबाणविध्वंसनाय पुष्पम्..........
यह क्षुधा देह का धर्म प्रभो! इसकी पहिचान कभी न हुई।
हर पल तन में ही तन्मयता, क्षुत्-तृष्णा अविरल पीन हुई।।
आक्रमण क्षुधा का सह्य नहीं, अतएव लिये हैं व्यंजन ये।
सत्वर[3] तृष्णा को तोड़ प्रभो! लो, हम आनंद-भवन पहुँचे।।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यम्.......
विज्ञाननगर के वैज्ञानिक, तेरी प्रयोगशाला विस्मय।
कैवल्य-कला में उमड़ पड़ा, सम्पूर्ण विश्व का ही वैभव।।
पर तुम तो उससे अति विरक्त, नित निरखा करते निज निधियाँ।
अतएव प्रतीक प्रदीप लिये, मैं मना रहा दीपावलियाँ।।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोहान्धकारविनाशनाय दीपम्........
तेरा प्रासाद महकता प्रभु! अति दिव्य दशांगी धूपों से।
अतएव निकट नहिं आ पाते, कर्मों के कीट-पतंग अरे!
यह धूप सुरभि-निर्झरणी, मेरा पर्यावरण विशुद्ध हुआ।
छक गया योग-निद्रा में प्रभु! सर्वांग अमी है बरस रहा।।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अष्टकर्मदहनाय धूपम्...........
निज लीन परम स्वाधीन बसो, प्रभु! तुम सुरम्य शिव-नगरी में।
प्रतिपल बरसात गगन से हो, रसपान करो शिव-गगरी में।।
ये सुरतरुओं के फल साक्षी, यह भव-संतति का अंतिम क्षण।
प्रभु! मेरे मंडप में आओ, है आज मुक्ति का उद्घाटन।।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने मोक्षफलप्राप्तये फलम् ....
तेरे विकीर्ण गुण सारे प्रभु! मुक्ता-मोदक से सघन हुए।
अतएव रसास्वादन करते, रे! घनीभूत अनुभूति लिये।।
हे नाथ! मुझे भी अब प्रतिक्षण, निज अंतर-वैभव की मस्ती।
है आज अर्घ्य की सार्थकता, तेरी अस्ति मेरी बस्ती।।
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

चिन्मय हो, चिद्रूप प्रभु! ज्ञाता मात्र चिदेश।
शोध-प्रबंध चिदात्म के, स्रष्टा तुम ही एक।।

(मानव)

जगाया तुमने कितनी बार! हुआ नहिं चिर-निद्रा का अन्त।
मदिर[2] सम्मोहन ममता का, अरे! बेचेत पड़ा मैं सन्त।।
घोर तम छाया चारों ओर, नहीं निज सत्ता की पहिचान।
निखिल जड़ता दिखती सप्राण, चेतना अपने से अनजान।।
ज्ञान की प्रतिपल उठे तरंग, झाँकता उसमें आतमराम।
अरे! आबाल सभी गोपाल, सुलभ सबको चिन्मय अभिराम।।
किन्तु पर सत्ता में प्रतिबद्ध, कीर-मर्कट-सी गहल अनन्त।
अरे! पाकर खोया भगवान, न देखा मैंने कभी बसंत।।
नहीं देखा निज शाश्वत देव, रही क्षणिका पर्यय की प्रीति।
क्षम्य कैसे हों ये अपराध? प्रकृति की यही सनातन रीति।।
अतः जड़-कर्मों की जंजीर, पड़ी मेरे सर्वात्म प्रदेश।
और फिर नरक-निगोदों बीच, हुए सब निर्णय हे सर्वेश!
घटा घन विपदा की बरसी, कि टूटी शंपा[4] मेरे शीश।
नरक में पारद-सा तन टूक, निगोदों मध्य अनंती मीच।।
करें क्या स्वर्ग सुखों की बात, वहाँ की कैसी अद्भुत टेव!
अंत में बिलखे छह-छह मास, कहें हम कैसे उसको देव!
दशा चारों गति की दयनीय, दया का किन्तु न यहाँ विधान।
शरण जो अपराधी को दे, अरे! अपराधी वह भगवान।।
''अरे! मिट्टी की काया बीच, महकता चिन्मय भिन्न अतीव।
शुभाशुभ की जड़ता तो दूर, पराया ज्ञान वहाँ परकीय।।
अहो 'चित्' परम अकर्त्तानाथ, अरे! वह निष्क्रिय तत्त्व विशेष।
अपरिमित अक्षय वैभव-कोष'', सभी ज्ञानी का यह परिवेश।।

बताये मर्म अरे ! यह कौन, तुम्हारे बिन वैदेही नाथ?
विधाता शिव-पथ के तुम एक, पड़ा मैं तस्कर दल के हाथ।।
किया तुमने जीवन का शिल्प, खिरे सब मोह कर्म और गात।
तुम्हारा पौरुष झंझावात, झड़ गये पीले-पीले पात।।

नहीं प्रज्ञा-आवर्त्तन शेष, हुए सब आवागमन अशेष।
अरे प्रभु! चिर-समाधि में लीन, एक में बसते आप अनेक।।
तुम्हारा चित्-प्रकाश कैवल्य, कहें तुम ज्ञायक लोकालोक।
अहो! बस ज्ञान जहाँ हो लीन, वहीं है ज्ञेय, वहीं है भोग।।

योग-चांचल्य हुआ अवरुद्ध, सकल चैतन्य निकल निष्कंप।
अरे ! ओ योग रहित योगीश ! रहो यों काल अनंतानंत।।
जीव कारण-परमात्म त्रिकाल, वही है अंतस्तत्त्व अखंड।
तुम्हें प्रभु! रहा वही अवलंब, कार्य परमात्म हुए निर्बन्ध।।

अहो! निखरा कांचन चैतन्य, खिले सब आठों कमल पुनीत।
अतीन्द्रिय सौख्य चिरंतन भोग, करो तुम धवल महल के बीच।।
उछलता मेरा पौरुष आज, त्वरित टूटेंगे बंधन नाथ!
अरे ! तेरी सुख-शय्या बीच, होगा मेरा प्रथम प्रभात।।

प्रभो! बीती विभावरी आज, हुआ अरुणोदय शीतल छाँव।
झूमते शांति-लता के कुंज, चलें प्रभु! अब अपने उस गाँव।।

ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

चिर-विलास चिद्ब्रह्म में, चिर-निमग्न भगवंत।
द्रव्य-भाव स्तुति से प्रभो !, वंदन तुम्हें अनंत।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

****

श्री आदिनाथ जिनपूजन

(दोहा)

नमूँ जिनेश्वर देव मैं, परम सुखी भगवान।
आराधूँ शुद्धात्मा, पाऊँ पद निर्वाण।।
हे धर्म-पिता सर्वज्ञ जिनेश्वर, चेतन मूर्ति आदि जिनम्।
मेरा ज्ञायक रूप दिखाने, दर्पण सम प्रभु आदि जिनम्।।
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरण पा सहज सुधारस आप पिया।
मुक्तिमार्ग दर्शाकर स्वामी, भव्यों प्रति उपकार किया।।
साधक शिवपद का अहो, आया प्रभु के द्वार।
सहज निजातम भावना, जिन पूजा का सार।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट् इत्याह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

चेतनमय है सुख सरोवर, श्रद्धा पुष्प सुशोभित हैं।
आनन्द मोती चुगते हंस सुकेलि करैं सुख पावैं हैं।।
स्वानुभूति के कलश कनकमय, भरि-भरि प्रभु को पूजें हैं।
ऐसे धर्मी निर्मल जल से, मोह मैल को धोते हैं।।
अथाह सरवर आत्मा, आनन्द रस छलकाय।
शान्त आत्म रसपान से, जन्म-मरण मिट जाय।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

मग्न प्रभु चेतन सागर में शान्ति जल से न्हाय रहे।
मोह मैल को दूर हटाकर, भवाताप से रहित भये।।
तप्त हो रहा मोह ताप से सम्यक् रस में स्नान करूँ।
समरस चन्दन से पूजूँ अरु तेरा पथ अनुसरण करूँ।।
चेतनरस को घोलकर, चारित्र सुगंध मिलाय।
भाव सहित पूजा करूँ, शीतलता प्रगटाय।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्ष अगोचर प्रभो आप, पर अक्षत से पूजा करता।
अक्षातीत ज्ञान प्रगटा कर, शाश्वत अक्षय पद भजता।।

अन्तर्मुख परिणति के द्वारा, प्रभुवर का सम्मान करूँ।
पूजूँ जिनवर परमभाव से, निज सुख का आस्वाद करूँ।।
अक्षय सुख का स्वाद लूँ, इन्द्रिय मन के पार।
सिद्ध प्रभु सुख मगन ज्यों, तिष्ठे मोक्ष मंझार।।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।
निष्काम अतीन्द्रिय देव अहो ! पूजूँ मैं श्रद्धा सुमन चढ़ा।
कृतकृत्य हुआ निष्काम हुआ, तब मुक्तिमार्ग में कदम बढ़ा।।
गुण अनंतमय पुष्प सुगंधित, विकसित हैं निज आतम में।
कभी नहीं मुरझावें परमानन्द पाया शुद्धातम में।।
रत्नत्रय के पुष्प शुभ, खिले आत्म उद्यान।
सहजभाव से पूजते, हर्षित हूँ भगवान।।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।
तृप्त क्षुधा से रहित जिनेश्वर चरु लेकर मैं पूज करूँ।
अनुभव रसमय नैवेद्य सम्यक्, तुम चरणों में प्राप्त करूँ।।
चाह नहीं किंचित् भी स्वामी, स्वयं स्वयं में तृप्त रहूँ।
सादि-अनंत मुक्तिपद जिनवर, आत्मध्यान से प्रकट लहूँ।।
जग का झूँठा स्वाद तो, चाख्यो बार अनन्त।
वीतराग निज स्वाद लूँ, होवे भव का अन्त।।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।
अगणित दीपों का प्रकाश भी, दूर नहीं अज्ञान करे।
आत्मज्ञान की एक किरण, ही मोह तिमिर को तुरत हरे।।
अहो ज्ञान की अद्भुत महिमा, मोही नहिं पहिचान सकें।
आत्मज्ञान का दीप जलाकर, साधक स्व-पर प्रकाश करें।।
स्वानुभूति प्रकाश में, भासे आत्मस्वरूप।
राग पवन लागे नहीं, केवलज्योति अनूप।।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।
द्वेष भाव तो नहीं रहा, रागांश मात्र अवशेष हुआ।
ध्यान-अग्नि प्रगटी ऐसी, तहाँ कर्मेन्धन सब भस्म हुआ।।
अहो ! आत्मशुद्धि अद्भुत है, धर्म सुगन्धी फैल रही।
दशलक्षण की प्राप्ति करने, प्रभु चरणों की शरण गही।।

स्व-सन्मुख हो अनुभवूँ, ज्ञानानन्द स्वभाव।
निज में ही हो लीनता, विनसैं सर्व विभाव।।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।
सम्यग्दर्शन मूल अहो! चारित्र वृक्ष पल्लवित हुआ।
स्वानुभूतिमय अमृत फल, आस्वादूँ अति ही तृप्त हुआ।।
मोक्ष महाफल भी आवेगा, निश्चय ही विश्वास अहो।
निर्विकल्प हो पूर्ण लीनता, फल पूजा का प्रभु फल हो।।
निर्वांछक आनन्दमय, चाह न रही लगार।
भेद न पूजक पूज्य का, फल पूजा का सार।।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।
सम्यक् तत्त्व स्वरूप न जाना, नहिं यथार्थतः पूज सका।
रागभाव को रहा पोषता, वीतरागता से चूका।।
काललब्धि जागी अन्तर में, भास रहा है सत्य स्वरूप।
पाऊँगा निज सम्यक् प्रभुता, भास रही निज माँहिं अनूप।।
सेवा सत्य स्वरूप की, ये ही प्रभु की सेव।
जिन सेवा व्यवहार से, निश्चय आतम देव।।
ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(सोरठा)

कलि असाढ़ द्वय जान, सर्वार्थसिद्धि विमान से।
आय बसे भगवान, मरुदेवी के गर्भ में।।
गर्भवास नहिं इष्ट, तहाँ भी प्रभु आनन्दमय।
माँ को भी नहीं कष्ट, रत्न पिटारे ज्यों रहे।।
ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णद्वितीयायां गर्भकल्याणकमंडिताय श्रीआदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि.
पृथ्वी हुई सनाथ नवमी कृष्णा चैत को।
नरकों में भी नाथ, जन्म समय साता हुई।।
इन्द्रादिक सिर टेक, कियो महोत्सव जन्म का।
मेरु पर अभिषेक, क्षीरोदधि तें प्रभु भयो।।
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

भासा जगत असार, देख निधन नीलांजना।
नवमी कृष्णा चैत्र परम दिगम्बर पद धरो।।
चिदानन्द पद सार, ध्याने को मुनि पद लिया।
परम हर्ष उर धार लौकान्तिक, धनि-धनि कहा।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां तपकल्याणकप्राप्ताय श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

प्रगट्यो केवलज्ञान, फाल्गुन कृष्ण एकादशी।
धर्मतीर्थ अम्लान, हुआ प्रवर्तित आप से।।
समझा तत्त्व स्वरूप, दिव्य देशना श्रवण कर।
पाई मुक्ति अनूप, भव्यन निज पुरुषार्थ से।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णैकादश्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

पायो अविचल थान, चौदश कृष्णा माघ दिन।
गिरि कैलाश महान, तीर्थ प्रगट जग में हुआ।।
सहज मुक्ति दातार, शुद्धातम की भावना।
वर्ते प्रभु सुखकार, मैं भी तिष्ठूँ मोक्ष में।।

ॐ ह्रीं माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं नि. स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

आदीश्वर वन्दूँ सदा, चिदानन्द छलकाय।
चरण-शरण में आपकी, मुक्ति सहज दिखाय।।

(वीरछन्द)

धन्य ध्यान में आप विराजे, देख रहे प्रभु आतमराम।
ज्ञाता-दृष्टा अहो जिनेश्वर, परमज्योतिमय आनन्दधाम।।
रत्नत्रय आभूषण साँचे, जड़ आभूषण का क्या काम?
राग-द्वेष निःशेष हुए हैं, वस्त्र-शस्त्र का लेश न नाम।।
तीन लोक के स्वयं मुकुट हो, स्वर्ण मुकुट का है क्या काम?
प्रभु त्रिलोक के नाथ कहाओ, फिर भी निज में ही विश्राम।।
भव्य निहारें अहो आपको, आप निहारें अपनी ओर।
धन्य आपकी वीतरागता, प्रभुता का भी ओर न छोर।।

आप नहीं देते कुछ भी पर, भक्त आप से ले लेते।
दर्शन कर उपदेश श्रवण कर, तत्त्वज्ञान को पा लेते।।
भेदज्ञान अरु स्वानुभूति कर, शिवपथ में लग जाते हैं।
अहो! आप सम स्वाश्रय द्वारा, निज प्रभुता प्रगटाते हैं।।
जब तक मुक्ति नहीं होती, प्रभु पुण्य सातिशय होने से।
चक्री इन्द्रादिक के वैभव, मिलें अन्न-संग के तुष से।।
पर उनकों चाहे नहिं ज्ञानी, मिलें किन्तु आसक्त न हों।
निजानन्द अमृत रस पीते, विष-फल चाहे कौन अहो?
भाते नित वैराग्य भावना, क्षण में छोड़ चले जाते।
मुनि दीक्षा ले परम तपस्वी, निज में ही रमते जाते।।
घोर परीषह उपसर्गों में मन सुमेरु नहिं कम्पित हो।
क्षण-क्षण आनंद रस वृद्धिंगत, क्षपकश्रेणि आरोहण हो।।
शुक्लध्यान बल घाति विनष्टे, अर्हत् दशा प्रगट होती।
अल्पकाल में सर्व कर्ममल-वर्जित मुक्ति सहज होती।।
परमानन्दमय दर्श आपका, मंगल उत्तम शरण ललाम।
निरावरण निर्लेप परम प्रभु, सम्यक् भावे सहज प्रणाम।।
ज्ञान माँहि स्थापन कीना, स्व-सन्मुख होकर अभिराम।
स्वयं सिद्ध सर्वज्ञ स्वभावी, प्रत्यक्ष निहारूँ आतमराम।।

(दोहा)

प्रभु नंदन मैं आपका, हूँ प्रभुता सम्पन्न।
अल्पकाल में आपके, तिष्ठूँगा आसन्न।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

दर्शन-ज्ञानस्वभावमय, सुख अनंत की खान।
जाके आश्रय प्रगटता, अविचल पद निर्वान।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपामि)

✱ ✱ ✱ ✱

श्री शान्तिनाथ पूजन

स्थापना

(गीतिका)

चक्रवर्ती पाँचवें अरु कामदेव सु बारहवें।
इन्द्रादि से पूजित हुए, तीर्थेश जिनवर सोलहवें।।
तिहुँलोक में कल्याणमय, निर्ग्रन्थ मारग आपका।
बहुमान से पूजन निमित्त, स्वरूप चिन्तें आपका।।

(सोरठा)

चरणों शीस नवाय, भक्तिभाव से पूजते।
प्रासुक द्रव्य सुहाय, उपजे परमानन्द प्रभु।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट्।

(बसन्ततिलका)

प्रभु के प्रसाद अपना ध्रुवरूप जाना,
जन्मादि दोष नाशें हो आत्मध्याना।
श्री शान्तिनाथ प्रभु की पूजा रचाऊँ,
सुख शान्ति सहज स्वामी निज माँहि पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जाना स्वरूप शीतल उद्योतमाना,
भव ताप सर्व नाशे हो आत्मध्याना।
श्री शान्तिनाथ प्रभु की पूजा रचाऊँ,
सुख शान्ति सहज स्वामी निज माँहि पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय विभव प्रभु सम निज माँहि जाना,
अक्षय स्वपद सु पाऊँ हो आत्मध्याना।

श्री शान्तिनाथ प्रभु की पूजा रचाऊँ,
सुख शान्ति सहज स्वामी निज माँहि पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम ब्रह्मरूपं निज आत्म जाना,
दुर्दान्त काम नाशे हो आत्मध्याना।
श्री शान्तिनाथ प्रभु की पूजा रचाऊँ,
सुख शान्ति सहज स्वामी निज माँहि पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

परिपूर्ण तृप्त ज्ञाता निजभाव जाना,
नाशें क्षुधादि क्षण में हो आत्मध्याना।
श्री शान्तिनाथ प्रभु की पूजा रचाऊँ,
सुख शान्ति सहज स्वामी निज माँहि पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मोह ज्ञानमय ज्ञायक रूप जाना,
कैवल्य सहज प्रगटे हो आत्मध्याना।
श्री शान्तिनाथ प्रभु की पूजा रचाऊँ,
सुख शान्ति सहज स्वामी निज माँहि पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

निष्कर्म निर्विकारी चिद्रूप जाना,
भव-हेतु कर्म नाशें हो आत्मध्याना।
श्री शान्तिनाथ प्रभु की पूजा रचाऊँ,
सुख शान्ति सहज स्वामी निज माँहि पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्बन्ध मुक्त अपना शुद्धात्म जाना,
प्रगटे सु मोक्ष सुखमय हो आत्मध्याना।

श्री शान्तिनाथ प्रभु की पूजा रचाऊँ,
सुख शान्ति सहज स्वामी निज माँहि पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अविचल अनर्घ्य प्रभुतामय रूप जाना,
विलसे अनर्घ्य आनन्द हो आत्मध्याना।
श्री शान्तिनाथ प्रभु की पूजा रचाऊँ,
सुख शान्ति सहज स्वामी निज माँहि पाऊँ।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक

(दोहा)

भादौं कृष्णा सप्तमी, तजि सर्वार्थ विमान।
ऐरा माँ के गर्भ में, आए श्री भगवान।।

ॐ ह्रीं श्रीभादवकृष्णासप्तम्यां गर्भमंगलमण्डिताय श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णा जेठ चतुर्दशी, गजपुर जन्मे ईश।
करि अभिषेक सुमेरु पर, इन्द्र झुकावें शीश।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यांजन्ममंगलमण्डिताय श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सारभूत निर्ग्रन्थ पद, जगत असार विचार।
कृष्णा जेठ चतुर्दशी, दीक्षा ली हितकार।।

ॐ ह्रीं श्रीज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां जन्ममंगलमण्डिताय श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्मध्यान में नशि गये, घातिकर्म दुखदान।
पौष शुक्ल दशमी दिना, प्रगटो केवलज्ञान।।

ॐ ह्रीं श्रीपौषशुक्लादशम्यां ज्ञानमंगलमण्डिताय श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जेठ कृष्ण चौदशि दिना, भये सिद्ध भगवान।
भाव सहित प्रभु पूजते, होवे सुख अम्लान।।

ॐ ह्रीं श्रीज्येष्ठकृष्णाचतुर्दश्यां मोक्षमंगलमण्डिताय श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(चौपाई)

जय जय शान्ति नाथ जिनराजा, गाँऊ जयमाला सुखकाजा।
जिनवर धर्म सु मंगलकारी, आनन्दकारी भवदधितारी।।

(लावनी)

प्रभु शान्तिनाथ लख शान्त स्वरूप तुम्हारा।
चित शान्त हुआ मैं जाना जाननहारा।।टेक।।
हे वीतराग सर्वज्ञ परम उपकारी,
अद्भुत महिमा मैंने प्रत्यक्ष निहारी।
जो द्रव्य और गुण पर्यय से प्रभु जानें,
वे जानें आत्मस्वरूप मोह को हानें।।
विनशें भव बन्धन हो सुख अपरम्पारा,
चित शान्त हुआ मैं जाना जाननहारा।।1।।
हे देव ! क्रोध बिन कर्म शुत्र किम मारा?
बिन राग भव्य जीवों को कैसे तारा ?
निर्ग्रन्थ अकिंचन हो त्रिलोक के स्वामी,
हो निजानन्दरस भोगी योगी नामी।।
अद्भुत, निर्मल है सहज चरित्र तुम्हारा,
चित शान्त हुआ मैं जाना जाननहारा।।2।।
सर्वार्थ सिद्धि से आ परमार्थ सु साधा,
हो कामदेव निष्काम तत्त्व आराधा।

तजि चक्र सुदर्शन, धर्मचक्र को पाया,
कल्याणमयी जिन धर्म तीर्थ प्रगटाया।।
अनुपम प्रभुता माहात्म्य विश्व से न्यारा,
चित शान्त हुआ मैं जाना जाननहारा।।3।।

गुणगान करूँ हे नाथ आपका कैसे ?
हे ज्ञानमूर्ति हो आप आप ही जैसे।
हो निर्विकल्प निर्ग्रन्थ निजातम ध्याऊँ,
परभावशून्य शिवरूप परमपद पाऊँ।।
अद्वैत नमन हो प्रभो सहज अविकारा,
चित शान्त हुआ मैं जाना जाननहारा।।4।।

कुछ रहा न भेद विकल्प पूज्य पूजक का,
उपजे न द्वन्द दुःखरूप साध्य साधक का।
ज्ञाता हूँ ज्ञातारूप असंग रहूँगा,
पर की न आस निज में ही तृप्त रहूँगा।।
स्वभाव स्वयं को होवे मंगलकारा,
चित शान्त हुआ मैं जाना जाननहारा।।2।।

(धत्ता)

जय शान्ति जिनेन्द्रं, आनन्दकन्दं, नाथ निरंजन कुमतिहरा।
जो प्रभु गुण गावें, पाप मिटावें, पावें आतमज्ञान वरा।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

भक्तिभाव से जो जजें, जिनवर चरण पुनीत।
वे रत्नत्रय प्रगटकर, लहें मुक्ति नवनीत।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

श्री पार्श्वनाथ जिन पूजन

स्थापना

हे पार्श्वनाथ ! हे पार्श्वनाथ, तुमने हमको यह बतलाया।
निज पार्श्वनाथ में थिरता से, निश्चयसुख होता सिखलाया।।
तुमको पाकर मैं तृप्त हुआ, ठुकराऊँ जग की निधि नामी।
हे रवि सम स्वपर प्रकाशक प्रभु, मम हृदय विराजो हे स्वामी।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर संवौषट्।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः।
ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव-भव वषट्।

जड़ जल से प्यास न शान्त हुई, अतएव इसे मैं यहीं तजूँ।
निर्मल जल-सा प्रभु निजस्वरूप, पहिचान उसी में लीन रहूँ।।
तन-मन-धन निज से भिन्न मान, लौकिक वांछा नहिं लेश रखूँ।
तुम जैसा वैभव पाने को, तव निर्मल चरण-कमल अर्चूं।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन से शान्ति नहीं होगी, यह अन्तर्दहन जलाता है।
निज अमल भावरूपी चन्दन ही, रागाताप मिटाता है।।
तन-मन-धन निज से भिन्न मान, लौकिक वांछा नहिं लेश रखूँ।
तुम जैसा वैभव पाने को, तव निर्मल चरण-कमल अर्चूं।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु उज्ज्वल अनुपम निजस्वभाव ही, एकमात्र जग में अक्षत।
जितने संयोग वियोग तथा, संयोगी भाव सभी विक्षत।।
तन-मन-धन निज से भिन्न मान, लौकिक वांछा नहिं लेश रखूँ।
तुम जैसा वैभव पाने को, तव निर्मल चरण-कमल अर्चूं।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

ये पुष्प काम उत्तेजक है, इनसे तो शान्ति नहीं होती।
निज समयसार की सुमन माल ही कामव्यथा सारी खोती।।

तन-मन-धन निज से भिन्न मान, लौकिक वांछा नहिं लेश रखूँ।
तुम जैसा वैभव पाने को, तव निर्मल चरण-कमल अर्चूं।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ व्यंजन क्षुधा न नाश करें, खाने से बंध अशुभ होता।
अरु उदय में होवे भूख अत:, निज ज्ञान अशन अब मैं करता।।
तन-मन-धन निज से भिन्न मान, लौकिक वांछा नहिं लेश रखूँ।
तुम जैसा वैभव पाने को, तव निर्मल चरण-कमल अर्चूं।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़ दीपक से तो दूर रहो, रवि से नहिं आत्म दिखाई दे।
निज सम्यक्ज्ञानमयी दीपक ही, मोहतिमिर को दूर करे।।
तन-मन-धन निज से भिन्न मान, लौकिक वांछा नहिं लेश रखूँ।
तुम जैसा वैभव पाने को, तव निर्मल चरण-कमल अर्चूं।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जब ध्यान अग्नि प्रज्ज्वलित होय, कर्मों का ईंधन जले सभी।
दशधर्ममयी अतिशय सुगंध, त्रिभुवन में फैलेगी तब ही।।
तन-मन-धन निज से भिन्न मान, लौकिक वांछा नहिं लेश रखूँ।
तुम जैसा वैभव पाने को, तव निर्मल चरण-कमल अर्चूं।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जो जैसी करनी करता है, वह फल भी वैसा पाता है।
जो हो कर्तृत्व प्रमाद रहित, वह महा मोक्षफल पाता है।।
तन-मन-धन निज से भिन्न मान, लौकिक वांछा नहिं लेश रखूँ।
तुम जैसा वैभव पाने को, तव निर्मल चरण-कमल अर्चूं।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

है निज आतमस्वभाव अनुपम, स्वाभाविकसुख भी अनुपम है।
अनुपम सुखमय शिवपद पाऊँ, अतएव अर्घ्य यह अर्पित है।।

तन-मन-धन निज से भिन्न मान, लौकिक वांछा नहिं लेश रखूँ।
तुम जैसा वैभव पाने को, तव निर्मल चरण-कमल अर्चूं।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंचकल्याणक

(दोहा)

दूज कृष्ण वैशाख को, प्राणत स्वर्ग विहाय।
वामा माता उर वसे, पूजूँ शिव सुखदाय।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय वैशाखकृष्णद्वितीयायां गर्भकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पौष कृष्ण एकादशी, सुतिथि महा सुखकार।
अन्तिम जन्म लियो प्रभु, इन्द्र कियो जयकार।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पौषकृष्णैकादश्यां जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पौष कृष्ण एकादशी, बारह भावन भाय।
केशलोंच करके प्रभु, धरो योग शिव दाय।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय पौषकृष्णैकादश्यां तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुक्लध्यान में होय थिर, जीत उपसर्ग महान।
चैत्र कृष्ण शुभ चौथ को, पायो केवलज्ञान।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय चैत्रकृष्णचतुर्थ्यां ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

श्रावण शुक्ल सु सप्तमी, पायो पद निर्वाण।
सम्मेदाचल विदित है, तव निर्वाण सुथान।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय श्रावणशुक्लसप्तम्यां मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(हरिगीतिका)

हे पार्श्व प्रभु मैं शरण आयो दर्शकर अति सुख लियो।
चिन्ता सभी मिट गयी मेरी कार्य सब पूरण भयो।।

चिन्तामणि चिन्तत मिले तरु कल्प माँगे देत हैं।
तुम पूजते सब पाप भागैं सहज सब सुख देत हैं।।
हे वीतरागी नाथ, तुमको भी सरागी मानकर।
माँगे अज्ञानी भोग वैभव जगत में सुख जानकर।।
तव भक्त वांछा और शंका आदि दोषों रहित हैं।
वे पुण्य को भी होम करते भोग फिर क्यों चहत हैं।।
जब नाग और नागिन तुम्हारे वचन उर धर सुर भये।
जो आपकी भक्ति करें वे दास उनके भी भये।।
वे पुण्यशाली भक्त जन की सहज बाधा को हरें।
आनन्द से पूजा करें वांछा न पूजा की करें।।
हे प्रभो तव नासाग्रदृष्टि, यह बताती है हमें।
सुख आत्मा में प्राप्त कर ले, व्यर्थ बाहर में भ्रमें।।
मैं आप सम निज आत्म लखकर, आत्म में थिरता धरूँ।
अरु आश-तृष्णा से रहित, अनुपम अतीन्द्रिय सुख भरूँ।।
जब तक नहीं यह दशा होती, आपकी मुद्रा लखूँ।
जिनवचन का चिन्तन करूँ, व्रत शील संयम रस चखूँ।।
सम्यक्त्व को निज दृढ करूँ पापादि को नित परिहरूँ।
शुभ राग को भी हेय जानूँ लक्ष्य उसका नहिं करूँ।।
स्मरण ज्ञायक का सदा, विस्मरण पुद्गल का करूँ।
मैं निराकुल निज पद लहूँ प्रभु, अन्य कुछ भी नहिं चहुँ।।

ॐ ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

पूज्य ज्ञान वैराग्य है, पूजक श्रद्धावान।
पूजा गुण अनुराग अरु, फल है सुख अम्लान।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

सीमन्धर जिनपूजन

स्थापना

(कुण्डलिया)

भव-समुद्र सीमित कियो, सीमन्धर भगवान।
कर सीमित निजज्ञान को, प्रकट्यो पूरण ज्ञान।।
प्रकट्यो पूरण ज्ञान-वीर्य-दर्शन सुखकारी,
समयसार अविकार विमल चैतन्य-विहारी।
अंतर्बल से किया प्रबल रिपु-मोह पराभव,
अरे भवान्तक! करो अभय हर लो मेरा भव।।

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिन! अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिन! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिन! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्, सन्निधिकरणम्।

प्रभुवर! तुम जल-से शीतल हो, जल-से निर्मल अविकारी हो।
मिथ्यामल धोने को जिनवर, तुम ही तो मलपरिहारी हो।।
तुम सम्यग्ज्ञान जलोदधि हो, जलधर अमृत बरसाते हो।
भविजन मनमीन प्राणदायक, भविजन मनजलज खिलाते हो।।
हे ज्ञान पयोनिधि सीमन्धर! यह ज्ञान प्रतीक समर्पित है।
हो शान्त ज्ञेयनिष्ठा मेरी, जल से चरणाम्बुज चर्चित है।।

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चंदन-सम चन्द्रवदन जिनवर, तुम चन्द्रकिरण-से सुखकर हो।
भव-ताप निकंदन हे प्रभुवर! सचमुच तुम ही भवदुःख हर हो।।
जल रहा हमारा अन्तस्तल, प्रभु इच्छाओं की ज्वाला से।
यह शान्त न होगा हे जिनवर रे! विषयों की मधुशाला से।।
चिर-अंतर्दाह मिटाने को, तुम ही मलयागिरि चंदन हो।
चंदन से चरचूँ चरणांबुज, भव-तप-हर शत-शत वंदन हो।।

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

प्रभु! अक्षतपुर के वासी हो, मैं भी तेरा विश्वासी हूँ।
क्षत-विक्षत में विश्वास नहीं, तेरे पद का प्रत्याशी हूँ।।

अक्षत का अक्षत-संबल ले, अक्षत-साम्राज्य लिया तुमने।
अक्षत-विज्ञान दिया जग को, अक्षत-ब्रह्माण्ड किया तुमने।।
मैं केवल अक्षत-अभिलाषी, अक्षत अतएव चरण लाया।
निर्वाण-शिला के संगम-सा, धवलाक्षत मेरे मन भाया।।

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

तुम सुरभित ज्ञान-सुमन हो प्रभु, नहिं राग-द्वेष दुर्गन्ध कहीं।
सर्वांग सुकोमल चिन्मय तन, जग से कुछ भी सम्बन्ध नहीं।।
निज अंतर्वास सुवासित हो, शून्यान्तर पर की माया से।
चैतन्य-विपिन के चितरंजन, हो दूर जगत की छाया से।।
सुमनों से मन को राह मिली, प्रभु कल्पबेलि से यह लाया।
इनको पा चहक उठा मन-खग, भर चोंच चरण में ले लाया।।

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

आनंद-रसामृत के द्रह हो, नीरस जड़ता का दान नहीं।
तुम मुक्त-क्षुधा के वेदन से, षट्रस का नाम-निशान नहीं।।
विध-विध व्यंजन के विग्रह से, प्रभु भूख न शांत हुई मेरी।
आनंद-सुधारस-निर्झर तुम, अतएव शरण ली प्रभु तेरी।।
चिर-तृप्ति-प्रदायी व्यंजन से, हो दूर क्षुधा के अंजन ये।
क्षुत्पीड़ा कैसे रह लेगी ? जब पाये नाथ निरंजन ये।।

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चिन्मय-विज्ञानभवन अधिपति, तुम लोकालोकप्रकाशक हो।
कैवल्य किरण से ज्योतित प्रभु! तुम महामोहतम नाशक हो।।
तुम हो प्रकाश के पुंज नाथ! आवरणों की परछाँह नहीं।
प्रतिबिंबित पूरी ज्ञेयावलि, पर चिन्मयता को आँच नहीं।।
ले आया दीपक चरणों में, रे! अन्तर आलोकित कर दो।
प्रभु! तेरे मेरे अन्तर को, अविलंब निरन्तर से भर दो।।

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धू-धू जलती दुख की ज्वाला, प्रभु त्रस्त निखिल जगतीतल है।
बेचेत पड़े सब देही हैं, चलता फिर राग प्रभंजन है।।
यह धूम घूमरी खा-खाकर, उड़ रहा गगन की गलियों में।
अज्ञान-तमावृत चेतन ज्यों, चौरासी की रंग-रलियों में।।
संदेश धूप का तात्त्विक प्रभु, तुम हुए ऊर्ध्वगामी जग से।
प्रकटे दशांग प्रभुवर! तुम को, अन्तःदशांग की सौरभ से।।

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ-अशुभ वृत्ति एकांत दुःख अत्यंत मलिन संयोगी है।
अज्ञान विधाता है इनका, निश्चित चैतन्य विरोधी है।।
काँटों-सी पैदा हो जाती, चैतन्य-सदन के आँगन में।
चंचल छाया की माया-सी, घटती क्षण में बढ़ती क्षण में।।
तेरी फल-पूजा का फल प्रभु! हों शांत शुभाशुभ ज्वालायें।
मधुकल्प फलों-सी जीवन में, प्रभु! शांति-लतायें छा जायें।।

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

निर्मल जल-सा प्रभु निजस्वरूप, पहिचान उसी में लीन हुए।
भव-ताप उतरने लगा तभी, चंदन-सी उठी हिलोर हिये।।
अभिराम भवन प्रभु अक्षत का, सब शक्ति प्रसून लगे खिलने।
क्षुत् तृषा अठारह दोष क्षीण, कैवल्य प्रदीप लगा जलने।।
मिट चली चपलता योगों की, कर्मों के ईंधन ध्वस्त हुए।
फल हुआ प्रभो! ऐसा मधुरिम, तुम धवल निरंजन स्वस्थ हुए।।

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

वैदही हो देह में, अतः विदेही नाथ।
सीमंधर निज सीम में, शाश्वत करो निवास।।
श्री जिन पूर्व विदेह में, विद्यमान अरहंत।
वीतराग सर्वज्ञ श्री, सीमंधर भगवंत।।

(पद्धरि)

हे ज्ञानस्वभावी सीमंधर! तुम हो असीम आनंदरूप।
अपनी सीमा में सीमित हो, फिर भी हो तुम त्रैलोक्य भूप ।।
मोहान्धकार के नाश हेतु, तुम ही हो दिनकर अति प्रचंड।
हो स्वयं अखंडित कर्म शत्रु को, किया आपने खंड-खंड ।।
गृहवास राग की आग त्याग, धारा तुमने मुनिपद महान।
आतमस्वभाव साधन द्वारा, पाया तुमने परिपूर्ण ज्ञान ।।
तुम दर्शन ज्ञान दिवाकर हो, वीरज मंडित आनंदकंद।
तुम हुए स्वयं में स्वयं पूर्ण, तुम ही हो सच्चे पूर्णचन्द ।।
पूरब विदेह में हे जिनवर! हो आप आज भी विद्यमान।
हो रहा दिव्य उपदेश, भव्य पा रहे नित्य अध्यात्म ज्ञान ।।
श्री कुन्दकुन्द आचार्यदेव को, मिला आपसे दिव्य ज्ञान।
आत्मानुभूति से कर प्रमाण, पाया उनने आनन्द महान ।।
पाया था उनने समयसार, अपनाया उनने समयसार।
समझाया उनने समयसार, हो गये स्वयं वे समयसार ।।
दे गये हमें वे समयसार, गा रहे आज हम समयसार।
है समयसार बस एक सार, है समयसार बिन सब असार ।।
मैं हूँ स्वभाव से समयसार, परिणति हो जावे समयसार।
है यही चाह, है यही राह, जीवन हो जावे समयसार ।।

ॐ ह्रीं श्री सीमंधरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमालामहार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

समयसार है सार, और सार कुछ है नहीं।
महिमा अपरम्पार, समयसारमय आपकी ।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

* * * *

चौबीस तीर्थंकरों के अर्घ्य

१. श्री ऋषभनाथ भगवान का अर्घ्य

(ताटंक)

शुचि निरमल नीरं गंध सुअक्षत, पुष्प चरु ले मन हरषाय।
दीप धूप फल अर्घ्य सु लेकर, नाचत ताल मृदंग बजाय ।।
श्री आदिनाथ के चरणकमल पर, बलिबलि जाऊँ मन-वच-काय।
हे करुणानिधि ! भव-दुख मेटो, यातैं मैं पूजूँ प्रभु पाय ।।

ॐ ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

२. श्री अजितनाथ भगवान का अर्घ्य

(त्रिभंगी)

जल-फल सब सज्जै, बाजत बज्जै, गुनगन रज्जै मन मज्जै।
तुअ पदजुगमज्जे, सज्जन जज्जै, ते भव भज्जै निजकज्जै ।।
श्री अजितजिनेशं, नुतनक्रेशं, चक्रधरेशं खग्गेशं।
मनवांछित दाता, त्रिभुवनत्राता, पूजों ख्याता जग्गेशं ।।

ॐ ह्रीं श्री अजितनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

३. श्री संभवनाथ भगवान का अर्घ्य

(चौबोला)

जल चंदन तंदुल प्रसून चरु, दीप धूप फल अर्घ्य किया।
तुमको अरपों भावभगति धर, जै जै जै शिवरमनि पिया ।।
संभवजिन के चरन चरचतैं, सब आकुलता मिट जावै।
निजनिधि ज्ञान-दरश-सुख-वीरज, निराबाध भविजन पावै ।।

ॐ ह्रीं श्री संभवनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

४. श्री अभिनन्दननाथ भगवान का अर्घ्य

(हरिगीतिका)

अष्ट द्रव्य सँवारि सुन्दर, सुजस गाय रसाल ही।
नचत रचत जजों चरन जुग, नाय नाय सुभाल ही ।।

कलुषताप निकन्द श्री अभिनन्द, अनुपम चन्द है।
पदवंद वृन्द जजे प्रभु भवदन्द-फन्द निकन्द है।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दननाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

५. श्री सुमतिनाथ भगवान का अर्घ्य

(कवित्त)

जल चंदन तन्दुल प्रसून चरु, दीप धूप फल सकल मिलाय।
नाचि राचि शिरनाय समरचों, जय जय जय जय जय जिनराय।।
हरिहर वंदित पापनिकंदित, सुमतिनाथ त्रिभुवन के राय।
तुम पदपद्म सद्मशिवदायक, जजत मुदित मन उदित सुभाय।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

६. श्री पद्मप्रभ भगवान का अर्घ्य

(चाल होली)

जल फल आदि मिलाय गाय गुन, भगति भाव उमगाय।
जजों तुमहिं शिवतियवर जिनवर, आवागमन मिटाय।।
मन-वच-तन त्रय धार देत ही, जनम जरा मृत जाय।
पूजों भावसों, श्री पदमनाथ पद सार, पूजों भावसों।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

७. श्री सुपार्श्वनाथ भगवान का अर्घ्य

(चौपाई आँचलीबद्ध)

आठों दरब साजि गुनगाय, नाचत राचत भगति बढ़ाय।
दयानिधि हो, जय जगबन्धु दयानिधि हो।।
तुम पदपूजों मन-वच-काय, देव सुपारस शिवपुरराय।
दयानिधि हो, जय जगबन्धु दयानिधि हो।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

८. श्री चन्द्रप्रभ भगवान का अर्घ्य

(अवतार)

सजि आठों दरब पुनीत, आठों अंग नमों।
पूजों अष्टम जिन मीत, अष्टम अवनि गमों।।
श्री चंदनाथ दुति चंद, चरनन चंद लगै,
मनवचतन जजत अमंद, आतमजोति जगै।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

९. श्री पुष्पदन्त भगवान का अर्घ्य

(चाल होली)

जल फल सकल मिलाय मनोहर, मन-वच-तन हुलसाय।
तुम पद पूजौं प्रीति लायकै, जय जय त्रिभुवनराय।।
मेरी अरज सुनीजे, पुष्पदन्त जिनराय।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदंतजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

१०. श्री शीतलनाथ भगवान का अर्घ्य

(वसंततिलका)

श्रीफलादि वसु प्रासुक द्रव्य साजै।
नाचे रचे मचत बज्जत सज्ज बाजै।।
रागादि दोष मलमर्दन हेतु येवा।
चर्चौं पदाब्ज तव शीतलनाथ देवा।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

११. श्री श्रेयांसनाथ भगवान का अर्घ्य

(हरिगीता)

जल मलय तंदुल सुमन चरु अरु दीप धूप फलावली।
करि अर्घ्य चरचों चरनजुग प्रभु मोहि तार उतावली।।
श्रेयांसनाथ जिनन्द त्रिभुवनवन्द आनन्दकन्द हैं।
दुख दन्द-फन्द निकन्द पूरनचन्द जोति अमन्द हैं।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

१२. श्री वासुपूज्य भगवान का अर्घ्य

(जोगीरासा)

जल-फल दरब मिलाय गाय गुन, आठों अंग नमाई।
शिवपदराज हेत हे श्रीपति! निकट धरों यह लाई।।
वासुपूज वसुपूज तनुज पद, वासव सेवत आई।
बालब्रह्मचारी लखि जिनको, शिवतिय सनमुख धाई।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

१३. श्री विमलनाथ भगवान का अर्घ्य

(सोरठा)

आठों दरब सँवार, मन-सुखदायक पावने।
जजों अर्घ्य भर थार, विमल विमल शिवतिय रमन।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

१४. श्री अनन्तनाथ भगवान का अर्घ्य

(हरिगीता)

शुचि नीर चन्दन शालिशंदन, सुमन चरु दीवा धरों।
अरु धूप फल जुत अरघ करि, कर जोर जुग विनती करों।।
जगपूज परमपुनीत मीत, अनन्त संत सुहावनों।
शिवकंतवंत महंत ध्यावो, भ्रन्ततन्त नशावनों।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

१५. श्री धर्मनाथ भगवान का अर्घ्य

(जोगीरासा)

आठों दरब साज शुचि चितहर, हरषि हरषि गुन गाई।
बाजत दृम दृम दृम मृदंग गत, नाचत ता थेई थाई।।
परम धरम-शम-रमन धरम-जिन, अशरन शरन निहारी।
पूजूँ पाय गाय गुन सुन्दर, नाचौं दै दै तारी।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

१६. श्री शान्तिनाथ भगवान का अर्घ्य

(त्रिभंगी)

वसु द्रव्य सँवारी, तुम ढिंग धारी, आनन्दकारी दृग प्यारी।
तुम हो भवतारी, करुनाधारी, यातैं थारी शरनारी।।
श्री शान्तिजिनेशं, नुतशक्रेशं, वृषचक्रेशं चक्रेशं।
हनि अरिचक्रेशं, हे गुनधेशं दयामृतेशं मक्रेशं।।

ॐ ह्रीं श्री शान्तिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

१७. श्री कुन्थुनाथ भगवान का अर्घ्य

(चाल लावनी)

जल चन्दन तन्दुल प्रसून चरु, दीप धूप लेरी।
फलजुत जजन करों मन सुख धरि, हरो जगत फेरी।।
कुन्थु सुन अरज दास केरी, नाथ सुनि अरज दास केरी।
भवसिन्धु पर्‍यो हों नाथ, निकारो बाँह पकर मेरी।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

१८. श्री अरनाथ भगवान का अर्घ्य

(त्रिभंगी)

सुचि स्वच्छ पटीरं, गंधगहीरं, तंदुलशीरं पुष्प चरूँ।
वर दीपं धूपं, आनन्दरूपं, लै फल भूपं अर्घ्य करूँ।।
प्रभु दीनदयालं, अरिकुलकालं, विरदविशालं सुकुमालम्।
हनि मम जंजालं, हे जगपालं, अनगुनमालं वरभालम्।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

१९. श्री मल्लिनाथ भगवान का अर्घ्य

(जोगीरासा)

जल फल अरघ मिलाय गाय गुन पूजौं भगति बढ़ाई।
शिवपदराज हेत हे श्रीधर, शरन गही मैं आई।।

राग-दोष मद मोह हरन को, तुम ही हौ वरवीरा।
यातैं शरन गही जगपतिजी, वेग हरो भवपीरा।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

२०. श्री मुनिसुव्रतनाथ भगवान का अर्घ्य

(गीतिका)

जल गंध आदि मिलाय आठों, दरब अरघ सजों वरों।
पूजों चरन-रज भगत जुत, जातैं जगत सागर तरों।।
शिवसाथ करत सनाथ सुव्रतनाथ मुनि गुनमाल है।
तसु चरन आनन्दभरन तारन, तरन विरद विशाल है।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

२१. श्री नमिनाथ भगवान का अर्घ्य

जल फलादि मिलाय मनोहरं, अरघ धारत ही भय भौ हरं।
जजतु हौं नमि के गुन गायकें, जुगपदांबुज प्रीति लगायकें।।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

२२. श्री नेमिनाथ भगवान का अर्घ्य

(चाल होली)

जल-फल आदि साज शुचि लीने, आठों दरब मिलाय।
अष्टमथिति के राजकरन कों, जजों अंग वसु नाय।।
दाता मोक्ष के, श्री नेमिनाथ जिनराय, दाता मोक्ष के।।

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

२३. श्री पार्श्वनाथ भगवान का अर्घ्य

नीर गन्ध अक्षतान् पुष्प चारु लीजिए।
दीप-धूप-श्रीफलादि अर्घ्यतैं जजीजिये।।
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूँ सदा।
दीजिए निवास मोक्ष, भूलिए नहीं कदा।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

२४. श्री महावीर भगवान का अर्घ्य

(अवतार)

जल-फल वसु सजि हिमथार, तन-मन मोद धरों।
गुण गाऊँ भवदधि तार, पूजत पाप हरों।।
श्री वीर महा अतिवीर, सन्मतिनायक हो।
जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मतिदायक हो।।

ॐ ह्रीं श्री महावीरजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(हरिगीत)

इस अर्घ्य का क्या मूल्य है अन्-अर्घ्य पद के सामने।
उस परम पद को पा लिया, हे पतित-पावन! आपने।।
सन्तप्त मानस शान्त हों, जिनके गुणों के गान में।
वे वर्धमान महान जिन, विचरें हमारे ध्यान में।।

ॐ ह्रीं श्री वर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

25. चौबीस तीर्थंकर का अर्घ्य

(अवतार)

जल फल आठों शुचिसार, ताको अर्घ्य करों।
तुमको अरपों भवतार, भव तरि मोक्ष वरों।।
चौबीसों श्री जिनचन्द, आनन्द कन्द सही।
पद जजत हरत भव-फन्द, पावत मोक्ष मही।।

ॐ ह्रीं श्री वृषभादिवीरांतेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

26. मुनिराज पूजन का अर्घ्य

(अवतार)

चक्री चरणन शिर नाय, महिमा प्रगट करें।
लेकर बहुमूल्य सु अर्घ्य, हम भी भक्ति करें।।
गुण मूल अठाइस युक्त, मुनिवर को ध्यावें।
अपना निर्ग्रंथ स्वरूप, हम भी प्रगटावें।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिकालवर्ती आचार्य, उपाध्याय, साधु, सर्वमुनिवरेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

****

महाऽर्घ्य

मैं देव श्री अरहंत पूजूँ, सिद्ध पूजूँ चाव सों।
आचार्य श्री उवझाय पूजूँ, साधु पूजूँ भाव सों।।
अरहन्त भाषित बैन पूजूँ, द्वादशांग रची गनी।
पूजूँ दिगम्बर गुरुचरण, शिवहेत सब आशा हनी।।
सर्वज्ञ भाषित धर्म दशविधि, दयामय पूजूँ सदा।
जजि भावना षोडश रत्नत्रय, जा बिना शिव नहिं कदा।।
त्रैलोक्य के कृत्रिम-अकृत्रिम, चैत्य-चैत्यालय जजूँ।
पंचमेरु-नन्दीश्वर जिनालय, खचर सुर पूजित भजूँ।।
कैलाश श्री सम्मेदगिरि, गिरनार मैं पूजूँ सदा।
चम्पापुरी पावापुरी पुनि, और तीरथ शर्मदा।।
चौबीस श्री जिनराज पूजूँ, बीस क्षेत्र विदेह के।
नामावली इक सहस वसु जय, होय पति शिव गेह के।।

(दोहा)

जल गंधाक्षत पुष्प चरु, दीप धूप फल लाय।
सर्व पूज्य पद पूजहूँ, बहु विधि भक्ति बढ़ाय।।

ॐ ह्रीं श्री अरहन्तसिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो, द्वादशांगजिनवाणीभ्यो उत्तमक्षमादिदशलक्षणधर्माय, दर्शनविशुद्ध्यादिषोडशकारणेभ्यो, सम्यग्दर्शनज्ञान-चारित्रेभ्यः त्रिलोकसम्बन्धीकृत्रिमाकृत्रिमजिनचैत्यालयेभ्यो, पंचमेरौ अशीति-चैत्यालयेभ्यो, नन्दीश्वरद्वीपस्थद्विपंचाशज्जिनालयेभ्यो, श्री सम्मेदशिखर, गिरनार-गिरि, कैलाशगिरि, चम्पापुर, पावापुरआदिसिद्धक्षेत्रेभ्यो, अतिशयक्षेत्रेभ्यो, विदेह-क्षेत्रस्थितसीमंधरादिविद्यमानविंशतितीर्थंकरेभ्यो, ऋषभादिचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो, भगवज्जिनसहस्राष्टनामेभ्यश्च अनर्घ्यपदप्राप्तये महाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

****

शान्ति पाठ

हूँ शान्तिमय ध्रुव ज्ञानमय, ऐसी प्रतीति जब जगे।
अनुभूति हो आनन्दमय, सारी विकलता तब भगे।।1।।
निजभाव ही है एक आश्रय, शान्ति दाता सुखमयी।
भूल स्व दर-दर भटकते, शान्ति कब किसने लही।।2।।
निज घर बिना विश्राम नाहीं, आज यह निश्चय हुआ।
मोह की चट्टान टूटी, शान्ति निर्झर बह रहा।।3।।
यह शान्तिधारा हो अखण्ड, चिरकाल तक बहती रहे।
होवें निमग्न सुभव्यजन, सुखशान्ति सब पाते रहें।।4।।
पूजोपरान्त प्रभो यही, इक भावना है हो रही।
लीन निज में ही रहूँ, प्रभु और कुछ वांछा नहीं।।5।।

सहज परम आनन्दमय, निज ज्ञायक अविकार।
स्व में लीन परिणति विषैं, बहती समरस धार।।

विसर्जन पाठ

थी धन्य घड़ी जब निज ज्ञायक की, महिमा मैंने पहिचानी।
हे वीतराग सर्वज्ञ महा-उपकारी, तव पूजन ठानी।।1।।
सुख हेतु जगत में भ्रमता था, अन्तर में सुख सागर पाया।
प्रभु निजानन्द में लीन देख, मम यही भाव अब उमगाया।।2।।
पूजा का भाव विसर्जन कर, तुमसम ही निज में थिर होऊँ।
उपयोग नहीं बाहर जावे, भव क्लेश बीज अब नहिं बोऊँ।।3।।
पूजा का किया विसर्जन प्रभु, और पाप भाव में पहुँच गया।
अब तक की मूरखता भारी, तज नीम हलाहल हाय पिया।।4।।
ये तो भारी कमजोरी है, उपयोग नहीं टिक पाता है।
तत्त्वादिक चिन्तन भक्ति से भी दूर पाप में जाता है।।5।।
हे बल-अनन्त के धनी विभो, भावों में तबतक बस जाना।
निज से बाहर भटकी परिणति, निज ज्ञायक में ही पहुँचाना।।6।।
पावन पुरुषार्थ प्रकट होवे, बस निजानन्द में मग्न रहूँ।
तुम आवागमन विमुक्त हुए, मैं पास आपके जा तिष्ठूँ।।7।।

यागमण्डल विधान

स्थापना

(गीता)

कर्मतम को हननकर, निजगुण प्रकाशन भानु हैं।
अन्त अर क्रम रहित दर्शन-ज्ञान-वीर्य निधान हैं।।
सुखस्वभावी द्रव्य चित् सत् शुद्ध परिणति में रमें।
आइये सब विघ्न चूरण पूजते सब अघ वमें।।

ॐ ह्रीं श्री जिनबिम्बप्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमण्डलोक्ता जिनमुनय अत्र अवतरत अवतरत संवौषट्।

ॐ ह्रीं श्री जिनबिम्बप्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमण्डलोक्ता जिनमुनय अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः।

ॐ ह्रीं श्री जिनबिम्बप्रतिष्ठाविधाने सर्वयागमण्डलोक्ता जिनमुनय अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् (पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)।

अष्टक

(चाल)

गंगा-सिंधू वर पानी, सुवरणझारी भर लानी।
गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई।।

ॐ ह्रीं श्री अस्मिन् प्रतिष्ठामहोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध गन्ध लाय मनहारी, भवताप शमन करतारी।
गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई।।

ॐ ह्रीं श्री अस्मिन् प्रतिष्ठामहोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

शशिसम शुचि अक्षत लाए, अक्षयगुण हित हुलसाए।
गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई।।

ॐ ह्रीं श्री अस्मिन् प्रतिष्ठामहोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो अक्षयगुणप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभकल्पद्रुमन सुमना ले, जग वशकर काम नशा ले।
गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई।।

ॐ ह्रीं श्री अस्मिन् प्रतिष्ठामहोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान मनोहर लाए, जासे क्षुत् रोग शमाए।
गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई।।

ॐ ह्रीं श्री अस्मिन् प्रतिष्ठामहोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मणि रत्नमयी शुभ दीपा, तम मोह हरण उद्दीपा।
गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई।।

ॐ ह्रीं श्री अस्मिन् प्रतिष्ठामहोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ गंधित धूप चढ़ाऊँ, कर्मों के वंश जलाऊँ।
गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई।।

ॐ ह्रीं श्री अस्मिन् प्रतिष्ठामहोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर दिवि फल ले आए, शिव हेतु सुचरण चढाये।
गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई।।

ॐ ह्रीं श्री अस्मिन् प्रतिष्ठामहोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सुवरण के पात्र धराए, शुचि आठों द्रव्य मिलाए।
गुरु पञ्च परम सुखदाई, हम पूजें ध्यान लगाई।।

ॐ ह्रीं श्री अस्मिन् प्रतिष्ठामहोत्सवे सर्वयज्ञेश्वरजिनमुनिभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(१)

पाँच परमेष्ठी, चार मंगल, चार उत्तम व चार शरण के लिए १७ अर्घ्य

(अडिल्ल)

काल अनन्ता भ्रमण करत जग जीव हैं।
तिनको भव तें काढ़ि करत शुचि जीव हैं।।
ऐसे अर्हत् तीर्थनाथ पद ध्याय के।
पूजूँ अर्घ्य बनाय सुमन हरषाय के।।

ॐ ह्रीं श्री अनंतभवार्णवभयनिवारक-अनंतगुणस्तुताय अर्हत्परमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।।१।।

(हरिगीता)

कर्मकाष्ठ महान जाले ध्यान अग्नि जलायके।
गुण अष्ट लह व्यवहारनय निश्चय अनंत लहायके।।
निज आत्म में थिररूप रहके, सुधा स्वाद लखायके।
सो सिद्ध हैं कृतकृत्य चिन्मय भजूँ मन उमगायके।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टकर्मविनाशकनिजात्मतत्त्वविभासकसिद्धपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।।२।।

(त्रिभंगी)

मुनिगण को पालत आलस टालत आप संभालत परम यती।
जिनवाणि सुहानी शिवसुखदानी भविजन मानी धर सुमती।।
दीक्षा के दाता अघ से त्राता समसुखभाजा ज्ञानपती।
शुभ पञ्चाचारा पालत प्यारा हैं आचारज कर्महती।।

ॐ ह्रीं श्री अनवद्यविद्याविद्योतनाय आचार्यपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३।।

(त्रोटक)

जय पाठक ज्ञान कृपान नमो, भवि जीवन हत अज्ञान नमो।
निज आत्म महानिधि धारक हैं, संशय-वन-दाह निवारक हैं।।

ॐ ह्रीं श्री द्वादशांगपरिपूरण-श्रुतपाठनोद्यत-बुद्धिविभवधारकोपाध्यायपरमेष्ठिने अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४।।

(द्रुतविलंबित)

सुभग तप द्वादश कर्तार हैं, ध्यान सार महान प्रचार हैं।
मुकति वास अचल यति साधते, सुख सु आतमजन्य सम्हारते।।

ॐ ह्रीं श्री घोरतपोऽभिसंस्कृतध्यानस्वाध्यायनिरतसाधुपरमेष्ठिने अर्घ्यं नि. स्वाहा।।५।।

(मालिनी)

अरि हनन सु अरिहन् पूज्य अर्हन् बताये।
मं पाप गलन हेतु मंगलं ध्यान लाए।।
मंगं सुखकारण मंगलीकं जताए।
ध्यानी छबि तेरी देखते दुःख नशाये।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्परमेष्ठिमङ्गलाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६।।

(चौपाई)

जय जय सिद्ध परम सुखकारी। तुम गुण सुमरत कर्म निवारी।
विघ्नसमूह सहज हरतारे। मंगलमय मंगल करतारे।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धमङ्गलाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७।।

(शार्दूलविक्रीडित)

राग-द्वेष महान सर्प शमने शम मंत्रधारी यती।
शत्रु-मित्र समान भाव करके भवताप हारी यती।।
मंगल सार महानकार अघहर सत्त्वानुकम्पी यती।
संयम पूर्ण प्रकार साध तप को संसारहारी यती।।

ॐ ह्रीं श्री साधुमङ्गलाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८।।

(शङ्कर)

जिनधर्म है सुखकार जग में धरत भवभयवंत।
स्वर्ग-मोक्ष सुद्वार अनुपम धरे सो जयवन्त।।
सम्यक्त्व-ज्ञान-चारित्र लक्षण भजत जग में संत।
सर्वज्ञ रागविहीन वक्ता हैं प्रमाण महन्त।।

ॐ ह्रीं श्री केवलिप्रज्ञप्तधर्ममङ्गलाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९।।

(झूलना)

चर्ण संस्पर्शते वन गिरि शुद्ध हो, नाम सत्तीर्थ को प्राप्त करते भए।
दर्श जिनका करे पूजते दुख हरे, जन्म निज सार्थ भविजीव मानत भए।।
देव तुम लेखके देव सब छोड़के, देव तुम उत्तमा सन्त ठानत भए।
पूजते आपको टालते ताप को, मोक्षलक्ष्मी निकट आप जानत भए।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हल्लोकोत्तमेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०।।

(भुजंगप्रयात)

दरश ज्ञान वैरी करम तीव्र आए,
नरक पशुगति मांहीं प्राणी पठाए।
तिन्हें ज्ञान असितें हनन नाथ कीना,
परम सिद्ध उत्तम भजूँ रागहीना।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धलोकोत्तमेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।११।।

(चौपैया)

सूरज चन्द्र देवपति नरपति पद सरोज नित वंदे।
लोट-लोट मस्तक धर पग में पातक सर्व निकंदे।।
लोकमांहि उत्तम यतियन में जैनसाधु सुखकंदे।
पूजत सार आत्मगुण पावत होवत आप स्वच्छंदे।।

ॐ ह्रीं श्री साधुलोकोत्तमेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२।।

(सृग्विणी)

जो दया धर्म विस्तारता विश्व में,
नाश मिथ्यात्व अज्ञान कर विश्व में।
काम भाव दूर कर, मोक्षकर विश्व में,
सत्य जिनधर्म यह धार ले विश्व में।।

ॐ ह्रीं श्री केवलिप्रज्ञप्तधर्मलोकोत्तमाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३।।

(मरहठा)

भव-भ्रमण नशाया शरण कराया जीव-अजीवहिं खोज।
इन्द्रादिक देवा जाको पूजें जग गुण गावें रोज।।

ऐसे अर्हत् की शरणा आये, रत्नत्रय प्रकटाय।
जासे ही जन्म मरण भय नाशे नित्यानन्दी पाय।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्शरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४।।

(नाराच)

सुखी न जीव हो कभी जहाँ कि देह साथ है।
सदा ही कर्म आस्रवैं, न शातंता लहात है।।
जो सिद्ध को लखाय भक्ति एक मन करात है।
वही सुसिद्धि आप ही स्वभाव आत्म पात है।।

ॐ ह्रीं श्री सिद्धशरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५।।

(त्रोटक)

नहिं राग न द्वेष न काम धरें, भवदधि नौका भवि पार करें।
स्वारथ बिन सब हितकारक हैं, ते साधु जजूँ सुखकारक हैं।।

ॐ ह्रीं श्री साधुशरणेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६।।

(चामर)

धर्म ही सु मित्रसार साथ नाहिं त्यागता,
पापरूप अग्नि को सुमेघ सम बुझावता।
धर्म सत्य शर्ण यही जीव को सम्हारता,
भक्ति धर्म जो करें अनन्त ज्ञान पावता।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मशरणाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७।।

(दोहा)

पञ्च परमगुरु सार हैं, मङ्गल उत्तम जान।
शरणा राखन को बली, पूजूँ धरि उर ध्यान।।

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्परमेष्ठिप्रभृतिधर्मशरणांतप्रथमवलयस्थितसप्तदशजिनाधीश-यागदेवताभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(२)

भूतकाल में हुए २४ तीर्थंकरों के लिए अर्घ्य

(पद्धरि)

भवि लोक शरण निर्वाणदेव, शिव सुखदाता सब देव देव।
पूजूँ शिवकारण मन लगाय, जासें भवसागर पार जाय।।१।।
ॐ ह्रीं श्री निर्वाणजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८।।

तज राग-द्वेष ममता विहाय, पूजक जन सुख अनुपम लहाय।
गुणसागर सागर जिन लखाय, पूजूँ मन-वच अर काय नाय।।२।।
ॐ ह्रीं श्री सागरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९।।

नय अर प्रमाण से तत्त्व पाय, निज जीव तत्त्व निश्चय कराय।
साधो तप केवलज्ञान दाय, ते साधु महा वन्दौं सुभाय।।३।।
ॐ ह्रीं श्री महासाधुजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०।।

दीपक विशाल निज ज्ञान पाय, त्रैलोक लखे बिन श्रम उपाय।
विमलप्रभ निर्मलता कराय, जो पूजैं जिनको अर्घ लाय।।४।।
ॐ ह्रीं श्री विमलप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१।।

भवि शरण गेह मन शुद्धिकार, गावैं थुति मुनिगण यश प्रचार।
शुद्धाभदेव पूजूँ विचार, पाऊँ आतम गुण मोक्ष द्वार।।५।।
ॐ ह्रीं श्री शुद्धाभदेवजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२।।

अंतर बाहर लक्ष्मी अधीश, इन्द्रादिक सेवत नाय शीस।
श्रीधर चरणा श्री शिव कराय, आश्रयकर्ता भवदधि तराय।।६।।
ॐ ह्रीं श्री श्रीधरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३।।

जो भक्ति करें मन-वचन-काय, दाता शिवलक्ष्मी के जिनाय।
श्रीदत्त चरण पूजूँ महान, भवभय छूटे लहूँ अमल ज्ञान।।७।।
ॐ ह्रीं श्री श्रीदत्तजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४।।

भामण्डल छवि वरणी न जाय, जहँ जीव लखैं भव सप्त आय।
मन शुद्ध करें सम्यक्तपाय, सिद्धाभ भजे भवभय नसाय।।८।।
ॐ ह्रीं श्री सिद्धाभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२५।।

अमलप्रभ निर्मल ज्ञान धरे, सेवा में इन्द्र अनेक खड़े।
नित संत सुमंगल गान करें, निज आतमसार विलास करें।।९।।
ॐ ह्रीं श्री अमलप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२६।।

उद्धार जिनं उद्धार करें, भव कारण भ्रान्ति विनाश करें।
हम डूब रहे भवसागर में, उद्धार करो निज आत्म रमें।।१०।।
ॐ ह्रीं श्री उद्धारजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२७।।

अग्निदेव जिनं हो अग्निमई, अठ कर्मन ईंधन दाह दई।
हम असाततृणं कर दग्ध प्रभो, निजसम करलो जिनराज प्रभो।।११।।
ॐ ह्रीं श्री अग्निदेवजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२८।।

संयम जिन द्वैविध संयम को, प्राणी रक्षण इन्द्रिय दम को।
दीजे निश्चय निज संयम को, हरिये मम सर्व असंयम को।।१२।।
ॐ ह्रीं श्री संयमजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२९।।

शिव जिनवर शाश्वत सौख्यकरी, निज आत्मविभूति स्वहस्त करी।
शिववाञ्छक हम कर जोड़ नमें, शिवलक्ष्मी दो नहिं काहू नमें।।१३।।
ॐ ह्रीं श्री शिवजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३०।।

पुष्पांजलि पुष्पनितें जजिये, सब कामव्यथा क्षण में हरिये।
निज शीलस्वभावहि रमरहिये, निज आत्मजनित सुख को लहिये।।१४।।
ॐ ह्रीं श्री पुष्पांजलिजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३१।।

उत्साह जिनं उत्साह करें, जिन संयम चन्द्रप्रकाश करें।
समभाव समुद्र बढावत हैं, हम पूजत तव गुण पावत हैं।।१५।।
ॐ ह्रीं श्री उत्साहजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३२।।

चिन्तामणि सम चिन्ता हरिये, निज सम करिये भव तम हरिये।
परमेश्वर निज ऐश्वर्य धरें, जो पूजें ताके विघ्न हरें।।१६।।
ॐ ह्रीं श्री परमेश्वरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३३।।

ज्ञानेश्वर ज्ञान समुद्र पाय, त्रैलोक बिन्दु सम जहं दिखाय।
निज आतमज्ञान प्रकाशकार, वन्दूँ पूजूँ मैं बार-बार।।१७।।
ॐ ह्रीं श्री ज्ञानेश्वरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३४।।

कर्मों ने आत्म मलीन किया, तप अग्नि जला निज शुद्ध किया।
विमलेश्वर जिन मो विमल करो, मल ताप सकल ही शांत करो।।१८।।

ॐ ह्रीं श्री विमलेश्वरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३५।।

यश जिनका विश्वप्रकाश किया, शशिकर इव निर्मल व्याप्त किया।
भट मोह अरी को शांत किया, यशधारी सार्थक नाम दिया।।१९।।

ॐ ह्रीं श्री यशोधरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३६।।

समता भय क्रोध विनाश किया, जग कामरिपू को शान्त किया।
शुचिताधर शुचिकर नाथ जजूँ, श्री कृष्णमती जिन नित्य भजूँ।।२०।।

ॐ ह्रीं श्री कृष्णमतिजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३७।।

शुचि ज्ञानमती जिन ज्ञान धरे, अज्ञान तिमिर सब नाश करे।
जो पूजें ज्ञान बढावत हैं, आतम अनुभव सुख पावत हैं।।२१।।

ॐ ह्रीं श्री ज्ञानमतिजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३८।।

शुद्धमती जिनधर्म धुरन्धर, जानत विश्व सकल एकीकर।
जो शुद्ध बुद्धि होवे पूजें, भवि ध्यान करे निर्मल हूजे।।२२।।

ॐ ह्रीं श्री शुद्धमतिजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३९।।

संसार विभूति उदास भये, शिवलक्ष्मी सार सुहात भए।
निज योग विशाल प्रकाश किया, श्रीभद्र जिनं शिववास लिया।।२३।।

ॐ ह्रीं श्री श्रीभद्रजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४०।।

सत्वीर्य अनन्त प्रकाश किये, निज आतमतत्त्व विकास किये।
जिन वीर्य अनन्त प्रभाव धरें, जो पूजें कर्म-कलङ्क हरें।।२४।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तवीर्यजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४१।।

(दोहा)

भूत भरत चौबीस जिन, गुण सुमरूँ हर बार।
मङ्गलकारी लोक में, सुख-शांति दातार।।

ॐ ह्रीं श्री अस्मिन् प्रतिष्ठामहोत्सवे यागमण्डलेश्वरद्वितीयवलयोन्मुद्रित-निर्वाणाद्यनन्तवीर्यान्तेभ्यो भूतकालवर्तिचतुर्विंशतिजिनेभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

३

वर्तमानकाल में हुए २४ तीर्थंकरों के लिए अर्घ्य

(चाल)

मनु नाभि महीधर जाये, मरुदेवि उदर उतराए।
युग आदि सुधर्म चलाया, वृषभेष जजों वृष पाया।।१।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४२।।

जित शत्रु जने व्यवहारा, निश्चय आयो अवतारा।
सब कर्मन जीत लिया है, अजितेश सुनाम भया है।।२।।

ॐ ह्रीं श्री अजितजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४३।।

दृढराज सुयश आकाशे, सूरजसम नाथ प्रकाशे।
जग-भूषण शिवगति दानी, संभव जज केवलज्ञानी।।३।।

ॐ ह्रीं श्री सम्भवजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४४।।

कपिचिह्न धरे अभिनंदा, भवि जीव करे आनन्दा।
जन्मन-मरणा दुःख टारें, पूजें ते मोक्ष सिधारें।।४।।

ॐ ह्रीं श्री अभिनन्दनजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४५।।

सुमतीश जजों सुखकारी, जो शरण गहें मतिधारी।
मति निर्मल कर शिव पावें, जग-भ्रमण हि आप मिटावें।।५।।

ॐ ह्रीं श्री सुमतिनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४६।।

धरणेश सुनृप उपजाए, पद्मप्रभ नाम कहाये।
है रक्त कमल पग चिह्ना, पूजत सन्ताप विछिन्ना।।६।।

ॐ ह्रीं श्री पद्मप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४७।।

जिनचरणा रज सिर दीनी, लक्ष्मी अनुपम कर कीनी।
हैं धन्य सुपारश नाथा, हम छोड़े नहिं जग साथा।।७।।

ॐ ह्रीं श्री सुपार्श्वनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४८।।

शशि तुम लखि उत्तम जग में, आया वसने तव पग में।
हम शरण गही जिन चरणा, चन्द्रप्रभ भवतम हरणा।।८।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।४९।।

तुम पुष्पदंत जितकामी, है नाम सुविधि अभिरामी।
वन्दूँ तेरे जुग चरणा, जासे हो शिवतिय वरणा।।९।।

ॐ ह्रीं श्री पुष्पदन्तजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५०।।

श्री शीतलनाथ अकामी, शिवलक्ष्मीवर अभिरामी।
शीतल कर भव आतापा, पूजूँ हर मम संतापा।।१०।।

ॐ ह्रीं श्री शीतलनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५१।।

श्रेयांस जिना जुग चरणा, चित धारूँ मङ्गल करणा।
परिवर्तन पञ्च विनाशे, पूजनतें ज्ञान प्रकाशे।।११।।

ॐ ह्रीं श्री श्रेयांसनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५२।।

इक्ष्वाकु सुवंश सुहाया, वसुपूज्य तनय प्रगटाया।
इंद्रादिक सेवा कीनी, हम पूजें जिनगुण चीन्ही।।१२।।

ॐ ह्रीं श्री वासुपूज्यजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५३।।

कापिल्य पिता कृतवर्मा, माता श्यामा शुचिवर्मा।
श्री विमल परम सुखकारी, पूजा द्वै मल हरतारी।।१३।।

ॐ ह्रीं श्री विमलनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५४।।

साकेता नगरी भारी, हरिसेन पिता अविकारी।
सुर-असुर सदा जिनचरणा, पूजें भवसागर तरणा।।१४।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५५।।

समवसृत द्वैविध धर्मा, उपदेशो श्री जिनधर्मा।
हितकारी तत्त्व बताए, जासे जन शिवमग पाये।।१५।।

ॐ ह्रीं श्री धर्मनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५६।।

कुरुवंशी श्री विश्वसेना, ऐरादेवी सुख देना।
श्री हस्तिनागपुर आये, जिन शांति जजों सुख पाए।।१६।।

ॐ ह्रीं श्री शांतिनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५७।।

श्री कुन्थु दयामय ज्ञानी, रक्षक षट्कायी प्राणी।
सुमरत आकुलता भाजे, पूजत ले दर्व सु ताजे।।१७।।

ॐ ह्रीं श्री कुन्थुनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५८।।

शुभदृष्टी राय सुदर्शन, अर जाए त्रय भू पर्शन।
माता सेना उर रत्नं, धर चिह्न सुमन जज यत्नं।।१८।।

ॐ ह्रीं श्री अरनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।५९।।

नृप कुम्भ धरणि से जाए, जिन मल्लिनाथ मुनि पाये।
जिन यज्ञ विघ्न हरतारे, पूजूँ शुभ अर्घ्य उतारे।।१९।।

ॐ ह्रीं श्री मल्लिनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६०।।

हरिवंश सु सुन्दर राजा, वप्रा माता जिनराजा।
मुनिसुव्रत शिवपथ कारण, पूजूँ सब विघ्न निवारण।।२०।।

ॐ ह्रीं श्री मुनिसुव्रतजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६१।।

मिथिलापुर विजय नरेन्द्रा, कल्याण पाँच कर इन्द्रा।
नमि धर्मामृत वर्षायो, भव्यन खेती अकुलायो।।२१।।

ॐ ह्रीं श्री नमिनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६२।।

द्वारावति विजयसमुद्रा, जन्मे यदुवंश जिनेन्द्रा।
हरिबल पूजित जिनचरणा, शंखांक अंबुधर वरणा।।२२।।

ॐ ह्रीं श्री नेमिनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६३।।

काशी विश्वसेन नरेशा, उपजायो पार्श्व जिनेशा।
पद्मा अहिपति पग वन्दे, रिपु कमठ मान निःकंदे।।२३।।

ॐ ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६४।।

सिद्धार्थराय त्रय ज्ञानी, सुत वर्द्धमान गुणखानी।
समवसृत श्रेणिक पूजे, तुम सम हैं देव न दूजे।।२४।।

ॐ ह्रीं श्री वर्द्धमानजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६५।।

(दोहा)

वर्तमान चौबीस जिन, उद्धारक भवि जीव।
बिम्ब प्रतिष्ठा साधने, यजूँ परम सुख नीव।।

ॐ ह्रीं श्री यागमण्डले मुख्यार्चिततृतीयवलयोन्मुद्रितऋषभादि-वीरान्तेभ्यो वर्तमानचतुर्विंशतिजिनेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(४)

भविष्यकाल में होनेवाले २४ तीर्थंकरों के लिए अर्घ्य

(चौपई १५ मात्रा)

महापद्म जिन भावीनाथ, श्रेणिक जीव जगत विख्यात।
लक्ष्मी चञ्चल लिपटी आन, तव चरणा पूजूँ भगवान।।१।।

ॐ ह्रीं श्री महापद्मजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६६।।

देव चतुर्विध पूजे पाय, माथ नाय सुरप्रभ जिनराय।
मैं सुमरण करके हरषाय, पूजूँ हर्ष न अङ्ग समाय।।२।।

ॐ ह्रीं श्री सुरप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६७।।

सुप्रभ जिनके वंदू पाय, सेवकजन सुखसार लहाय।
करुणाधारी धन दातार, जो अविनाशी जिय सुखकार।।३।।

ॐ ह्रीं श्री सुप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६८।।

मोक्ष राज्य देवे नहिं कोय, स्वयं आत्मबल लेवें सोय।
देव स्वयंप्रभ चरण नमाय, पूजूँ मन-वच ध्यान लगाय।।४।।

ॐ ह्रीं श्री स्वयंप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।६९।।

मन-वच-काय गुप्ति धरतार, तीव्र शस्त्र अघ मारणहार।
सर्वायुध जिन साम्य प्रचार, पूजत जग मङ्गल करतार।।५।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वायुधजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७०।।

कर्म शत्रु जीतन बलवान, श्री जयदेव परम सुखखान।
पूजत मिथ्यातम विघटाय, तत्त्व कुतत्त्व प्रकट दर्शाय।।६।।

ॐ ह्रीं श्री जयदेवजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७१।।

आत्मप्रभाव उदय जिन भयो, उदयप्रभ जिन तातैं थयो।
पूजत उदय पुण्य का होय, पापबन्ध सब डालें खोय।।७।।

ॐ ह्रीं श्री उदयप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७२।।

प्रभा मनीशा बुद्धिप्रकाश, प्रभादेव जिन छूटी आश।
पूजत प्रभा ज्ञान उपजाय, संशयतिमिर सबै हट जाय।।८।।

ॐ ह्रीं श्री प्रभादेवजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७३।।

भव्यभक्ति जिनराज कराय, सफल काल तिनका हो जाय।
देव उदंक पूज जो करैं, मनुषदेह अपनी वर करें।।९।।

ॐ ह्रीं श्री उदङ्कदेवजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७४।।

सुरविद्याधर प्रश्न कराय, उत्तर देत भरम टल जाय।
प्रश्नकीर्ति जिन यश के धार, पूजत कर्मकलंक निवार।।१०।।

ॐ ह्रीं श्री प्रश्नकीर्तिजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७५।।

पापदलन तें जय को पाय, निर्मल यश जग में प्रकटाय।
गणधरादि नित वन्दन करें, पूजत पापकर्म सब हरैं।।११।।

ॐ ह्रीं श्री जयकीर्तिजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७६।।

बुद्धिपूर्ण जिन बन्दूँ पाय, केवलज्ञान ऋद्धि प्रकटाय।
चरण पवित्र करण सुखदाय, पूजत भवबाधा नश जाय।।१२।।

ॐ ह्रीं श्री पूर्णबुद्धिजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७७।।

हैं कषाय जग में दुःखकार, आत्मधर्म के नाशनहार।
निःकषाय होंगे जिनराज, तातें पूजूँ मङ्गल काज।।१३।।

ॐ ह्रीं श्री निःकषायजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७८।।

कर्मरूप मल नाशनहार, आत्म शुद्ध कर्ता सुखकार।
विमलप्रभ जिन पूजूँ आय, जासे मन विशुद्ध हो जाय।।१४।।

ॐ ह्रीं श्री विमलप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।७९।।

दीप्तवन्त गुण धारण हार, बहुलप्रभ पूजों हितकार।
आतमगुण जासैं प्रगटाय, मोहतिमिर क्षण में विनशाय।।१५।।

ॐ ह्रीं श्री बहुलप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८०।।

जल नभ रत्न विमल कहवाय, सो अभूत व्यवहार वशाय।
भावकर्म अठकर्म महान, हत निर्मल जिन पूजूँ जान।।१६।।

ॐ ह्रीं श्री निर्मलजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८१।।

मन-वच-काय गुप्ति धरतार, चित्रगुप्ति जिन हैं अविकार।
पूजूँ पद तिन भाव लगाय, जासें गुप्तित्रय प्रगटाय।।१७।।

ॐ ह्रीं श्री चित्रगुप्तिजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८२।।

चिरभव भ्रमण करत दु:ख सहा, मरण समाधि न कबहूँ लहा।
गुप्ति समाधिशरण को पाय, जजत समाधि प्रगटहो जाय।।१८।।

ॐ ह्रीं श्री समाधिगुप्तिजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८३।।

अन्य सहाय बिना जिनराज, स्वयं लेय परमातम राज।
नाथ स्वयंभू मग शिवदाय, पूजत बाधा सब टल जाय।।१९।।

ॐ ह्रीं श्री स्वयंभूजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८४।।

मनदर्प के नाशनहार, निज कंदर्प आत्मबल धार।
दर्प अयोग बुद्धि के काज, पूजूँ अर्घ लिए जिनराज।।२०।।

ॐ ह्रीं श्री कंदर्पजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८५।।

गुण अनंत के नाम अनंत, श्री जयनाथ धरम भगवंत।
पूजूँ अष्टद्रव्य कर लाय, विघ्न सकल जासे टल जाय।।२१।।

ॐ ह्रीं श्री जयनाथजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८६।।

पूज्य आत्मगुण धर मलहार, विमलनाथ जग परम उदार।
शील परम पावन के काज, पूजूँ अर्घ लेय जिनराज।।२२।।

ॐ ह्रीं श्री विमलजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८७।।

दिव्यवाद अर्हन्त अपार, दिव्यध्वनि प्रगटावन हार।
आत्मतत्त्व ज्ञाता सिरताज, पूजूँ अर्घ लेय जिनराज।।२३।।

ॐ ह्रीं श्री दिव्यवादजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८८।।

शक्ति अपार आत्म धरतार, प्रगट करें जिनयोग संभार।
वीर्य अनन्तनाथ को ध्याय, नतमस्तक पूजूँ हरषाय।।२४।।

ॐ ह्रीं श्री अनंतवीर्यजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।८९।।

(दोहा)

तीर्थराज चौबीस जिन, भावी भव हरतार।
बिम्ब प्रतिष्ठा कार्य में, पूजूँ विघ्न निवार।।

ॐ ह्रीं श्री बिम्बप्रतिष्ठोद्यापने मुख्यपूजार्हचतुर्थवलयोन्मुद्रितानागतचतुर्विंशतिमहापद्माद्यनंतवीर्यान्तेभ्यो जिनेभ्य: पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

५

ढाई द्वीप के पाँच विदेह क्षेत्र में विद्यमान बीस तीर्थंकरों के लिए अर्घ्य

(स्रग्विणी)

मोक्षनगरी पति हंस राजा सुतं, पुण्डरीका पुरी राजते दु:खहतम्।
सीमंधर जिना पूजते दु:खहना, फेर होवे न या जगत में आवना।।१।।

ॐ ह्रीं श्री सीमन्धरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९०।।

धर्मद्वय वस्तुद्वय नय–प्रमाणद्वयं, नाथ जुगमन्धरं कथितं व्रतद्वयं।
भूपश्री रुह सुतं ज्ञानकेवलगतं, पूजिये भक्ति से कर्मशत्रु हतं।।२।।

ॐ ह्रीं श्री जुगमन्धरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९१।।

भूप सुग्रीव विजया से जाए प्रभू, एण चिह्नं धरे जानते तीन भू।
स्वच्छ सीमापुरी राजते बाहुजिन, पूजिये साधु को रागरुषदोषबिन।।३।।

ॐ ह्रीं श्री बाहुजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९२।।

वंशनभ निर्मलं सूर्य सम राजते, कीर्तिमय बन्ध बिन क्षेत्र शुभ शोभते।
मात सुन्दर सुनन्दा सु भवभयहतं, पूजते बाहु शुभ भवभय निर्गतं।।४।।

ॐ ह्रीं श्री सुबाहुजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९३।।

जन्म अल्कापुरी देवसेनात्मजं, पुण्यमय जन्मए नाथ सञ्जातकं।
पूजिये भावसे द्रव्य आठों लिये, और रस त्यागकर आत्मरस को पिये।।५।।

ॐ ह्रीं श्री संजातकजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९४।।

जन्मपुर मङ्गला चन्द्र चिह्नं धरे, आप से आप ही भव उदधि उद्धरे।
प्रभस्वयं पूजते विघ्न सारे टरे, होय मङ्गल महा कर्मशत्रू डरे।।६।।

ॐ ह्रीं श्री स्वयंप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९५।।

वीरसेना सुमाता सुसीमापुरी, देवदेवी परमभक्ति उर में धरी।
देव ऋषभाननं आननं सार है, देखते पूजते भव्य उद्धार है।।७।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभाननजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९६।।

वीर्य का पार ना ज्ञान का पार ना, सुक्ख का पार ना ध्यान का पार ना।
आप में राजते शान्तमय छाजते, अन्तबिन वीर्य को पूज अघ भाजते।।८।।

ॐ ह्रीं श्री अनन्तवीर्यजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९७।।

अंकवृष्टि धारते धर्मवृष्टी करें, भाव सन्तापहर ज्ञानसृष्टी करें।
नाथ सूरिप्रभं पूजते दुखहनं, मुक्तिनारी वरं पादुपे निजधनं।।९।।

ॐ ह्रीं श्री सूरिप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९८।।

पुण्डरं पुरवरं मात विजया जने, वीर्य राजा पिता ज्ञानधारी तने।
जुग्मचरणं भजे ध्यान इकतान हो, जिनविशालप्रभ पुज अघहान हो।।१०।।

ॐ ह्रीं श्री विशालप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।९९।।

वज्रधर जिनवरं पद्मरथ के सुतं, शंखचिह्नं धरे मानरुषभय गतं।
मात सरसुति बड़ी इन्द्र सम्मानिता, पूजते जास को पाप सब भाजता।।११।।

ॐ ह्रीं श्री वज्रधरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१००।।

चन्द्र आनन जिनं चन्द्र को जयकरं, कर्म विध्वंसकं साधुजन शमकरं।
मात करुणावती नम्र पुण्ड्रीकिनी, पूजते मोह की राजधानी छिनी।।१२।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्राननजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०१।।

श्रीमती रेणुका मात है जास की, पद्मचिह्नं धरे मोह को मात दी।
चन्द्रबाहुजिनं ज्ञानलक्ष्मी धरं, पूजते जास के मुक्तिलक्ष्मी वरं।।१३।।

ॐ ह्रीं श्री चन्द्रबाहुजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०२।।

नाथ निज आत्मबल मुक्तिपथ पगदिया, चन्द्रमा चिह्नधर मोहतम हर लिया।
बल महाभूपती हैं पिता जास के, गमभुजं नाथ पूजें न भव में छके।।१४।।

ॐ ह्रीं श्री भुजङ्गमजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०३।।

मात ज्वालासती सेन गल भूपती, पुत्र ईश्वर जने पूजते सुरपती।
स्वच्छ सीमानगर धर्म विस्तार कर, पूजते ही प्रगट बोधिमय भास्कर।।१५।।

ॐ ह्रीं श्री ईश्वरजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०४।।

नाथ नेमिप्रभं नेमि हैं धर्मरथ, सूर्यचिह्नं धरे चालते मुक्तिपथ।
अष्ट द्रव्यों लियें पूजते अघ हने, ज्ञान वैराग्य से बोधि पावें घने।।१६।।

ॐ ह्रीं श्री नेमिप्रभजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०५।।

वीरसेना सुतं कर्मसेना हतं, सेनशूरं जिनं इन्द्र से वन्दितं।
पुण्डरीकं नगर भूमिपालक नृपं, हैं पिता ज्ञानसूरा करूँ मैं जपं।।१७।।

ॐ ह्रीं श्री वीरसेनाजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०६।।

नगर विजया तने देव राजा पती, अर उमामात के पुत्र संशय हती।
जिन महाभद्र को पूजिये भद्रकर, सर्व मङ्गल करै मोह सन्ताप हर।।१८।।

ॐ ह्रीं श्री महाभद्रजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०७।।

है सुसीमा नगर, भूप भूति तवं, मात गङ्गा जने द्योतने त्रिभुवनं।
लाक्षणं स्वस्तिकं जिनयशोदेव को, पूजिये वन्दिये मुक्ति गुरुदेव को।।१९।।

ॐ ह्रीं श्री देवयशोजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०८।।

पद्मचिह्नं धरे मोह को वश करे, पुत्र राजा कनक क्रोध को क्षय करे।
ध्यान मण्डित महावीर्य अजितं धरे, पूजते जास को कर्मबन्धन टरे।।२०।।

ॐ ह्रीं श्री अजितवीर्यजिनाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१०९।।

(दोहा)

राजत बीस विदेह जिन, कबहिं साठ शत होय।
पूजत वन्दत जास को, विघ्न सकल क्षय होय।।

ॐ ह्रीं श्री अस्मिन् बिम्बप्रतिष्ठामहोत्सवे मुख्यपूजार्हपञ्चमवलयोन्मुद्रित-विदेहक्षेत्रे सुषष्ठिसहितैकशतजिनेशसंयुक्तनित्यविहरमाणविंशतिजिनेभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मङ्गल प्रभात

है ज्ञान सूर्य का उदय जहाँ, मङ्गल प्रभात कहलाता है।
मिथ्यात्व महातम हो विनष्ट, सम्यक्त्व कमल विकसाता है।।
वस्तु का रूप यथार्थ दिखे, नहिं इष्ट-अनिष्ट दिखाता है।
हैभिन्न चतुष्टयवान द्रव्य, पर लक्ष्य नहीं हो पाता है।।
अतएव विकारी भाव रहित, निज सुख अनुभूति होती है।
फिर स्वयं तृप्त उस ज्ञानी के, इच्छा पिशाचनी भगती है।।
तत्क्षण संवरमय भावों से, नवबंध पद्धति रुकती है।
झड़ते हैं स्वयं कर्म बंधन, शिवरमणी उसको वरती है।।

६

छत्तीस गुणयुक्त आचार्य परमेष्ठी के लिए अर्घ्य

(भुजंगप्रयात)

हटाये अनन्तानुबंधी कषायें,
करण से हैं मिथ्यात तीनों खपाये।
अतीचार पच्चीस को हैं बचाये,
सु आचार दर्शन परम गुरु धराये ।।१।।

ॐ ह्रीं श्री दर्शनाचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।११०।।

न संशय विपर्यय न है मोह कोई,
परम ज्ञान निर्मल धरे तत्त्व जोई।
स्व-पर ज्ञान से भेदविज्ञान धारे,
सु आचार ज्ञानं स्व-अनुभव सम्हारे ।।२।।

ॐ ह्रीं श्री ज्ञानाचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१११।।

सुचारित्र व्यवहार निश्चय सम्हारे,
अहिंसादि पाँचों व्रत शुद्ध धारे।
अचल आत्म में शुद्धता सार पाए,
जजूँ पद गुरु के दरब अष्ट लाए ।।३।।

ॐ ह्रीं श्री चारित्राचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।११२।।

तपें द्वादशों तप अचल ज्ञानधारी,
सहें गुरु परीषह सुसमता प्रचारी।
परम आत्मरस पीवते आप ही तें,
भजूँ मैं गुरु छूट जाऊँ भवों तें ।।४।।

ॐ ह्रीं श्री तपाचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।११३।।

परम ध्यान में लीनता आप कीनी,
न हटते कभी घोर उपसर्ग दीनी।
सु आतमबली वीर्य की ढाल धारी,
परम गुरु जजूँ अष्ट द्रव्यं सम्हारी ।।५।।

ॐ ह्रीं श्री वीर्याचारसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।११४।।

तप: अनशनं जो तपें धीर-वीरा,
तजें चारविध भोजनं शक्ति धीरा।
कभी मास पक्षं कभी चार त्रय दो,
सु उपवास करते जजूँ आप गुण दो ।।६।।

ॐ ह्रीं श्री अनशनतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।११५।।

सु ऊनोदरी तप महास्वच्छकारी,
करे नींद आलस्य का नहिं प्रचारी।
सदा ध्यान की सावधानी सम्हारे,
जजूँ मैं गुरु को करम घन विदारैं ।।७।।

ॐ ह्रीं श्री अवमौदर्यतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।११६।।

कभी भोजना हेतु पुर में पधारें,
तभी दृढप्रतिज्ञा गुरु आप धारें।
यही वृत्ति-परिसंख्यान तप आशहारी,
भजूँ जिन गुरु जो कि धारें विचारी ।।८।।

ॐ ह्रीं श्री वृत्तिपरिसंख्यानतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा ।।११७।।

कभी छह रसों को कभी चार त्रय दो,
तजें राग वर्जन गुरु लोभजित हो।
धरें लक्ष्य आतम सुधा सार पीते,
जजूँ मैं गुरु को सभी दोष बीते ।।९।।

ॐ ह्रीं श्री रसपरित्यागतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।११८।।

कभी पर्वतों पर गुहा वन मशाने,
धरें ध्यान एकांत में एकताने।

धरें आसना दृढ अचल शांतिधारी,
जजूँ मैं गुरु को भरम तापहारी।।१०।।
ॐ ह्रीं श्री विविक्तशय्यासनतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।।११९।।

ऋतु उष्ण पर्वत शरद्रितु नदी तट,
अधोवृक्ष बरसात में याकि चउपथ।
करें योग अनुपम सहें कष्ट भारी,
जजूँ मैं गुरु को सुसम दम पुकारी।।११।।
ॐ ह्रीं श्री कायक्लेशतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२०।।

करें दोष आलोचना गुरु सकाशे,
भरैं दण्ड रुचिसों गुरु सो प्रकाशे।
सुतप अन्तरङ्ग प्रथम शुद्ध कारी,
जजूँ मैं गुरु को स्व आतम विहारी।।१२।।
ॐ ह्रीं श्री प्रायश्चित्ततपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२१।।

दरश ज्ञान चारित्र आदि गुणों में,
परम पदमयी पाँच परमेष्ठियों में।
विनय तप धरें शल्यत्रय को निवारें,
हमें रक्ष श्री गुरु जजूँ अर्घ धारें।।१३।।
ॐ ह्रीं श्री विनयतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२२।।

यती संघ दस विध यदि रोग धारे,
तथा खेद पीड़ित मुनी हों बिचारे।
करें सेव उनकी दया चित्त ठाने,
जजूँ मैं गुरु को भरम ताप हाने।।१४।।
ॐ ह्रीं श्री वैय्यावृत्तितपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२३।।

करें बोध निजतत्त्व परतत्त्व रुचि से,
प्रकाशें परमतत्त्व जग को स्वमति से।
यही तप अमोलक करम को खिपावे,
जजूँ मैं गुरु को कुबोधं नशावे।।१५।।
ॐ ह्रीं श्री स्वाध्यायतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२४।।

अपावन विनाशीक निज देह लखके,
तजें सब ममत्व सुधा आत्म चखके।
करें तप सु व्युत्सर्ग सन्तापहारी,
जजूँ मैं गुरु को परम पद विहारी।।१६।।
ॐ ह्रीं श्री व्युत्सर्गतपोऽभियुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२५।।

जु है आर्त-रौद्र कुध्यानं कुज्ञानं,
उन्हें नहिं धरें ध्यान धर्म प्रमाणं।
करें शुद्ध उपयोग कर्मप्रहारी,
जजूँ मैं गुरु को स्वानुभव सम्हारी।।१७।।
ॐ ह्रीं श्री ध्यानावलम्बननिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२६।।

करैं कोय बाधा वचन दुष्ट बोले,
क्षमा ढाल से क्रोध मन में न कुछ ले।
धरैं शक्ति अनुपम तदपि साम्यधारी,
जजूँ मैं गुरु को स्वधर्मप्रचारी।।१८।।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमक्षमापरमधर्मधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२७।।

धरै मद न तप ज्ञान आदी स्व मन में,
नरम चित्त से ध्यान धारें सु वन में।
परम मार्दवं धर्म सम्यक् प्रचारी,
जजूँ मैं गुरु को सुधा-ज्ञानधारी।।१९।।
ॐ ह्रीं श्री उत्तममार्दवधर्मधुरन्धराचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२८।।

परम निष्कपट चित्त भूमी सम्हारे,
लता धर्म बंधन करें शान्ति धारें।
करम अष्ट हन मोक्ष फल को विचारें,
जजूँ मैं गुरु को श्रुत ज्ञान धारें।।२०।।
ॐ ह्रीं श्री उत्तमआर्जवधर्मपरिपुष्टाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१२९।।

न रुष लोभ भय हास्य नहिं चित्त धारें,
वचन सत्य आगम प्रमाणे उचारें।
परम हितमित मिष्ट वाणी प्रचारी,
जजूँ मैं गुरु को सु समता विहारी।।२१।।

ॐ ह्रीं श्री सत्यधर्मप्रतिष्ठिताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३०।।

न है लोभ राक्षस न तृष्णा पिशाची,
परम शौच धारें सदा जो अजाची।
करैं आत्म शोभा स्व संतोष धारी,
जजूँ मैं गुरु को भवातापहारी।।२२।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमशौचधर्मधारकाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३१।।

न संयम विराधें करैं प्राणिरक्षा,
दमैं इन्द्रियों को मिटावैं कु-इच्छा।
निजानंद राचें खरे संयमी हो,
जजूँ मैं गुरु को यमी अरु दमी हो।।२३।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमद्विविधसंयमपात्राचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३२।।

तपो भूषणं धारते यदि विरागी,
परमधाम सेवी गुणग्राम त्यागी।
करें सेव तिनकी सु इन्द्रादि देवा,
जजूँ मैं चरण को लहूँ ज्ञान मेवा।।२४।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमतपोऽतिशयधर्मसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।।१३३।।

अभयदान देते परम ज्ञान दाता,
सुधर्मोषधी बांटते आत्म त्राता।
परम त्याग धर्मी परम तत्त्व मर्मी,
जजूँ मैं गुरु को शमूँ कर्म गर्मी।।२५।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमत्यागधर्मप्रवीणाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३४।।

न परवस्तु मेरी न संबंध मेरा,
अलख गुण निरञ्जन शमी आत्म मेरा।
यही भाव अनुपम प्रकाशे सुध्यानं,
जजूँ मैं गुरु को लहूँ शुद्ध ज्ञानं।।२६।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमाकिंचन्यधर्मसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३५।।

परम शील धारी निजाराम चारी,
न रंभा सु नारी करैं मन विकारी।
परम ब्रह्मचर्या चलत एक तानं,
जजूँ मैं गुरु को सभी पापहानं।।२७।।

ॐ ह्रीं श्री उत्तमब्रह्मचर्यधर्ममहनीयाचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३६।।

मनः गुप्ति धारी विकल्प प्रहारी,
परम शुद्ध उपयोग में नित विहारी।
निजानन्द सेवी परम धाम बेवी,
जजूँ मैं गुरु को धरम ध्यान टेवी।।२८।।

ॐ ह्रीं श्री मनोगुप्तिसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३७।।

वचन गुप्तिधारी महासौख्यकारी,
करें धर्म उपदेश संशय निवारी।
सुधा सार पीते धरम ध्यान धारी,
जजूँ मैं गुरु को सदा निर्विकारी।।२९।।

ॐ ह्रीं श्री वचनगुप्तिसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३८।।

अचल ध्यानधारी खड़ी मूर्ति प्यारी,
खुजावें मृगी अंग अपना सम्हारी।
धरी काय गुप्ति निजानन्द धारी,
जजूँ मैं गुरु को सु समता प्रचारी।।३०।।

ॐ ह्रीं श्री कायगुप्तिसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३९।।

परम साम्यभावं धरे जो त्रिकालं,
भरम राग-द्वेषं मदं मोह टालं।
पिवैं ज्ञान रस शांति समता प्रचारी,
जजूँ मैं गुरु को निजानन्द धारी।।३१।।

ॐ ह्रीं श्री सामायिकावश्यककर्मधारि-आचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।।१४०।।

करैं वन्दना सिद्ध अरहन्त देवा,
मगन तिन गुणों में रहें सार लेवा।
उन्हीं-सा निजातम जु अपना विचारें,
जजूँ मैं गुरु को धरम ध्यान धारें।।३२।।

ॐ ह्रीं श्री वन्दनावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४१।।

करें संस्तवं सिद्ध अरहंत देवा,
करें गान गुण का लहें ज्ञान मेवा।
करें निर्मलं भाव को पाप नाशें,
जजूँ मैं गुरु को सु समता प्रकाशें।।३३।।

ॐ ह्रीं श्री स्तवनावश्यकसंयुक्ताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४२।।

लगे दोष तन मन वचन के फिरन से,
कहें गुरु समीपे परम शुद्ध मन से।
करें प्रतिक्रमण अर लहें दण्ड सुख से,
जजूँ मैं गुरु को छुटूँ सर्व दुःख से।।३४।।

ॐ ह्रीं श्री प्रतिक्रमणावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४३।।

करें भावना आत्म की ज्ञान ध्यावें,
पढ़े शास्त्र रुचि से सुबोधं बढावें।
यही ज्ञान सेवा करम मल छुड़ावे,
जजूँ मैं गुरु को अबोधं हटावे।।३५।।

ॐ ह्रीं श्री स्वाध्यायावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४४।।

तजें सब ममत्वं शरीरादि सेती,
खड़े आत्म ध्यावे छुटे कर्म रेती।
लहैं ज्ञान भेदं सु व्युत्सर्ग धारें,
जजूँ मैं गुरु को स्व-अनुभव विचारें।।३६।।

ॐ ह्रीं श्री व्युत्सर्गावश्यकनिरताचार्यपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४५।।

गुण अनन्त धारी गुरु, शिवमग चालनहार।
संघ सकल रक्षा करे, यह विघ्न हरतार।।

ॐ ह्रीं श्री अस्मिन् प्रतिष्ठोद्यापने पूजार्हमुख्यषष्टवलयोन्मुद्रिताचार्यपरमेष्ठिभ्यो पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो मंगल चार जगत में हैं, हम गीत उन्हीं के गाते हैं।
मंगलमय श्री जिन-चरणों में, हम सादर शीष झुकाते हैं।।टेक।।
जहाँ राग-द्वेष की गंध नहीं, बस अपने से ही नाता है।
जहाँ दर्शन-ज्ञान-अनन्तवीर्य-सुख का सागर लहराता है।।
जो दोष अठारह रहित हुए, हम मस्तक उन्हें नवाते हैं।
मंगलमय श्री जिन-चरणों में हम सादर शीष झुकाते हैं।।१।।
जो द्रव्यभाव-नोकर्म रहित नित सिद्धालय के वासी हैं।
आतम को प्रतिबिम्बित करते जो अजर-अमर अविनाशी हैं।।
जो हम सबके आदर्श सदा हम उनको ही नित ध्याते हैं।
मंगलमय श्री जिन-चरणों में हम सादर शीश झुकाते हैं।।२।।
जो परम दिगम्बर वनवासी गुरु रत्नत्रय के धारी हैं।
आरम्भ-परिग्रह के त्यागी जो निज चैतन्य विहारी हैं।।
चलते-फिरते सिद्धों से गुरु-चरणों में शीश झुकाते हैं।
मंगलमय श्री जिन-चरणों में हम सादर शीश झुकाते हैं।।३।।
प्राणों से प्यारा धर्म हमें केवली भगवन का कहा हुआ।
चैतन्यराज की महिमामय यह वीतराग रस भरा हुआ।।
इसको धारण करने वाले भव-सागर से तिर जाते हैं।
मंगलमय श्री जिन-चरणों में हम सादर शीश झुकाते हैं।।४।।

(७)

पच्चीस गुणयुक्त उपाध्याय परमेष्ठी के लिए अर्घ्य

(द्रुतविलम्बित)

प्रथम अङ्ग कथत आचार को, सहस्र अष्टादश पद धारतो।
पढत साधु सु अन्य पढावते, जजूँ पाठक को अति चाव से।।१।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टादशसहस्रपदसंयुक्ताचाराङ्गधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४६।।

द्वितीय सूत्रकृतांग विचारते, स्व पर तत्त्व सु निश्चय लावते।
पद छत्तीस हजार विशाल हैं, जजूँ पाठक शिष्य दयालु हैं।।२।।

ॐ ह्रीं श्री षट्त्रिंशत्सहस्रपदसंयुक्तसूत्रकृतांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४७।।

तृतीय अङ्ग स्थान छः द्रव्य को, पद हजार बियालिस धारतो।
एक द्वै त्रय भेद बखानता, जजूँ पाठक तत्त्व पिछानता।।३।।

ॐ ह्रीं श्री द्विचत्वारिंशत्पदसंयुक्तस्थानांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।।१४८।।

द्रव्य क्षेत्र समय अर भाव से, साम्य झलकावे विस्तार से।
लख सहस्र चौंसठ पद धारता, जजूँ पाठक तत्त्व विचारता।।४।।

ॐ ह्रीं श्री एकलक्षषष्टिपदन्याससहस्रसमवायांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४९।।

प्रश्न साठ हजार बखानता, सहस अठविंशति पद धारता।
द्विलख और विशद परकाशता, जजूँ पाठक ध्यान सम्हारता।।५।।

ॐ ह्रीं श्री द्विलक्षाष्टाविंशतिसहस्रपदरंजितव्याख्याप्रज्ञप्त्यंगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५०।।

धर्मचर्चा प्रश्नोत्तर करे, पाँच लाख सहस छप्पन धरे।
पद सु मध्यम ज्ञान बढावता, जजूँ पाठक आतम ध्यावता।।६।।

ॐ ह्रीं श्री पंचलक्षषट्पंचाशत्सहस्रपदसङ्गतज्ञातृधर्मकथांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५१।।

व्रत सुशील क्रिया गुण श्रावका, पद सुलक्षण इग्यारह धारका।
सहस सप्तति और मिलाइये, जजूँ पाठक ज्ञान बढाइये।।७।।

ॐ ह्रीं श्री एकादशलक्षसप्ततिसहस्रपदशोभितोपासकाध्ययनांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५२।।

दश यती उपसर्ग सहन करे, समय तीर्थंकर शिवतिय वरे।
सहस अट्ठाइस लख तेइसा, पद जजूँ पाठक जिन सारिसा।।८।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिविंशतिलक्षअष्टाविंशतिसहस्रपदशोभितांत:दशाङ्गधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५३।।

दश यती उपसर्ग सहन करे, समय तीर्थ अनुसार अवतरे।
सहस चव चालिस लख बानवे, पद धरें पाठक बहु ज्ञान दे।।९।।

ॐ ह्रीं श्री द्विनवतिलक्षचतुर्चत्वारिंशत्पदशोभितानुत्तरोपपादकांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५४।।

प्रश्नव्याकरणांग महान ये, सहस्र सोलह लाख तिरानवे।
पद धरे सुख दु:ख विचारता, जजूँ पाठक धर्म प्रचारता।।१०।।

ॐ ह्रीं श्री त्रिनवतिलक्षषोडशसहस्रपदशोभितप्रश्नव्याकरणांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५५।।

सहस चवरसि कोटि एक पद, धरत सूत्रविपाक सुज्ञान पद।
करम-बन्ध उदय सत्वादिक कथं, जजूँ पाठक जीते कामरथं।।११।।

ॐ ह्रीं श्री एककोटिचतुरशीतिसहस्रपदशोभितविपाकसूत्रांगधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५६।।

कथत षट्द्रव्यों की सारता, एककोटि पद को धारता।
पूर्व है उत्पाद सु जानकर, जजूँ पाठक निज रुचि ठान कर।।१२।।

ॐ ह्रीं श्री उत्पादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५६।।

सुनय दुर्नय आदि प्रमाणता, नवति छह कोटि पद धारता।
पूर्व अग्रायण विस्तार है, जजूँ पाठक भवदधितार है।।१३।।

ॐ ह्रीं श्री अग्रायणीपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५८।।

द्रव्य गुण पर्यय बल कथत है, लाख सत्तर पद यह धरत है।
पूर्व है अनुवाद सु वीर्य का, जजूँ पाठक यति पद धारका।।१४।।
ॐ ह्रीं श्री वीर्यानुवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१५९।।

नास्ति अस्ति प्रवाद सुअंग है, साठ लख मध्यम पद संग है।
सप्तभंग कथत जिनमार्ग कर, जजूँ पाठक मोह निवारकर।।१५।।
ॐ ह्रीं श्री अस्तिनास्तिप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६०।।

ज्ञान आठ सुभेद प्रकाशता, एक कम कोटी पद धारता।
सतत ज्ञानप्रवाद विचारता, जजूँ पाठक संशय टारता।।१६।।
ॐ ह्रीं श्री आत्मज्ञानप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६१।।

कथत सत्य-असत्य सुभाव को, कोटि अरु पद धारी पूर्व को।
पढत सत्यप्रवाद जिनागमा, जजूँ पाठक ज्ञाता आगमा।।१७।।
ॐ ह्रीं श्री सत्यप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६२।।

सकल जीव स्वरूप विचारता, कोटि पद छब्बीस सुधारता।
पढत सत्यप्रवाद जिनागमा, जजूँ पाठक ज्ञाता आगमा।।१८।।
ॐ ह्रीं श्री आत्मप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६३।।

कर्मबंध विधान बखानता, कोटि पद अस्सी लाख धारता।
पठत कर्म प्रवाद सुध्यान से, जजूँ पाठक शुद्ध विधान से।।१९।।
ॐ ह्रीं श्री कर्मप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६४।।

नय प्रमाण सुन्यास विचारता, लाख पद चौरासी धारता।
पूर्व प्रत्याहार जु नाम है, जजूँ पाठक रमताराम है।।२०।।
ॐ ह्रीं श्री प्रत्याहारपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६५।।

मंत्र विद्याविधि को साधता, लक्ष दशकोटि पद धारता।
पूर्व है अनुवाद सुज्ञान का, जजूँ पाठक सन्मतिदायका।।२१।।
ॐ ह्रीं श्री विद्यानुवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६६।।

पुरुष त्रेशठ आदि महान का, कथन वृत्त सकल कल्याण का।
कोटि छब्बीस पद को धारता, जजूँ पाठक अघ सब टारता।।२२।।
ॐ ह्रीं श्री कल्याणवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६७।।

कथत भेद सुवैद्यक शास्त्र का, कोटि तेरह पद सुधारका।
पूर्व नाम सुप्राण प्रवाद है, जजूँ पाठक सुरनतपाद है।।२३।।
ॐ ह्रीं श्री प्राणप्रवादपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६८।।

कथत छंदकला संगीत को, कोटि नव पद मध्यम रीत को।
पूर्व नाम सु क्रिया विशाल है, जजूँ पाठक दीनदयाल है।।२४।।
ॐ ह्रीं श्री क्रियाविशालपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१६९।।

तीन लोक विधान विचारता, कोटि अर्द्ध सु द्वादश धारता।
पूर्व बिन्दु त्रिलोक विशाल है, जजूँ पाठक करत निहाल है।।२५।।
ॐ ह्रीं श्री त्रैलोक्यबिन्दुपूर्वधारकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७०।।

अंग इकादश पूर्व दश, चार-सुज्ञायक साध।
जजूँ गुरु के चरण दो, यजन सु अव्याबाध।।

ॐ ह्रीं श्री अस्मिन् बिम्बप्रतिष्ठामहोत्सवविधाने मुख्यपूजार्हसप्तमवलयोन्मुद्रित-द्वादशांगश्रुतदेवताभ्यस्तदाराधकोपाध्यायपरमेष्ठिभ्यश्च पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धन्य-धन्य है घड़ी आज की...

धन्य-धन्य है घड़ी आज की जिनधुनि श्रवण परी।
तत्त्व प्रतीत भई अब मेरे मिथ्यादृष्टि टरी।।टेक।।
जड़ तें भिन्न लखी चिन्मूरत चेतन स्वरस भरी।
अहंकार ममकार बुद्धि प्रति पर में सब परिहरी।।1।।
पाप-पुण्य विधि बन्ध अवस्था भासी अति दुःख भर।
वीतराग-विज्ञान भावमय परिणति अति विस्तरी।।2।।
चाह-दाह विनसी बरसी पुनि समता मेघ झरी।
बाढ़ी प्रीति निराकुल पद सों भागचंद हमरी।।3।।

(८)

अट्ठाईस गुणयुक्त साधुपरमेष्ठी के लिए अर्घ्य

(नाराच)

तजे सु राग-द्वेष भाव शुद्धभाव धारते,
परम स्वरूप आपका समाधि से विचारते।
करैं दया सुप्राणि जंतु चर-अचर बचावते,
जजों यति महान प्राणिरक्षव्रत निभावते।।१।।

ॐ ह्रीं श्री अहिंसामहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१७१।।

असत्य सर्व त्याग वाक् शुद्धता प्रचारते,
जिनागमानुकूल तत्त्व सत्य सत्य धारते।
अनेक नय प्रकार के वचन विरोध टारते,
जजों यति महान सत्यव्रत सदा सम्हारते।।२।।

ॐ ह्रीं श्री अनृतपरित्यागमहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा ।।१७२।।

अचौर्यव्रत महान धार शौचभाव भावते,
जजों यती सदा सुज्ञान ध्यान मन रमावते।
सुतृप्त हैं महान आत्मजन्य सौख्य पावते,
जजों यती सदा सु ज्ञान ध्यान मन रमावते।।३।।

ॐ ह्रीं श्री अचौर्यमहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१७३।।

सु ब्रह्मचर्य व्रत महान धार शील पालते,
न काष्ठमय कलत्र देव भामिनी विचारते।
मनुष्यणी सु पशुतियाँ कभी न मन रमावते,
जाजें यती न स्वप्नमाहिं शील को गमावते।।४।।

ॐ ह्रीं श्री ब्रह्मचर्यमहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१७४।।

न राग द्वेष आदि अंतरंग संग धारते,
न क्षेत्र आदि बाह्य संग रंच भी सम्हारते।
धरैं सु साम्यभाव आप-पर पृथक् विचारते,
जजों यती ममत्व हीन साम्यता प्रचारते।।५।।

ॐ ह्रीं श्री परिग्रहत्यागमहाव्रतधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१७५।।

सु चार हाथ भूमि अग्र देख पाय धारते,
न जीवघात होय यत्न सार मन विचारते।
सु चारमास वृष्टिकाल एक थल विराजते,
जजूँ यती सु सन्मती जो ईर्या सम्हारते।।६।।

ॐ ह्रीं श्री ईर्यासमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१७६।।

न क्रोध लोभ हास्य भय कराय साम्य धारते,
वचन सुमिष्ट इष्ट मित प्रमाण ही निवारते।
यथार्थ शास्त्र ज्ञायका सुधा सु आत्म पीवते,
जजूँ यतीश द्रव्य आठ तत्त्व माहिं जीवते।।७।।

ॐ ह्रीं श्री भाषासमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१७७।।

महान दोष छ्यालिसों सु टार ग्रास लेत हैं,
पड़े जु अन्तराय तुर्त ग्रास त्याग देत है।
मिले जु भोग पुण्य से उसी में सब्र धारते,
जजूँ यतीश काम जीत राग-द्वेष टारते।।८।।

ॐ ह्रीं श्री एषणासमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।।१७८।।

धरें उठाय वस्तु देख शोध खूब लेत हैं,
न जन्तु कोय कष्ट पाय, इस विचार लेत हैं।
अतः सु मोर पिच्छिका सुमार्जिका सुधारते,
जजूँ यती दयानिधान, जीव दुःख टारते।।९।।

ॐ ह्रीं श्री आदाननिक्षेपणसमितिधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा ।।१७९।।

धरैं जु अङ्ग नेत्र नासिकादि मल सु देख के,
न होय जंतु घात थान शुद्धता सुपेख के।
परम दया विचार सार व्युत्सर्ग साधते,
जजूँ यतीश चाह-दाह शांतिपय बुझावते।।१०।।

ॐ ह्रीं श्री व्युत्सर्गसमितिपालकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८०।।

न उष्ण शीत मृदु कठिन गुरु लघू स्पर्शते,
न चीकनेऽरु रूक्ष वस्तु से मिलाप पावते।
न रागद्वेष को करें समान भाव धारते,
जजूँ यती दमे सपर्श ज्ञान भाव सारते।।११।।

ॐ ह्रीं श्री स्पर्शनेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८१।।

न मिष्ट तिक्त लौण कटुक, आत्मस्वाद चाहते,
करत न रागद्वेष शौच भाव को निवाहते।
सु जान के सुभाव पुद्गलादि साम्य धारते,
जजूँ यती सदा जु चाह-दाह को निवारते।।१२।।

ॐ ह्रीं श्री रसनेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८२।।

जगत पदार्थ पुद्गलादि आत्मगुण न त्यागते,
सुगन्ध गन्ध दुःखदाय साधु जहाँ पावते।
न राग-द्वेष धार घ्राण का विषय निवारते,
जजूँ यतीश एकरूप शांतता प्रचारते।।१३।।

ॐ ह्रीं श्री घ्राणेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८३।।

सफेद लाल कृष्ण पीत नील रंग देखते,
स्वरूप या कुरूप देख वस्तुरूप पेखते।
करें न राग-द्वेष साम्यभाव को सम्हारते,
जजूँ यती महान चक्षु राग को निवारते।।१४।।

ॐ ह्रीं श्री चक्षुरिन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८४।।

करे थुती बनाय एक गद्य-पद्य सारते,
कहे असभ्य बात एक क्रूरता प्रसारते।
न रोष-तोष धारते पदार्थ को विचारते,
जजूँ यती महान कर्ण राग-द्वेष टारते।।१५।।

ॐ ह्रीं श्री श्रोत्रेन्द्रियविकारविरतसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८५।।

धरें महान शांतता न राग-द्वेष भावते,
चलें नहीं सुयोग से विराट कष्ट आवते।
तरें समुद्र कर्म को जहाज ध्यान खेवते,
यजूँ यती स्वरूप मांहि बैठ तत्त्व बेवते।।१६।।

ॐ ह्रीं श्री सामायिकावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।।१८६।।

करें त्रिकाल वन्दना सु पूज्य सिद्ध साधु को,
विचार बार-बार आत्म शुद्ध गुण स्वभाव को।
करें जु नाश कर्म जो कि मोक्षमार्ग रोकते,
यजूँ यती महान माथ नाय-नाय ढोकतें।।१७।।

ॐ ह्रीं श्री वन्दनावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८७।।

करें सुगान गुण अपार तीर्थनाथ देवके,
मनपिशाच को विडार स्वात्मसार सेवके।
बनाय शुद्ध भावमाल आत्मकण्ठ डारते,
जजूँ यती महान कर्म आठ चूर डारते।।१८।।

ॐ ह्रीं श्री स्तवनावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८८।।

करें विचार दोष होय नित्य कार्य साधते,
क्षमा कराय सर्व जन्तु जाति कष्ट पावते।
आलोचना सुकृत्य से स्वदोष को मिटावते,
जजूँ यती महान ज्ञान-अम्बु में नहावते।।१९।।

ॐ ह्रीं श्री प्रतिक्रमणावश्यकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१८९।।

रखैं सुबांध मन कपी महान है जु नटखटा,
बनाय सांकलान शास्त्रपाठ में जुटावता।
धरैं स्वभाव शुद्ध नित्य आत्म को रमावते,
जजूँ यती उदय महान ज्ञानसूर्य पावते।।२०।।

ॐ ह्रीं श्री स्वाध्यायावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।।१९०।।

तजैं ममत्व काय का इसे अनित्य जानते,
जु कांचखण्ड मृत्तिका सु पिण्ड सम प्रमाणते,
खड़े बनी गुफा महा स्व-ध्यान सार धारते,
जजूँ यती महान मोह-राग-द्वेष टारते।।२१।।

ॐ ह्रीं श्री कायोत्सर्गावश्यकगुणधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।।१९१।।

करैं शयन सु भूमि में कठोर कंकड़ानि की,
कभी नहीं विचारते, पलंग खाट पालकी।
मुहूर्त एक भी नहीं गमावते कुनींद में,
जजूँ यतीश सोचते सु आत्मतत्त्व नींद में।।२२।।

ॐ ह्रीं श्री भूशयननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९२।।

करैं नहीं नहान सर्व राग देह का हते,
पसेव ग्रीष्म में पड़ें न शीत-अम्बु चाहते।
बनी प्रबल पवित्र और मन्त्र शुद्ध धारते,
जजूँ यतीश शुद्ध पाद कर्म मैल टारते।।२३।।

ॐ ह्रीं श्री अस्नाननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९३।।

करैं नहीं कबूल छाल वस्त्र खण्ड धोवती,
दिगानि वस्त्र धार लाज सङ्ग त्याग रोवती।
बने पवित्र अङ्ग शुद्ध बाल से विचार हैं,
जजूँ यतीश काम जीत शीलखड्ग धार हैं।।२४।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वथावस्त्रत्यागनियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।।१९४।।

करैं सु केशलोंच मुष्टि-मुष्टि धैर्य भावते,
लखाय जन्म जन्तु का स्वकेश ना बढावते।
ममत्व देह से नहीं न शस्त्र से नुचावते,
जजूँ यती स्वतंत्रता विचार चिर रमावते।।२५।।

ॐ ह्रीं श्री कृतकेशलोचननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।।१९५।।

करैं न दन्तवन कभी तजा सिंगार अङ्ग का,
लहें स्व खान-पान एकबार साध्य अङ्ग का।
तथापि दंत कर्णिका महा न ज्योति त्यागती,
जजूँ यतीश शुद्धता अशुद्धता निवारती।।२६।।

ॐ ह्रीं श्री दन्तधोवनवर्जननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।।१९६।।

धरें न चाह भोग रोग के समान जानते,
शरीर रक्ष काज एक बार भुक्ति ठानते।
सकल दिवस सुध्यान शस्त्रपाठ में बितावते,
जजूँ यती अलाभ अन्न लाभ सा निभावते।।२७।।

ॐ ह्रीं श्री एकभुक्तिनियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९७।।

खड़े रहे सुलेय अन्न देहशक्ति देखते,
न होय बल विहार तब मरण समाधि पेखते।
करें सु आत्मध्यान भी खड़े-खड़े पहाड़ पर,
जजूँ यती विराजते निजानुभव चटान पर।।२८।।

ॐ ह्रीं श्री अस्थितभोजननियमधारकसाधुपरमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि. स्वाहा।।१९८।।

(दोहा)

अठविंशति गुण धर यती, शील कवच सरदार।
रत्नत्रय भूषण धरें, टारें कर्म प्रहार।।

ॐ ह्रीं श्री अस्मिन् बिम्बप्रतिष्ठोत्सवे मुख्यपूजार्ह-अष्टमवलयोन्मुद्रितसाधु-परमेष्ठिभ्यस्तन्मूलगुणग्रामेभ्यश्च पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(९)

अड़तालीस* ऋद्धिधारी मुनीश्वरों के लिए अर्घ्य

(दोहा)

लोकालोक प्रकाश कर, केवलज्ञान विशाल।
जो धारें तिन चरण को, पूजूँ नमूँ निज भाल।।१।।

ॐ ह्रीं श्री सकललोकालोकप्रकाशकनिरावरणकैवल्यलब्धिधारकेभ्योऽर्घ्यं।।१९९।।

वक्र सरल पर चित्तगत, मनपर्यय जानेय।
ऋजु विपुलमति भेद धर, पूजूँ साधु सुध्येय।।२।।

ॐ ह्रीं श्री ऋजुमतिविपुलमतिमन:पर्ययधारकेभ्योऽर्घ्यं।।२००।।

देश परम सर्वावधि, क्षेत्र काल मर्याद।
द्रव्य भाव को जानता, धारक पूजूँ साध।।३।।

ॐ ह्रीं श्री अवधिधारकेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०१।।

कोष्ठ धरे बीजानिको, जानत जिम क्रमवार।
तिम जानत ग्रन्थार्थ को, पूजूँ ऋषिगण सार।।४।।

ॐ ह्रीं श्री कोष्ठबुद्धि-ऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०२।।

ग्रन्थ एक पद ग्रह कही, जानत सब पद भाव।
बुद्धि पाद अनुसारि धर, सार जजूँ धर भाव।।५।।

ॐ ह्रीं श्री पादानुसारीबुद्धि-ऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०३।।

एक बीज पद जानके, कोटिक पद जानेय।
बीज बुद्धि धारी मुनी, पूजूँ द्रव्य सुलेय।।६।।

ॐ ह्रीं श्री बीजबुद्धि-ऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०४।।

---

* यद्यपि ऋद्धियाँ ६४ होती हैं, लेकिन यहाँ चारणऋद्धि के ९ भेदों को सामूहिकरूप से २ छन्दों में तथा विक्रियाऋद्धि के११ भेदों को भी २ छन्दों में संग्रहित करने से ४८ कहा गया है।

चक्री सेना नर पशू, नाना शब्द करात।
पृथक्-पृथक् युगपत सुने, पूजूँ यति भय जात।।७।।

ॐ ह्रीं श्री संभिन्नश्रोत्र-ऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०५।।

गिरि सुमेरु रविचन्द्र को, कर पद से छू जात।
शक्ति महत् धारी यती, पूजूँ पाप नशात।।८।।

ॐ ह्रीं श्री दूरस्पर्शनशक्ति-ऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०६।।

दूर क्षेत्र मिष्टान्न फल, स्वाद लेन बल धार।
न वांछा रस लेन की, जजूँ साधु गुणधार।।९।।

ॐ ह्रीं श्री दूरास्वादनशक्ति-ऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०७।।

घ्राणेन्द्रिय मर्याद से, अधिक क्षेत्र गन्धान।
जान सकत जो साधु हैं, पूजूँ ध्यान कृपान।।१०।।

ॐ ह्रीं श्री दूरघ्राणविषयग्राहकशक्ति-ऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०८।।

नेत्रेन्द्रिय का विषय बल, जो चक्री जानन्त।
तातैं अधिक सुजानते, जजूँ साधु बलवन्त।।११।।

ॐ ह्रीं श्री दूरावलोकनशक्ति-ऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२०९।।

कर्णेन्द्रिय नवयोजना, शब्द सुनत चक्रीश।
तातें अधिक सुशक्तिधर, पूजूँ चरण मुनीश।।१२।।

ॐ ह्रीं श्री दूरश्रवणशक्ति-ऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१०।।

बिन अभ्यास मूहूर्त में, पढ जानत दश पूर्व।
अर्थ भाव सब जानते, पूजूँ यती अपूर्व।।१३।।

ॐ ह्रीं श्री दशपूर्वित्व-ऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२११।।

चौदह पूर्व मूहुर्तू में, पढ़ जानत अविकार।
भाव अर्थ समझें सभी, पूजूँ साधु चितार।।१४।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्दशपूर्वित्व-ऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१२।।

बिन उपदेश सुज्ञान लहि, संयम विधि चालन्त।
बुद्धि अमल प्रत्येक धर, पूजूँ साधु महन्त।।१५।।

ॐ ह्रीं श्री प्रत्येकबुद्धित्व-ऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१३।।

न्याय शास्त्र आगम बहू, पढें बिना जानन्त।
परवादी जीतें सकल, पूजूँ साधु महन्त।।१६।।

ॐ ह्रीं श्री वादित्व-ऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१४।।

अग्नि पुष्प तंतू चलें, जंघा श्रेणी चाल।
चारण ऋद्धि महान धर, पूजूँ साधु विशाल।।१७।।

ॐ ह्रीं श्री जलजंघातंतुपुष्पपत्रबीजश्रेणिवहून्यादिनिमित्ताश्रयचारण-ऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१५।।

नभ में उड़कर जात हैं, मेरु आदि शुभ थान।
जिन वन्दत भविबोधते, जजूँ साधु सुखखान।।१८।।

ॐ ह्रीं श्री आकाशगमनशक्तिचारणर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१६।।

अणिमा महिमा आदि बहु, भेद विक्रिया रिद्धि।
धरैं करैं न विकारता, जजूँ यती समृद्धि।।१९।।

ॐ ह्रीं श्री अणिमामहिमालघिमागरिमाप्राप्तिकाम्यवशित्वर्द्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं।।२१७।।

अंतर्दधि कामेच्छ बहु, ऋद्धि विक्रिया जान।
तप प्रभाव उपजे स्वयं, जजूँ साधु अघहान।।२०।।

ॐ ह्रीं श्री विक्रियायांतर्धानादि-ऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१८।।

मास पक्ष दो चार दिन, करत रहें उपवास।
आमरणं तप उग्र धर, जजूँ साधु गुणवास।।२१।।

ॐ ह्रीं श्री उग्रतपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२१९।।

घोर कठिन उपवास धर, दीप्तमई तन धार।
सुरभि श्वास दुर्गन्ध बिन, जजूँ यती भव पार।।२२।।

ॐ ह्रीं श्री दीप्तऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२०।।

अग्नि मांहि जल सम विला, भोजन पय हो जाय।
मल कफ मूत्र न परिणमें, जजूँ यती उमगाय।।२३।।

ॐ ह्रीं श्री तप्तऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२१।।

मुक्तावली महान तप, कर्मन नाशन हेतु।
करत रहें उत्साह से, जजूँ साधु सुख हेतु।।२४।।

ॐ ह्रीं श्री महातपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२२।।

कास श्वास ज्वर ग्रसित हो, अनशन तप गिरि साध।
दुष्टन कृत उपसर्ग सह, पूजूँ साधु अबाध।।२५।।

ॐ ह्रीं श्री घोरतपऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२३।।

घोर घोर तप करत भी, होत न बल से हीन।
उत्तर गुण विकसित करें, जजूँ साधु निज लीन।।२६।।

ॐ ह्रीं श्री घोरपराक्रमऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२४।।

दुष्ट स्वप्न दुर्मति सकल, रहित शील गुण धार।
परमब्रह्म अनुभव करें, जजूँ साधु अविकार।।२७।।

ॐ ह्रीं श्री घोरब्रह्मचर्यऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२५।।

सकल शास्त्र चिन्तन करें, एक मुहूर्त मंझार।
घटत न रुचि मन वीरता, जजूँ यती भवतार।।२८।।

ॐ ह्रीं श्री मनोबलऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२६।।

सकल शास्त्र पढ़ जात हैं, एक मुहूर्त मंझार।
प्रश्नोत्तर कर कण्ड शुचि, धरत यजूँ हितकार।।२९।।

ॐ ह्रीं श्री वचनबलऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२७।।

मेरु शिखर राखन वली, मास वर्ष उपवास।
घटे न शक्ति शरीर की, यजूँ साधु सुखवास।।३०।।

ॐ ह्रीं श्री कायबलऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२८।।

अंगुलि आदि स्पर्शते, श्वास पवन छू जाय।
रोग सकल पीड़ा टले, जजूँ साधु सुखदाय।।३१।।
ॐ ह्रीं श्री आमर्षौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२२९।।

मुखते उपजे राल जिन, शमन रोग करतार।
परम तपस्वी वैद्य शुभ, जजूँ साधु अविकार।।३२।।
ॐ ह्रीं श्री क्ष्वेलौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३०।।

तन पसेव सह रज उड़े, रोगीजन छू जाय।
रोग सकल नाशे सही, जजूँ साधु उमगाय।।३३।।
ॐ ह्रीं श्री जलौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३१।।

नाक आँख कर्णादि मल, तन स्पर्श हो जाय।
रोगी रोग शमन करें, जजूँ साधु सुख पाय।।३४।।
ॐ ह्रीं श्री मलौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३२।।

मल निपात पर्शी पवन, रजकण अंग लगाय।
रोग सकल क्षण में हरे, जजूँ साधु अघ जाय।।३५।।
ॐ ह्रीं श्री विडौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३३।।

तन नख केश मलादि बहु, अंग लगी पवनादि।
हरै मृगी सूलादि बहु, जजूँ साधु भववादि।।३६।।
ॐ ह्रीं श्री सर्वौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३४।।

विष मिश्रित आहार भी, जहं निर्विष हो जाय।
चरण धरें भू अमृती, जजूँ साधु दुःख जाय।।३७।।
ॐ ह्रीं श्री आस्याविषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३५।।

पड़त दृष्टि जिनकी जहाँ, सर्वहिं विष टल जाय।
आत्म रमी शुचि संयमी, पूजूँ ध्यान लगाय।।३८।।
ॐ ह्रीं श्री दृष्ट्यविषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३६।।

मरण होय तत्काल यदि, कहें साधु मर जाव।
तदपि क्रोध करते नहीं, पूजूँ बल दरशाव।।३९।।
ॐ ह्रीं श्री आशीविषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३७।।

दृष्टि क्रूर देखें यदी, तुर्त काल वश थाय।
निज पर सुखकारी यती, पूजूँ शक्ति धराय।।४०।।
ॐ ह्रीं श्री दृष्टिविषऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३८।।

नीरस भोजन कर धरे, क्षीर समान बनाय।
क्षीरस्रावी ऋद्धि धरे, जजूँ साधु हरषाय।।४१।।
ॐ ह्रीं श्री क्षीरश्राविऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२३९।।

वचन जास पीड़ा हरे, कटु भोजन मधुराय।
मधुस्रावी वर ऋद्धि धर, जजूँ साधु उमगाय।।४२।।
ॐ ह्रीं श्री मधुश्राविऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४०।।

रुक्ष अन्न कर में धरे, घृत रस पूरण थाय।
घृतश्रावी वर ऋद्धि धर, जजूँ साधु सुख पाय।।४३।।
ॐ ह्रीं श्री घृतश्राविऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४१।।

रुक्ष कटुक भोजन धरे, अमृत सम हो जाय।
अमृत सम वच तृप्ति कर, जजूँ साधु भय जाय।।४४।।
ॐ ह्रीं श्री अमृतश्राविऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४२।।

दत्त साधु भोजन बचे, चक्री कटक जिमाय।
तदपि क्षीण होवे नहीं, जजूँ साधु हरषाय।।४५।।
ॐ ह्रीं श्री अक्षीणमहानसऋद्धिप्राप्तेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४३।।

सकुड़े थानक में यती, करते वृष उपदेश।
बैठे कोटिक नर पशू, जजूँ साधु परमेश।।४६।।
ॐ ह्रीं श्री अक्षीणमहालयऋद्धिधारकेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४४।।

या प्रमाण ऋद्धीन को, पावन तप परभाव।
चाह कछू राखत नहीं, जजें साधु धर भाव।।४७।।

ॐ ह्रीं श्री सकलऋद्धिसंपन्नसर्वमुनिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४५।।

चौदासे त्रेपन मुनी, गणी अर्थ चौबीस।
जजूँ द्रव्य आठों लिये, नाय-नाय निज शीस।।४८।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थेश्वराग्रिमसमावर्ति-त्रिपंचाशच्चतुर्दशशतगणधरमुनिभ्यो-ऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४६।।

अड़तालीश हजार अर, उन्निस लक्ष प्रमान।
तीर्थंकर चौबीस यति, संघ यजूँ धरि ध्यान।।

ॐ ह्रीं श्री वर्तमानचतुर्विंशतितीर्थंकरसभासंस्थायि एकोनत्रिंशल्लक्षाष्टचत्वारिंशत्-सहस्रप्रमितमुनीन्द्रेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४६।।

चार कोनों में स्थापित जिनप्रतिमा, जिनमंदिर, जिनशास्त्र व जिनधर्म के लिए अर्घ्य

नौसे पच्चिस कोटि लख, त्रैपन अट्ठावीस।
सहस ऊन कर बावना, बिंब अकृत नम शीस।।

ॐ ह्रीं श्री नवशतपंचविंशतिकोटित्रिपंचाशल्लक्षसप्तविंशतिसहस्रनवशताष्ट-चत्वारिंशत्-प्रमित-अकृत्रिमजिनबिम्बेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४७।।

आठ कोड़ लख छप्पने, सत्तानवे हजार।
चारि शतक इक असी जिन, चैत्य अकृत भज सार।।

ॐ ह्रीं श्री अष्टकोटिषट्पंचाशल्लक्षसप्तनवतिसहस्रचतुःशतैकाशीतिसंख्याकृत्रिम-जिनालयेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४८।।

(चौपाई)

जय मिथ्यात्व नाग को सिंहा, एक पक्ष जल धर को मेहा।
नरक कूपते रक्षक जाना, भज जिन आगम तत्त्व खजाना।।

ॐ ह्रीं श्री स्याद्वादांकितजिनागमाय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४९।।

(भुजंगप्रयात)

जिनेन्द्रोक्त धर्म दयाभाव रूपा,
यही द्वैविधा संयमै है अनूपा।
यही रत्नत्रय मय क्षमा आदि दशधा,
यही स्वानुभव पूजिये द्रव्य अठधा।।

ॐ ह्रीं श्री दशलक्षणोत्तमादित्रिलक्षणसम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूप तथा मुनि-ग्रहस्थाचारभेदेनद्विविधं तथा द्वयरूपत्वेनैकरूपजिनधर्मायाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।250।।

(दोहा)

अर्हत्सिद्धाचार्य गुरु, साधु जिनागम धर्म।
चैत्य चैत्यग्रह देव नव, यज मंडल कर सर्म।।

ॐ ह्रीं श्री सर्वयागमण्डलदेवताभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्व विघ्न क्षय जाय शांति बाढे सही,
भव्य पुष्टता लहें क्षोभ उपजे नहीं।
पञ्चकल्याणक होंय सबहि मङ्गलकरा,
जासे भवदधि पार लेय शिवधर शिरा।।

(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।)

अब विषयों में नाहिं रमेंगे...

अब विषयों में नाहिं रमेंगे, चिदानन्द पान करेंगे।
चहुँ गतियों में नाहिं भ्रमेंगे, निजानन्द धाम रहेंगे।।
मैं नहिं तन का तन नहिं मेरा, चेतन भाव में मेरा बसेरा।
अब भेदविज्ञान करेंगे निजानन्द धाम रहेंगे।।1।।
विषयों का रस विष का प्याला, चेतन का आनन्द निराला।
अब ज्ञान में ज्ञान लखेंगे, निजानन्द पान करेंगे।।2।।
ज्ञान बसे ज्ञायक में मेरा, ज्ञायक में ही ज्ञान बसेरा।
अब क्षायिक श्रेणी चढ़ेंगे, निजानन्द पान करेंगे।।3।।

पञ्चकल्याणक पूजन खण्ड

गर्भकल्याणक स्तुति

जय तीर्थंकर जय जगतनाथ, अवतरे आज हम हैं सनाथ।
धन भाग महारानी सुहाग, जो उर आए जिन सुरग त्याग।।१।।

हम भक्ति करन उमगे अपार, आए आनन्द धर राजद्वार।
हम अंग सफल अपना करेंय, जिन मात पिता सेवा करेंय।।२।।

यह जगत तात यह जगत मात, यह मंगलकारी जग विख्यात।
इनकी महिमा नहिं कही जाय, इन आतम निश्चय मोक्ष पाय।।३।।

जिनराज जगत उद्धार कार, त्रय जगत पूज्य अघ चूरकार।
तिनके प्रगटावनहार नाथ, हम आए तुम घर नाय माथ।।४।।

तुम देखे दरश सुख पाये नयना।।टेक।।
तुम जग ताता तुम जग माता, तुम वन्दन से भव भय ना।।१।।
तुम गृह तीर्थंकर प्रभु आए, तुम देखे सोलह सुपना।।२।।
तुम भव त्यागी मन वैरागी, सम्यक्दृष्टि शुचि वयना।।३।।
तुम सुत अनुपम ज्ञान विराजे, तीन ज्ञानधारी सुजना।।४।।
तुम सुत राज्य करैं सुरनर पे, नीति निपुण दुःख उद्धरना।।५।।
तुम सुत साधु होय वन विहरे, तप साधत कर्मन हरना।।६।।
तुम सुत केवलज्ञान प्रकाशे, जग मिथ्यातम सब हरना।।७।।
तुम सुत धर्मतत्त्व सब भाषे, भविक अनेक भव से तरना।।८।।
कर्मबन्ध हर शिवपुर पहुँचे, फिर कबहूँ नहिं अवतरना।।९।।
हम सब आज जन्म फल मानो, गर्भोत्सव कर अघ दहना।।१०।।

गर्भकल्याणक पूजन

(दोहा)

श्री जिन चौबिस मात शुभ, तीर्थंकर उपजाय।
कियो जगत कल्याण बहु, पूजों द्रव्य मँगाय।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरा: गर्भकल्याणकप्राप्ता: अत्र अवतर अवतर संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरा: गर्भकल्याणकप्राप्ता: अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ: स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरा: गर्भकल्याणकप्राप्ता: अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चाल)

भरि गंगा जल अविकारी, मुनि चित सम शुचिता धारी।
जिनमात जजूँ सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्य: गर्भकल्याणकप्राप्तेभ्य: जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

घसि केशर चंदन लाऊँ, भवताप सकल प्रशमाऊँ।
जिनमात जजूँ सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्य: गर्भकल्याणकप्राप्तेभ्य: संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ अक्षत दीर्घ अखण्डे, तृष्णापर्वत निज खण्डे।
जिनमात जजूँ सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्य: गर्भकल्याणकप्राप्तेभ्य: अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुवरणमय पावन फूला, चित कामव्यथा निर्मूला।
जिनमात जजूँ सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्य: गर्भकल्याणकप्राप्तेभ्य: कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजा पकवान बनाऊँ, जासे क्षुधरोग नशाऊँ।
जिनमात जजूँ सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशंतितीर्थंकरेभ्य: गर्भकल्याणकप्राप्तेभ्य: क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक रत्ननमय लाऊँ, सब दर्शनमोह हटाऊँ।
जिनमात जजूँ सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशंतितीर्थंकरेभ्य: गर्भकल्याणकप्राप्तेभ्य: मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपायन धूप जलाऊँ, कर्मन का वंश मिटाऊँ।
जिनमात जजूँ सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशंतितीर्थंकरेभ्य: गर्भकल्याणकप्राप्तेभ्य: अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल उत्तम-उत्तम लाऊँ, शिवफल उद्देश बनाऊँ।
जिनमात जजूँ सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशंतितीर्थंकरेभ्य: गर्भकल्याणकप्राप्तेभ्य: मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुचि आठों द्रव्य मिलाऊँ, गुण गाकर मन हरषाऊँ।
जिनमात जजूँ सुखदाई, जिनधर्म प्रभाव सहाई।।

ॐ ह्रीं श्रीचतुर्विंशंतितीर्थंकरेभ्य: गर्भकल्याणकप्राप्तेभ्य: अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

गर्भकल्याणकविभूषित चौबीस तीर्थंकरों के लिए अर्घ्य

(गीता)

सर्वार्थसिद्धि विमान से जिन ऋषभ चय आए यहाँ,
मरुदेवी माता गरभ शोभै होय उत्सव शुभ तहाँ।

आषाढ़ वदि दुतिया दिना सब इन्द्र पूजें आयके,
हम हूँ करें पूजा सुमाता गुण अपूरव ध्याय के।।

ॐ ह्रीं श्री आषाढकृष्णपक्षे द्वितीयायां मरुदेविगर्भावतरिताय वृषभदेवायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१।।

(दोहा)

जेठ अमावस सार दिन, गर्भ आय अजितेश।
विजया माता हम जजें, मेटें सर्व कलेश।।

ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठकृष्णाऽमावस्यायां विजयसेनागर्भावतरितायाजितदेवायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२।।

(संकर)

फागुन असित सित अष्टमी को गर्भ आए नाथ,
धन पुण्य मात सुसैन का संभव धरे सुख साथ।
उपकार जग का जो भया, सुरगुरु कथत थक जाय,
हम ल्याय के शुभ अर्घ्य पूजैं विघ्न सब टल जाय।।

ॐ ह्रीं श्री फाल्गुनशुक्लाष्टम्यां सुषेणागर्भावतरिताय संभवदेवायार्घ्यं नि. स्वाहा।।३।।

(गाथा)

गर्भस्थिति अभिनन्दा, वैसाख सित अष्टमी दिना सारा।
सिद्धार्था शुभ माता, पूजूँ चरण सुजान उपकारा।।

ॐ ह्रीं श्री वैशाखशुक्लाष्टम्यां सिद्धार्थागर्भावतरिताय सुमतिदेवायार्घ्यं नि. स्वाहा।।४।।

(सोरठा)

श्रावण सित पख आप, मात मंगला उर वसे।
श्री सुमतीश जिनाय, पूजूँ माता भाव सों।।

ॐ ह्रीं श्री श्रावणशुक्लद्वितीयायां मंगलागर्भावतरिताय सुमतिदेवायार्घ्यं नि. स्वाहा।।५।।

(शिखरिणी)

वदी षष्ठी जानो सुभग महिना माघ सुदिना,
सुसीमा माता के गर्भ तिष्ठै पद्म सु जिना।

जजों लैके अर्घ्य मात देवी द्वन्द चरणा,
कटें जासे हमरे सकल कर्म लेहु शरणा।।

ॐ ह्रीं श्री माघकृष्णषष्ठ्यां सुसीमागर्भावतरिताय पद्मप्रभायार्घ्यं निर्वपामिति स्वाहा।।६।।

(धोदका)

भादव शुक्ल छठी तिथि जानी, गर्भ धरे पृथ्वी महरानी।
श्री सुपार्श्व जिननाथ पधारे, जजूँ मात दु:ख टाल हमारे।।

ॐ ह्रीं श्री भाद्रपदशुक्लषष्ठ्यां वसुन्धरागर्भावतरिताय सुपार्श्वदेवायार्घ्यं नि.स्वाहा।।७।।

(शिखरिणी)

सुभग चैतर महिना असित पख में पांचम दिना,
सुलखना माता ने गर्भ धारे चन्द्र सु जिना।
जजौं लैके अर्घ्य मात जिनके शुद्ध चरणा,
कटें जासे हमारे सकल कर्म लेहु शरणा।।

ॐ ह्रीं श्री चैत्रकृष्णपंचम्यां सुलक्षणागर्भावतरिताय चन्द्रप्रभायार्घ्यं नि. स्वाहा।।८।।

(सोरठा)

पुष्पदन्त भगवान, मात रमा के अवतरें।
फागुन नौमि महान, जजैं मात के चरण जुग।।

ॐ ह्रीं श्री फाल्गुनकृष्णनवम्यां रमादेविगर्भावतरिताय पुष्पदंतायार्घ्यं नि.स्वाहा।।९।।

(चाली)

वदि चैत तनी छठ जानी, शीतल प्रभु उपजे ज्ञानी।
नंदा माता हरखानी, पूजूँ देवी उर आनी।।

ॐ ह्रीं श्री चैत्रकृष्णषष्ठ्यां सुनंदागर्भावतरिताय शीतलायार्घ्यं नि. स्वाहा।।१०।।

वदी जेठ तनी छठि जानी, विष्णुश्री मात बखानी।
श्रेयांसनाथ उपजाए, पूजूँ देवी उर आनी।।

ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठकृष्णषष्ठ्यां विष्णुश्रीगर्भावतरिताय श्रेयांसनाथायार्घ्यं नि. स्वाहा।।११।।

आषाढ़ वदी छठि गाई, श्री वासुपूज्य जिनराई।
सुजया माता हरखानी, पूजूँ ता पद उर आनी।।

ॐ ह्रीं श्री आषाढ़कृष्णषष्ठ्यां जयावतिगर्भावतरिताय वासुपूज्यायार्घ्यं नि. स्वाहा।।१२।।

(मालती)

जेठ वदी दसमी गणिये शुभ, मात सुश्यामा गर्भ पधारे,
नाथ विमल आकुलता हारी, तीन ज्ञानधर धर्म प्रचारे।।
ता माता का धन्य भाग है, पूजत हैं हम अर्घ्य सुधारे,
मंगल पावें विघ्न नशावें, वीतरागता भाव सम्हारे।।

ॐ ह्रीं श्री ज्येष्ठकृष्णदशाम्यां श्यामागर्भावतरिताय विमलनाथायार्घ्यं नि. स्वाहा।।१३।।

(अडिल्ल)

एकम कार्तिक कृष्ण गर्भ में आय के,
नाथ अनन्त सु सुरजा माता पाय के।
पूजूँ देवी सार धन्य तिस भाग है,
जासे विघ्न पलाय उदय सौभाग है।।

ॐ ह्रीं श्री कार्तिककृष्णप्रतिपदायां जयश्यामागर्भावतरितायानतनाथायार्घ्यं नि.स्वाहा।।१४।।

(अडिल्ल)

मात सुव्रता धर्म जिनं उर धारियो,
तेरसि सुदि वैशाख सु सुख संचारियो।
पूजूँ माता ध्याय धर्म उद्धारणी,
शिवपद जासे होय सुमंगल कारणी।।

ॐ ह्रीं श्री वैशाखशुक्लत्रयोदश्यां सुव्रतागर्भावतरिताय धर्मनाथायार्घ्यं नि.स्वाहा।।१५।।

(शिखरिणी)

महा ऐरादेवी परम जननी शांति जिनकी,
सुदी सातें भादों करत पूजा इन्द्र तिनकी।
जजूँ मैं ले अर्घ्य मात जिन के द्वन्द्व चरणा,
भजे मम अघ सारे, नसत भव है जास शरणा।।

ॐ ह्रीं श्री भाद्रपदकृष्णसप्तम्यां ऐरादेविगर्भावतरिताय शांतिनाथायार्घ्यं नि.स्वाहा।।१६।।

(चाली)

सावन दशमी अन्धियारी, जिन गर्भ रहे सुखकारी।
प्रभु कुन्थु श्रीमती माता, पूजूँ जासों लहुँ साता।।

ॐ ह्रीं श्री श्रावणकृष्णदशाम्यां श्रीमतीगर्भावतरिताय कुन्थुनाथायार्घ्यं नि. स्वाहा।।१७।।

(मालती)

है गुण शील तनी सरिता, अरनाथ तनी जननी सुख खानी।
मित्रा नाम प्रसिद्ध जगत में, सेव करत देवी हरषानी।।
मुक्ति होन को यश धारत है, सम्यक् रत्नत्रय पहचानी।
फागुन की सित तीज दिना अर, गर्भ धरे जजि हों महरानी।।

ॐ ह्रीं श्री फाल्गुनशुक्लतृतीयायां मित्रसेनागर्भावतरिताय अरनाथजिनायार्घ्यं नि. ।।१८।।

(दोहा)

चैत्र शुक्ल पड़िवा वसे, मल्लिनाथ जिनदेव।
प्रजावती के गर्भ में, जजूँ मात करूँ सेव।।

ॐ ह्रीं श्री चैत्रशुक्लप्रतिपदायां प्रजावतीगर्भावतरिताय मल्लिजिनायार्घ्यं नि.स्वाहा।।१९।।

(अडिल्ल)

श्रावण वदि दुतिया दिन, सुव्रतिनाथ जू,
श्यामा उर में बसे ज्ञान त्रय साथ जू।
ता माता के चरणकमल पूजें सदा,
मंगल होय महान विघ्न जावैं बिदा।।

ॐ ह्रीं श्री श्रावणकृष्णद्वितीयायां श्यामागर्भावतरिताय मुनिसुव्रतनाथायार्घ्यं नि.स्वाहा।।२०।।

(सोरठा)

नमिनाथ भगवान, विपुला माता उर बसे।
क्वाँर वदी दुज जान, ता देवी पूजूँ मुदा।।

ॐ ह्रीं श्री आश्विनकृष्णद्वितीयायां विपुलागर्भावतरितायनमिनाथायार्घ्यं नि. स्वाहा।।२१।।

(मालती)

कार्तिक मास सुदी छठि के दिन, श्री जिन नेम प्रभू सुखकारी।
मात शिवा के गर्भ पधारे, मुदित भये जग के नरनारी।।
धन्य मात शिवपथ अनुगामी, मोक्ष नगर की है अधिकारी।
पूजूँ द्रव्य आठ शुभ लेके, मिटत कालिमा कर्म अपारी।।

ॐ ह्रीं श्री कार्तिकशुक्लषष्ठ्यां शिवागर्भावतरिताय नेमिनाथायार्घ्यं नि. स्वाहा।।२२।।

(चाली)

वैशाख वदी दुज जाना, श्री पार्श्वनाथ भगवाना।
वामादेवी उर आए, पूजत हम भाव लगाए।।

ॐ ह्रीं श्री वैशाखकृष्णद्वितीयायां वामागर्भावतरिताय पार्श्वनाथायार्घ्यं नि. स्वाहा।।२३।।

(मालती)

मास आषाढ़ सुदी छठि के दिन, श्री जिन वीर प्रभू गुणधारी।
त्रिशला माता गर्भ पधारे, सकल लोक को मंगलकारी।।
मोक्षमहल की है अधिकारी, शांत सुधा को भोगनहारी।
जजूँ मात के चरण युगल को, हरूँ विघ्न होऊँ अविकारी।।

ॐ ह्रीं श्री आषाढ़कृष्णषष्ठ्यां त्रिशलादेविगर्भावतरिताय महावीरायार्घ्यं नि. स्वाहा।।२४।।

जयमाला

(स्रग्विणी)

धन्य हैं धन्य हैं मात जिननाथ की,
इन्द्र देवी करैं भक्ति भावां थकी।
पूजि हों द्रव्य ले विघ्न सारे टलें,
गर्भकल्याण पूजन सकल अघ दलें।।१।।

रूप की खान हैं, शील की खान हैं,
धर्म की खान हैं, ज्ञान की खान हैं।
पुण्य की खान हैं, सुख की खान हैं,
तीर्थजननी महा शांति की खान है।।२।।

भेदविज्ञान से आप-पर जानतीं,
जैनसिद्धान्त का मर्म पहचानतीं।
आत्म-विज्ञान से मोह को हानतीं,
सत्य चारित्र से मोक्षपथ मानतीं।।३।।

होत आहार नीहार नहिं धारती,
वीर्य अनुपम महा देह विस्तारतीं।

गर्भ धारण किये दु:ख सब टालतीं,
रूप को ज्ञान को वृद्धि कर डालतीं ।।४।।
मात चौबिस महा मोक्ष अधिकारणी,
पुत्र जनतीं जिन्हें मोक्ष में धारिणी।
गर्भकल्याण में पूजते आप को,
हो सफल यज्ञ यह छांड सन्ताप को ।।५।।

(घत्ता त्रिभंगी)

जय मंगलकारी मात हमारी बाधाहारी कर्म हरो,
तुम गुण शुचिधारी हो अविकारी, सम-दम-यम निज मांहि धरो।
हम पूजें ध्यावें मंगल पावें शक्ति बढावें वृष पाके,
जिन यज्ञ मनोहर शांत सुधाकर, सफल करें तव गुण गाके ।।

ॐ ह्रीं श्री चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो गर्भकल्याणकप्राप्तेभ्यो महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आनन्द अवसर आज...

आनन्द अवसर आज, सुरगण आये नगर में।
तीर्थंकर युवराज, आनंद छाया नगर में।।
स्वर्गपुरी से सुरपति आए, सुन्दर स्वर्णकलश ले आए।
निर्मल जल से तीर्थंकर का मंगलमय शुभन्हवन कराए।।
परिणति शुद्ध बनाय भविजन ।।१।।
प्रभुजी वस्त्राभूषण धारें, चेतन को निर्वस्त्र निहारें।
एक अखंड अभेद त्रिकाली चेतन तन से भिन्न निहारें।।
आनन्द रस बरसाय भविजन ।।२।।
पुण्य उदय है आज हमारे नगरी में जिनराज पधारे।
निशदिन प्रभु की सेवा करने भक्ति सहित सुरराज पधारे।।
जीवन सफल बनाय सुरगण ।।३।।
सुरपति स्वर्गपुरी को जावें भोगों में नहिं चित्त ललचावें।
आनंदघन निज शुद्धातम का रस ही परिणति में नित भावें।।
भेद-विज्ञान सुहाय भविजन ।।४।।

जन्मकल्याणक स्तुति

(1)

(पद्धरि)

तुम जगत-ज्योति तुम जगतईश, तुम जगत-गुरु जग नमत शीस।
तुम केवलज्ञानप्रकाशकार, तुम ही सूरज तम-मोहहार ।।१।।
तुम देखे भव्यकमल फुलाय, अघभ्रमर तुरत तहंसे पलाय।
जय महागुरु जय विश्वज्ञान, जय गुणसमुद्र करुणानिधान ।।२।।
जो चरणकमल माथे धराय, वह भव्य तुरत सद्ज्ञान पाय।
हे नाथ ! मुक्तिलक्ष्मी अबार, तुम को देखत हैं प्रेम धार ।।३।।
कृतकृत्य भए हम दर्श पाय, हम हर्ष नहीं चित्त में समाय।
हम जन्म सफल मानो अबार, तुमको परशे हे भव-उबार ।।४।।

(2)

(पद्धरि)

जय वीतराग हत रागदोष, राजत दर्शन क्षायिक अदोष।
तुम पापहरण हो नि:कषाय, पावन परमेष्ठी गुणनिकाय ।।१।।
तुम नयप्रमाण ज्ञाता अशेष, श्रुतज्ञान सकल जानो विशेष।
तुम अवधिज्ञानधारी विशाल, मतिज्ञानधरण सुखकर कृपाल ।।२।।
तुम कामरहित हो कामजीत, तुम विद्यानिधि हो कर्मजीत।
तुम शांतस्वभावी स्वयंबुद्ध, तुम करुणानिधि धर्मी अक्रुद्ध ।।३।।
तुम वदतांवर कृतकृत्य ईश, वाचस्पति गुणनिधि गिराईश।
तुम मोक्षमार्ग उपदेशकार, महिमा तुमरी को लहे पार ।।४।।

(दोहा)

नाम लिये थुति के किये, पातक सर्व पलाय।
मंगल होवे लोक में, स्वानुभूति प्रगटाय।।

जन्मकल्याणक पूजन

(शङ्कर)

जिननाथ चौबिस चरण पूजा करत हम उमगाय,
जग जन्म लेके जग उधारो जजैं हम चित लाय।।
तिन जन्मकल्याणक सु उत्सव इन्द्र आय सुकीन,
हम हूँ समरता समय को पूजत हिये शुचि कीन।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकराः जन्मकल्याणकप्राप्ताः अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकराः जन्मकल्याणकप्राप्ताः अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकराः जन्मकल्याणकप्राप्ताः अत्र मम सन्निहितो भवत भवत वषट् सन्निधिकरणम्।

(चाल)

जल निर्मल धार कटोरी, पूजूँ जिन निज कर जोड़ी।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यः जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन केशरमय लाऊँ, भव का आताप शमाऊँ।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षत शुभ धोकर लाऊँ, अक्षयगुण को झलकाऊँ।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यः अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

सुंदर पुहपनि चुनि लाऊँ, निज कामव्यथा हटवाऊँ।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

पकवान मधुर शुचि लाऊँ, हनि रोग क्षुधा सुख पाऊँ।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपक करके उजियारा, निज मोहतिमिर निरवारा।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यः मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूपायन धूप खिवाऊँ, निज अष्ट करम जलवाऊँ।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

फल उत्तम-उत्तम लाऊँ, शिवफल जासे उपजाऊँ।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

सब आठों द्रव्य मिलाऊँ, मैं आठों गुण झलकाऊँ।
पद पूजन करहुँ बनाई, जासे भवजल तर जाई।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यः जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जन्मकल्याणकविभूषित चौबीस तीर्थंकरों के लिए अर्घ्य

(चाल)

वदि चैत नवमि शुभ गाई, मरुदेवि जने हरषाई।
श्री रिषभनाथ युग आदी, पूजूँ भव मेट अनादी।।
ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।१।।

दशमी शुभ माघ वदी को, विजया माता जिनजी की।
उपजे श्री अजित जिनेशा, पूजूँ मेटो सब क्लेशा।।
ॐ ह्रीं माघकृष्णदशम्यां श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।२।।

कार्तिक सुदि पूरणमासी, माता सुसैन हुल्लासी।
श्री सम्भवनाथ प्रकाशे, पूजत आपा पर भासे।।
ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लपूर्णिमायां श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।३।।

शुभ चौदश माघ सुदी की, अभिनन्दननाथ विवेकी।
उपजे सिद्धार्था माता, पूजूँ पाऊँ सुख साता।।
ॐ ह्रीं माघशुक्लचतुर्दश्यां श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।४।।

ग्यारस है चैत सुदी की, मंगला माता जिनजी की।
श्री सुमति जने सुखदाई, पूजूँ मैं अर्घ्य चढाई।।
ॐ ह्रीं चैत्रशुक्ल-एकादश्यां श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।५।।

कार्तिक वदी तेरसि जानो, श्री पद्मप्रभ उपजानो।
है मात सुसीमा ताकी, पूजूँ ले रुचि समता की।।
ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णत्रयोदश्यां श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।६।।

शुचि द्वादश जेठ सुदी की, पृथवी माता जिनजी की।
जिननाथ सुपारस जाए, पूजूँ हम मन हरषाए।।
ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।७।।

शुभ पूस वदी ग्यारस को, है जन्म चन्द्रप्रभ जिनको।
धन्य मात सुलखनादेवी, पूजूँ जिनको मुनिसेवी।।
ॐ ह्रीं कृष्णशुक्लएकादश्यां श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।८।।

अगहन सुदि एकम जाना, जिन मात रमा सुखखाना।
श्री पुष्पदंत उपजाए, पूजतहूँ ध्यान लगाये।।
ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लप्रतिपदायां श्रीपुष्पदन्तजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।९।।

द्वादश वदि माघ सुहानी, नंदा माता सुखदानी।
श्री शीतल जिन उपजाए, हम पूजत विघ्न नशाए।।
ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।१०।।

फागुन वदि ग्यारस नीकी, जननी विमला जिनजी की।
श्रेयांसनाथ उपजाए, हम पूजत ही सुख पाए।।
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णएकादश्यां श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।११।।

वदि फाल्गुन चौदसि जाना, विजया माता सुखखाना।
श्री वासुपूज्य भगवाना, पूजूँ पाऊँ जिन ज्ञाना।।
ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।१२।।

शुभ द्वादश माघ वदी की, श्यामा माता जिनजी की।
श्री विमलनाथ उपजाए, पूजत हम ध्यान लगाए।।
ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।१३।।

द्वादशि वदि जेठ प्रमाणी, सुरजा माता सुखदानी।
जिननाथ अनन्त सुजाए, पूजत हम नाहिं अघाए।।
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।१४।।

तेरसि सुदि माघ महीना, श्री धर्मनाथ अघ छीना।
माता सुव्रता उपजाए, हम पूजत ज्ञान बढाए।।
ॐ ह्रीं माघशुक्लत्रयोदश्यां श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।१५।।

वदि चौदस जेठ सुहानी, ऐरा देवी गुन खानी।
श्री शान्ति जने सुख पाए, हम पूजत प्रेम बढाए।।
ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां श्रीशान्तिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।१६।।

पड़िवा वैसाख सुदी की, लक्ष्मीपति माता नीकी।
श्री कुन्थुनाथ उपजाए, पूजत हम अर्घ्य बढाए।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदायां श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।१७।।

अगहन सुदि चौदस मानी, मित्रा देवी हरषानी।
अरि तीर्थंकर उपजाए, पूजें हम मन वच काए।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लचतुर्दश्यां श्रीअरनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।१८।।

अगहन सुदि ग्यारस आए, श्री मल्लिनाथ उपजाए।
है मात प्रजापति प्यारी, पूजत अघ विनशें भारी।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लएकादश्यां श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।१९।।

दशमी वैसाख वदी की, श्यामा माता जिनजी की।
मुनिसुव्रत जिन उपजाए, पूजत हम ध्यान लगाए।।

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णदशम्यां श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।२०।।

दशमी आषाढ़ वदी की, विपुला माता जिनजी की।
नमि तीर्थंकर उपजाए, पूजत हम ध्यान लगाए।।

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णदशम्यां श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।२१।।

श्रावण शुकला छठि जानो, उपजे जिन नेमि प्रमाणो।
जननी सु शिवा जिनजी की, हम पूजत हैं थल शिवकी।।

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठ्यां श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।२२।।

वदि पूस चतुर्दशि जानी, वामादेवी हरषानी।
जिन पार्श्व जने गुणखानी, पूजें हम नाग निशानी।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णचतुर्दश्यां श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।२३।।

शुभ चैत्र त्रयोदश शुकला, माता गुणखानी त्रिशला।
श्री वर्द्धमान जिन जाए, हम पूजत विघ्न नशाए।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदश्यां श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय जन्मकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।२४।।

जयमाला

(भुजंगप्रयात)

नमो जै नमो जै नमो जै जिनेशा,
तुम्हीं ज्ञान सूरज तुम्हीं शिव प्रवेशा।
तुम्हें दर्श करके महामोह भाजे,
तुम्हें पर्श करके सकल ताप भाजे।।१।।
तुम्हें ध्यान में धारते जो गिराई,
परम आत्म-अनुभव छटा सार पाई।
तुम्हें पूजते नित्य इन्द्रादि देवा,
लहैं पुण्य अद्भुत परम ज्ञान-मेवा।।२।।
तुम्हारो जनम तीन भू दु:ख निवारी,
महा मोह मिथ्यात हिय से निकारी।
तुम्हीं तीन बोधं धरे, जन्म ही से,
तुम्हें दर्शनं क्षायिकं रहे जन्म ही से।।३।।
तुम्हें आत्मदर्शन रहे जन्म ही से,
तुम्हें तत्त्वबोधं रहे जन्म ही से।
तुम्हारा महा पुण्य आश्चर्यकारी,
सु महिमा तुम्हारी सदा पापहारी।।४।।
करा शुभ न्हवन क्षीरसागर जु जल से,
मिटी कालिमा पाप की अंग पर से।
हुआ जन्म सफलं करी सेव देवा,
लहूँ पद तुम्हारा इसी हेतु सेवा।।५।।

(दोहा)

श्री जिन चौबीस जन्म की, महिमा उर में धार।
पूज करत पातक टलें, बढ़े ज्ञान अधिकार।।

ॐ ह्रीं चतुर्विंशतिजिनेभ्यो जन्मकल्याणकप्राप्तेभ्य: महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

तपकल्याणक पूजन

(गीता)

श्री रिषभदेव सु आदि जिन श्रीवर्द्धमान जु अंत हैं।
वन्दुहुं चरणवारिज तिन्होंके जजत तिनको संत हैं।।
करके तपस्या साधु व्रत ले मुक्ति के स्वामी भए।
तिन तपकल्याणक यजन को हम द्रव्य आठों हैं लए।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवर्धमानजिना: अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वाननम्।
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवर्धमानजिना: अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ: ठ: स्थापनम्।
ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिवर्धमानजिना: अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरणम्।

(चाल)

शुचि गंगाजल भर झारी, रुज जन्म मरण क्षयकारी।
तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए।।

ॐ ह्रीं तपकल्याणकप्राप्तेभ्य: श्रीवृषभादिवर्धमानजिनेन्द्रेभ्य: जलं नि. स्वाहा।

शीतल चंदन घसि लाऊँ, भव का आताप शमाऊँ।
तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए।।

ॐ ह्रीं तपकल्याणकप्राप्तेभ्य: श्रीवृषभादिवर्धमानजिनेन्द्रेभ्य: चंदनं नि. स्वाहा।

अक्षत ले राशि दुतिकारी, अक्षयगुण के करतारी।
तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए।।

ॐ ह्रीं तपकल्याणकप्राप्तेभ्य: श्रीवृषभादिवर्धमानजिनेन्द्रेभ्य: अक्षतं नि. स्वाहा।

बहुफूल सुवर्ण चुनाऊँ, निज कामव्यथा हटवाऊँ।
तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए।।

ॐ ह्रीं तपकल्याणकप्राप्तेभ्य: श्रीवृषभादिवर्धमानजिनेन्द्रेभ्य: पुष्पं नि. स्वाहा।

चरु ताजे स्वच्छ बनाऊँ, निज रोग क्षुधा मिटवाऊँ।
तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए।।

ॐ ह्रीं तपकल्याणकप्राप्तेभ्य: श्रीवृषभादिवर्धमानजिनेन्द्रेभ्य: नैवेद्यं नि. स्वाहा।

दीपक ले तम हरतारा, निज ज्ञानप्रभा विस्तारा।
तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए।।

ॐ ह्रीं तपकल्याणकप्राप्तेभ्य: श्रीवृषभादिवर्धमानजिनेन्द्रेभ्य: दीपं नि. स्वाहा।

धूपायन धूप खिवाऊँ, निज आठों कर्म जलाऊँ।
तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए।।

ॐ ह्रीं तपकल्याणकप्राप्तेभ्य: श्रीवृषभादिवर्धमानजिनेन्द्रेभ्य: धूपं नि. स्वाहा।

फल सुन्दर ताजे लाऊँ, शिवफल ले चाह मिटाऊँ।
तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए।।

ॐ ह्रीं तपकल्याणकप्राप्तेभ्य: श्रीवृषभादिवर्धमानजिनेन्द्रेभ्य: फलं नि. स्वाहा।

शुभ आठों द्रव्य मिलाऊँ, करि अर्घ्य परमसुख पाऊँ।
तपसी जिन चौबिस गाए, हम पूजत विघ्न नशाए।।

ॐ ह्रीं तपकल्याणकप्राप्तेभ्य: श्रीवृषभादिवर्धमानजिनेन्द्रेभ्य: अर्घ्यं नि. स्वाहा।

तपकल्याणकविभूषित चौबीस तीर्थंकरों के लिए अर्घ्य

नौमी वदि चैत प्रमाणी, वृषभेष तपस्या ठानी।
निज में निज रूप पिछाना, हम पूजत पाप नशाना।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां श्रीवृषभजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं...।।१।।

दशमी शुभ माघ वदी को, अजितेश लियो तप नीको।
जग का सब मोह हटाया, हम पूजत पाप भगाया।।

ॐ ह्रीं माघकृष्णदशम्यां श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं...।।२।।

मगसिर सुदि पूरणमासी, संभव जिन होय उदासी।
केशलोंच महातप धारो, हम पूजत भय निरवारो।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लपूर्णिमायां श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३।।

द्वादश शुभ माघ सुदी की, अभिनंदन वन चलने की।
चित ठान परम तप लीना, हम पूजत हैं गुण चीन्हा ।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लद्वादश्यां श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।४।।

नौमी वैसाख सुदी में, तप धारा जाकर वन में।
श्री सुमतिनाथ मुनिराई, पूजूँ मैं ध्यान लगाई ।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लनवम्यां श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं... ।।५।।

कार्तिक वदि तेरसि गाई, पद्मप्रभु समता भाई।
वन जाय घोर तप कीना, पूजें हम समसुखभीना ।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णत्रयोदश्यां श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं... ।।६।।

सुदि द्वादश जेठ सुहाई, बारा भावन प्रभु भाई।
तप लीना केश उपाड़े, पूजूँ सुपार्श्व यति ठाड़े ।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लद्वादश्यां श्रीसुपार्श्वनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं... ।।७।।

एकादश पौष वदी को, चन्द्रप्रभु धारा तप को।
वन में जिन ध्यान लगाया, हम पूजत ही सुख पाया ।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्ण-एकादश्यां श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं... ।।८।।

अगहन सुदि एकम जाना, श्री पुष्पदंत भगवाना।
तप धार ध्यान निज कीना, पूजूँ आतम गुण चीन्हा ।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्लप्रतिपदायां श्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं.. ।।९।।

द्वादशि वदी माघ महीना, शीतल प्रभु समता भीना।
तप राखो योग सम्हारो, पूजें हम कर्म निवारो ।।

ॐ ह्रीं माघकृष्णद्वादश्यां श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं... ।।१०।।

वदि फाल्गुन ग्यारस गाई, श्रेयांसनाथ सुखदाई।
हो तपसी ध्यान लगाया, हम पूजत हैं जिनराया ।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णएकादश्यांश्रीश्रेयांसनाथजिनेंद्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं.. ।।११।।

वदि फाल्गुन चौदसि स्वामी, श्री वासुपूज्य शिवगामी।
तपसी हो समता साधी, हम पूजत धार समाधी ।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णचतुर्दश्यां श्रीवासुपूज्यजिनेंद्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं.. ।।१२।।

वदि माघ चौथ हितकारी, श्री विमल सुदीक्षा धारी।
निज परिणति में लय पाई, हम पूजत ध्यान लगाई ।।

ॐ ह्रीं माघकृष्णचतुर्थ्यां श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं... ।।१३।।

द्वादशि वदि जेठ सुहानी, वन आए जिन त्रय ज्ञानी।
धर सामायिक तप साधा, हम पूजूँ अनंत हर बाधा ।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णद्वादश्यां श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं... ।।१४।।

तेरस सुदि माघ महीना, श्री धर्मनाथ तप लीना।
वन में प्रभु ध्यान लगाया, हम पूजत मुनिपद ध्याया ।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लत्रयोदश्यां श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं... ।।१५।।

चौदस शुभ जेठ वदी में, श्री शांति पधारे वन में।
तहं परिग्रह तज तप लीना, पूजूँ आतमरस भीना ।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं... ।।१६।।

करि दूर परिग्रह सारी, वैसाख सुदी पड़िवारी।
श्री कुन्थु स्वात्मरस जाना, पूजन से हो कल्याणा ।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदायां श्रीकुंथुनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं. ।।१७।।

अगहन सुदि दशमी गाई, अरनाथ छोड़ गृह जाई।
तप कीना होय दिगंबर, पूजें हम शुभ भावों कर ।।

ॐ ह्रीं मार्गशीषशुक्लदशम्यां श्रीअरनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं... ।।१८।।

अगहन सुदि ग्यारस कीना, सिर केशलोच हित चीन्हा।
श्री मल्लि यती व्रतधारी, पूजें नित साम्य प्रचारी ।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्ल-एकादश्यां श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१९।।

वैसाख वदि दशमी को, मुनिसुव्रत धारा व्रत को।
समतारस में लौ लाए, हम पूजत ही सुख पाए।।

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णदशम्यां श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं...।।२०।।

दशमी आषाढ़ वदी की नमिनाथ हुए एकाकी।
वन में निज आतम ध्याये, हम पूजत ही सुख पाये।।

ॐ ह्रीं आषाढकृष्णदशम्यां श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं...।।२१।।

छठि श्रावण शुक्ला आई, श्री नेमिनाथ वन जाई।
करुणा वश पशू छुड़ाए, धारा तप पूजूँ ध्याये।।

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लषष्ठ्यां श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं...।।२२।।

लखि पौष इकादशि श्यामा, श्री पार्श्वनाथ गुणधामा।
तप ले वन आसन आना, हम पूजत शिवपद पाना।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णएकादश्यां श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं...।।२३।।

अगहन वदि दशमी गाई, बारा भावन शुभ भाई।
श्री वर्द्धमान तप धारा, हम पूजत हों भव पारा।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय तपकल्याणकप्राप्तायार्घ्यं...।।२४।।

जयमाला

(भुजंगप्रयात)

नमस्ते नमस्ते नमस्ते मुनिन्दा,
निवारें भली भांति से कर्म फन्दा।
संवारे सुद्वादश तपं वन मंझारी।
सदा हम नमत हैं तिन्हें मन सम्हारी।।१।।
त्रयोदश प्रकारं सु चारित्र धारा,
अहिंसा महा सत्य अस्तेय प्यारा।
परम ब्रह्मचर्य परिग्रह तजाया,
सु धारा महा संयमं मन लगाया।।२।।

दया धार भू को निरखकर चलत हैं,
सुभाषा महाशुद्ध मीठी वदत हैं।
करैं शुद्ध भोजन सभी दोष टालें,
दया को धरे वस्तु लें मल निकालें।।३।।
वचन काय मन गुप्ति को नित्य धारें,
धरमध्यान से आत्म अपना विचारें।
धरें साम्य भावं रहें लीन निज में,
सुचारित्र निश्चय धरें शुद्ध मन में।।४।।
ऋषभ आदि श्री वीर चौबीस जिनेशा,
बड़े वीर क्षत्री गुणी ज्ञान ईशा।
खडग ध्यान आतम कुबल मोह नाशा,
जजें हम यतन से स्व आतम प्रकाशा।।५।।

(दोहा)

धन्य साधु सम गुण धरें, सहें परीषह धीर।
पूजत मंगल हों महा, टलें जगतजन पीर।।

ॐ ह्रीं श्री ऋषभादिवीरांतचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः तपकल्याणकप्राप्तेभ्यः महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

धन-धन जैनी साधु जगत के, तत्त्वज्ञान विलासी हो।।टेक।।
दर्शन बोधमई निज मूरति जिनको अपनी भासी हो।
त्यागी अन्य समस्त वस्तु में अहंबुद्धि दुःखदासी हो।।१।।
जिन अशुभोपयोग की परिणति सत्तासहित विनाशी हो।
होय कदाच शुभोपयोग तो तहँ भी रहत उदासी हो।।२।।
छेदत जे अनादि दुःखदायक दुविधि बंध की फाँसी हो।
मोह क्षोभ रहित जिन परिणति विमल मयंक विलासी हो।।३।।
विषय चाह दव दाह बुझावन साम्य सुधारस रासी हो।
'भागचन्द' पद ज्ञानानन्दी साधक सदा हुलासी हो।।४।।

आहारदान के समय
मुनिराज ऋषभदेव की पूजन

(पद्धरि)

जय जय तीर्थंकर गुरु महान,
हम देख हुए कृत-कृत्य प्राण।
महिमा तुमरी वरणी न जाय,
तुम शिवमारग साधत स्वभाव।।१।।
जय धन्य-धन्य ऋषभेश आज,
तुम दर्शन से सब पाप भाज।
हम हुए सु पावन गात्र आज,
जय धन्य-धन्य तपसार साज।।२।।
तुम छोड़ परिग्रहभार नाथ,
लीनो चारित तप ज्ञान साथ।
निज आतमध्यानप्रकाशकार,
तुम कर्म जलावन वृत्ति धार।।३।।
जय सर्व जीवरक्षक कृपाल,
जय धारत रत्नत्रय विशाल।
जय मौनी आतम मननकार,
जग जीव उद्धारण मार्गधार।।४।।
हम गृह पवित्र तुम चरण पाय,
हम मन पवित्र तुम ध्यान ध्याय।
हम भये कृतारथ आप पाय,
तुम चरण सेवने चित बढ़ाय।।५।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभतीर्थंकरमुनीन्द्र पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

(वसंततिलका)

सुन्दर पवित्र गंगाजल लेय झारी,
डारूँ त्रिधार तुम चरणन अग्र भारी।
श्री तीर्थनाथ वृषभेश मुनीन्द्र चरणा,
पूजूँ सुमंगल करण सब पाप हरणा।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभतीर्थंकरमुनीन्द्राय जन्म-जरा-मृत्युविनाशनाय जलं नि. स्वाहा।

श्री चन्दनादि शुभ केशर मिश्र लाये,
भवताप उपशमकरण निजभाव ध्याये।
श्री तीर्थनाथ वृषभेष मुनीन्द्र चरणा,
पूजूँ सुमंगल करण सब पाप हरणा।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभतीर्थंकरमुनीन्द्राय संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ श्वेत निर्मल सुअक्षत धार थाली,
अक्षय गुणा प्रगट कारण शक्तिशाली।
श्री तीर्थनाथ वृषभेष मुनीन्द्र चरणा,
पूजूँ सुमंगल करण सब पाप हरणा।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभतीर्थंकरमुनीन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चम्पा गुलाब इत्यादि सु पुण्य धारे,
है काम शत्रु बलवान तिसे विदारे।
श्री तीर्थनाथ वृषभेष मुनीन्द्र चरणा,
पूजूँ सुमंगल करण सब पाप हरणा।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभतीर्थंकरमुनीन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

फेणी सुहाल बरफी पकवान लाए,
क्षुत्रोग नाशने कारण काल पाए।
श्री तीर्थनाथ वृषभेष मुनीन्द्र चरणा,
पूजूँ सुमंगल करण सब पाप हरणा।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभतीर्थंकरमुनीन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ दीप रत्नत्रय लाय तमोपहारी।
तम मोह नाश मम हो आनन्द भारी।।
श्री तीर्थनाथ वृषभेष मुनीन्द्र चरणा,
पूजूँ सुमंगल करण सब पाप हरणा।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभतीर्थंकरमुनीन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

सुन्दर सुगंधित सु पावन धूप खेऊँ,
अरु कर्म काट को थाल निजात्म बेऊँ।
श्री तीर्थनाथ वृषभेष मुनीन्द्र चरणा,
पूजूँ सुमंगल करण सब पाप हरणा।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभतीर्थंकरमुनीन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

द्राक्षा बादाम फल सार भराय थाली,
शिव लाभ होय सुख से समता संभाली।
श्री तीर्थनाथ वृषभेष मुनीन्द्र चरणा,
पूजूँ सुमंगल करण सब पाप हरणा।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभतीर्थंकरमुनीन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुभ अष्ट द्रव्यमय उत्तम अर्घ्य लाया,
संसार खार जल तारण हेतु आया।
श्री तीर्थनाथ वृषभेष मुनीन्द्र चरणा,
पूजूँ सुमंगल करण सब पाप हरणा।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभतीर्थंकरमुनीन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(सृग्विणी)

जय मुदारूप तेरे सदा दोष ना,
ज्ञान श्रद्धान पूरित धरैं शोक ना।
राज को त्याग वैराग्य धारी भए,
मुक्ति का राज लेने परम मुनि थयै।।१।।

आत्म को जान के पाप को भान के,
तत्त्व को पाय के ध्यान उर आन के।
क्रोध को हान के मान को हान के,
लोभ को जीत के मोह को भान के।।२।।
धर्ममय होयके साधतैं मोक्ष को,
बाधते मोह को जीतते द्वेष को।
शांतता धारते साम्यता पालते,
आप पूजन किये सर्व अघ बालते।।३।।
धन्य हैं आज हम दान सम्यक् करें,
पात्र उत्तम महा पाप के दु:ख दरें।
पुण्य सम्पत्त भरें काज हमरे सरें,
आप सम होयके जन्म सागर तरें।।४।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभतीर्थंकरमुनीन्द्राय महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

देखो जी आदीश्वर स्वामी...

देखो जी आदीश्वर स्वामी, कैसा ध्यान लगाया है।
कर ऊपर कर सुभग विराजै, आसन थिर ठहराया है।।टेक.।।
जगत विभूति भूति सम तजकर, निजानंद पद ध्याया है।
सुरभित श्वासा आशा वासा, नासा दृष्टि सुहाया है।।1।।
कंचन वरन चले मन रंच न सुर-गिरि ज्यों थिर थाया है।
जास पास अहि मोर मृगी हरि, जाति विरोध नशाया है।।2।।
शुध-उपयोग हुताशन में जिन, वसुविधि समिध जलाया है।
श्यामलि अलकावलि सिर सोहे, मानो धुआँ उड़ाया है।।3।।
जीवन-मरन अलाभ-लाभ जिन सबको साम्य बताया है।
सुर नर नाग नमहिं पद जाके ''दौल'' तास जस गाया है।।4।।

ज्ञानकल्याणक स्तुति

(त्रोटक)

जय केवलज्ञान–प्रकाशधरं। ज्ञानावरणीय विनाश करं।
जय केवलदर्शन–नायक हो। दर्शन–आवरणी घायक हो।।१।।
जय वीर्य अनंत प्रकाशक हो। जय अंतराय अघनाशक हो।
तुम मोह बली क्षयकारक हो। क्षायिक समकित के धारक हो।।२।।
क्षायिक चारित्र विशाल धरं। आनन्द अनन्त प्रकाश धरं।
जग मांहि अपूरव सूरज हो। विकसन भवि जीवन नीरज हो।।३।।
मिथ्यात्व महा तम टालन हो। शिवमग उत्तम दरशावन हो।
तुम तारण–तरण तरंड वरं। सुखकारण रत्नकरण्डवरं।।४।।

....

(मुक्तादान)

नमोस्तु नमोस्तु नमोस्तु मुनीश,
परम तप के करतार रिषीश।
न मोह न मान न क्रोध न लोभ,
न हास्य न खेद न द्रोह न क्षोभ।।१।।
ममत्व न राग पदारथ सर्व,
चिदातम वेदत छांड़त गर्व।
सु भेदविज्ञान जगो चित बीच,
सु आतम अनुभव लावत खींच।।२।।
स्वतत्त्व रमन्त करत निज काज,
कषाय रिपु दलने को आज।
लियो सत ध्यान मई अति सार,
नमूँ तुम को जिन कर्म निवार।।३।।

केवलज्ञानकल्याणक पूजन

(गीता)

चौबीस जिनवर तीर्थकारी, ज्ञानकल्याणकधरं।
महिमा अपार प्रकाश जगमें, मोहमिथ्यातमहरं।।
कीने बहुत भविजीव सुखिया, दु:खसागरउद्धरं।
तिनकी चरण पूजा करें, तिन सम बने यह रुचि धरं।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रा: ज्ञानकल्याणकप्राप्ता: अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रा: ज्ञानकल्याणकप्राप्ता: अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ: ठ: स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रा: ज्ञानकल्याणकप्राप्ता: अत्र मम सन्निहितो भवत भवत वषट् सन्निधिकरणम्।

(चामर)

नीर लाय शीतलं महान मिष्टता धरे,
गन्ध शुद्ध मेलि के पवित्र झारिका भरे।
नाथ चौबिसों महान वर्तमान काल के,
बोध उत्सवं करूं प्रमाद सर्व टाल के।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्य: जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

श्वेत चन्दनं सुगन्धयुक्त सार लायके,
पात्र में धराय शांति कारणे चढ़ाय के।
नाथ चौबिसों महान वर्तमान काल के,
बोध उत्सवं करूं प्रमाद सर्व टाल के।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्य: संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

तन्दुलं भले सुश्वेत वर्ण दीर्घ लाइये,
पाय गुण सु अक्षतं अतृप्तिता नशाइये।
नाथ चौबिसों महान वर्तमान काल के,
बोध उत्सवं करूं प्रमाद सर्व टाल के।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः अक्षतं नि. स्वाहा।

वर्ण वर्ण पुष्पसार लाइये चुनाय के
काम कष्ट नाश हेतु पूजिये स्वभाव के।।
नाथ चौबिसों महान वर्तमान काल के,
बोध उत्सवं करूं प्रमाद सर्व टाल के।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षीर मोदकादि शुद्ध तुर्त ही बनाइये,
भूख रोग नाश हेतु चर्ण में चढ़ाइये।
नाथ चौबिसों महान वर्तमान काल के,
बोध उत्सवं करूं प्रमाद सर्व टाल के।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीप धार रत्नमय प्रकाशता महान है,
मोह अंधकार हार होत स्वच्छ ज्ञान है।
नाथ चौबिसों महान वर्तमान काल के,
बोध उत्सवं करूं प्रमाद सर्व टाल के।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

धूप गंध सार लाय धूपदान खेइये,
कर्म आठ को जलाय आप आप बेइये।
नाथ चौबिसों महान वर्तमान काल के,
बोध उत्सवं करूं प्रमाद सर्व टाल के।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

लौंग औ बादाम आम्र आदि पक्व फल लिये।
सुमुक्ति धाम पाय के स्वआत्मअमृत पिये।।
नाथ चौबिसों महान वर्तमान काल के,
बोध उत्सवं करूं प्रमाद सर्व टाल के।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः फलं निर्वपामीति स्वाहा।

तोय गंध अक्षतं सुपुष्प चारु चरु धरे,
दीप धूप फल मिलाय अर्घ्य देय सुख करे।।
नाथ चौबिसों महान वर्तमान काल के,
बोध उत्सवं करूं प्रमाद सर्व टाल के।।

ॐ ह्रीं श्रीवृषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञानकल्याणकमण्डित चौबीस तीर्थंकरों के लिए अर्घ्य

(चाली)

एकादशि फागुन वदि की, मरुदेवी माता जिनकी।
हत घाती केवल पायो, पूजत हम चित उमगायो।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्ण-एकादश्यां श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।१।।

एकादशि पूष सुदी को, अजितेश हती घाती को।
निर्मल निज ज्ञान उपाये, हम पूजत सम सुख पाये।।

ॐ ह्रीं पौषशुक्ल-एकादश्यां श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।२।।

कार्तिकवदि चौथ सुहाई, संभव केवल निधिपाई।
भविजीवन बोध दियो है, मिथ्यामत नाश कियो है।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णचतुर्थ्यां श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।३।।

चौदशि शुभ पौष सुदी को, अभिनन्दन हन घाती को।
केवल पा धर्म प्रचारा, पूजूँ चरणा हितकारा।।

ॐ ह्रीं पौषशुक्लचतुर्दश्यां श्रीअभिनन्दननाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।४।।

एकादशि चैत सुदी को, जिन सुमति ज्ञान लब्धी को।
पाकर भवि जीव उधारे, हम पूजत भव हरतारे।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्ल-एकादश्यां श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।५।।

मधु शुक्ला पूरणमासी, पद्मप्रभ तत्त्व-अभ्यासी।
केवल ले तत्त्वप्रकाशा, हम पूजत समसुख भासा।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लपूर्णिमायां श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।६।।

छठि फागुन की अंधियारी, चउ घातीकर्म निवारी।
निर्मल निज ज्ञान उपाया, धन धन सुपार्श्व जिनराया।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णषष्ठ्यां श्रीसुपार्श्वजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।७।।

फागुन वदि नौमि सुहाई, चन्द्रप्रभ आतम ध्याई।
हन घाती केवल पाया, हम पूजत सुख उपजाया।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णनवम्यां श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।८।।

कार्तिकसुदि दुतिया जानो, श्री पुष्पदंत भगवानो।
रज हर केवल दरशानो, हम पूजत पाप विलानो।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णद्वितीयायां श्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।९।।

चौदसि वदि पौष सुहानी, शीतलप्रभु केवलज्ञानी।
भव का संताप हटाया, समता सागर प्रगटाया।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णचतुर्दश्यां श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।१०।।

वदि माघ अमावसि जानो, श्रेयांस ज्ञान उपजानो।
सब जग में श्रेय कराया, हम पूजत मंगल पाया।।

ॐ ह्रीं माघकृष्ण-अमावस्यां श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।११।।

शुभ दुतिया माघ सुदी को, पाया केवल लब्धी को।
श्री वासुपूज्य भवितारी, हम पूजत अष्ट प्रकारी।।

ॐ ह्रीं माघशुक्ल-द्वितीयायां श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।१२।।

छठि माघ वदी हत घाती, केवल लब्धी सुख लाती।
पाई श्री विमल जिनेशा, हम पूजत कटत कलेशा।।

ॐ ह्रीं माघकृष्ण-षष्ठ्यां श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।१३।।

वदि चैत अमावसि गाई, निसु केवलज्ञान उपाई।
पूजूँ अनंत जिन चरणा, जो हैं अशरण के शरणा।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्ण-अमावस्यां श्रीअनंतनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।१४।।

मासांत पौष दिन भारी, श्री धर्मनाथ हितकारी।
पायो केवल सद्बोधं, हम पूजें छांड़ कुबोधं।।

ॐ ह्रीं पौषशुक्लपूर्णिमायाम् श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।१५।।

सुदि पूस इकादसि जानी, श्री शांतिनाथ सुखदानी।
लहि केवल धर्म प्रचारा, पूजूँ मैं अघ हरतारा।।

ॐ ह्रीं पौषशुक्ल-एकादश्यां श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।१६।।

वदि चैत्र तृतीया स्वामी, श्री कुन्थुनाथ गुणधामी।
निर्मल केवल उपजायो, हम पूजत ज्ञान बढायो।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णतृतीयायां श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।१७।।

कार्तिक सुदि बारस जानो, लहि केवलज्ञान प्रमाणो।
पर तत्त्व-निजत्व प्रकाशा, अरनाथ जजों हत आशा।।

ॐ ह्रीं कार्तिकशुक्लद्वादश्यां श्रीअरनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।१८।।

वदि पूस द्वितीया जाना, श्री मल्लिनाथ भगवाना।
हत घाती केवल पाये, हम पूजत ध्यान लगाये।।

ॐ ह्रीं पौषकृष्णद्वितीयायां श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।१९।।

वैसाख वदी नौमी को मुनिसुव्रत जिन केवल को।
लहि वीर्य अनंत सम्हारा, पूजूँ मैं सुख करतारा।।

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णनवम्यां श्रीमुनिसुव्रतनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।२०।।

अगहन सुदि ग्यारस आए, नमिनाथ ध्यान लौ लाए।
पाया केवल सुखदाई, हम पूजत चित हरषाई।।

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षशुक्ल-एकादश्यां श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।२१।।

पडिवा सुभ कार सुदी को, श्री नेमिनाथ जिनजीको।
इच्छो केवल सत ज्ञानं, हम पूजत ही दुःख हानं।।

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्लप्रतिपदायां श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं.।।२२।।

तिथि चैत्र चतुर्थी श्यामा, श्री पार्श्वप्रभु गुणधामा।
केवल लहि तत्त्वप्रकाशा, हम पूजत कर शिव आशा।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णचतुर्थ्यां श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।२३।।

दशमी वैशाख सुदि को, श्री वर्द्धमान जिनजी को।
उपजो केवल सुखदाई, हम पूजत विघ्न नशाई।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय ज्ञानकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं. ।।२४।।

जयमाला

(सृग्विणी)

जय ऋषभनाथ ज्ञान के सागरा,
घातिया घातकर आप केवल वरा।
कर्मबन्धनमई सांकला तोड़कर,
आपका स्वाद ले स्वाद पर छोड़कर।।१।।

धन्य तू धन्य तू धन्य तू नाथ जी,
सर्व साधू नमें तोहि को माथ जी।
दर्श तेरा करैं ताप मिट जात है,
कर्म भाजैं सभी पाप हट जात हैं।।२।।

धन्य पुरुषार्थ तेरा महा अद्भुतं,
मोहसा शत्रु मारा त्रिघाती हतं।
जीत त्रैलोक्य को सर्वदर्शी भए,
कर्मसेना हती दुर्ग चेतन लए।।३।।

आप सत्-तीर्थ त्रयरत्न से निर्मिता,
भव्य लेवें शरण होंय भव-भव रिता।
वे कुशल से तिरें संसृती सागरा,
जाय ऊरध लहें सिद्ध सुन्दर धरा।।४।।

यह समवशर्ण भवि जीव सुख पात हैं,
वाणि तेरी सुनें मन यही भात हैं।

नाथ दीजें हमें धर्म अमृत महा,
इह बिना सुख नहीं दुःख भव में सहा।।५।।

ना क्षुधा ना तृषा राग ना द्वेष है,
खेद चिन्ता नहीं आर्ति ना क्लेश है।
लोभ मद क्रोध माया नहीं लेश है,
वन्दता हूँ तुम्हें तू हि परमेश है।।६।।

ॐ ह्रीं वृषभादिवीरान्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः ज्ञानकल्याणकप्राप्तेभ्यः महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिव्यध्वनि प्रसारण हेतु इन्द्रों द्वारा प्रार्थना

(पद्धरि)

जय परम ज्योति ब्रह्मा मुनीश, जय आदिदेव वृषनाथ ईश।
परमेष्ठी परमातम जिनेश, अजरामर अक्षय गुण विशेष।।१।।
शङ्कर शिवकर हर सर्व मोह, योगी योगीश्वर कामद्रोह।
हो सूक्ष्म निरञ्जन सिद्ध बुद्ध, कर्मांजन मेटन तोय शुद्ध।।२।।
भविकमल प्रकाशन रवि महान, उत्तम वागीश्वर राग हान।
हो वीत द्वेष हो ब्रह्म रूप, सम्यग्दृष्टी गुणराज भूप।।३।।
निर्मल सुख इन्द्रिय रहित धार, सर्वज्ञ सर्वदर्शी अपार।
तुम वीर्य अनन्त धरो जिनेश, तुम गुण पावत नाहिं गणेश।।४।।
तुम नाम लिये अघ दूर जाय, तुम दर्शन तें भवभय नशाय।
स्वामिन् अब तत्त्वन का प्रभेद, कहिये जासे हट कर्म छेद।।५।।

विहार करने हेतु इन्द्रों द्वारा प्रार्थना

(स्तुति)

धन्य-धन्य जिनराज प्रमाणा, धर्मवृष्टिकारी भगवाना।
सत्यमार्ग दरशावनहारे, सरल शुद्ध मग चालनहारे।।१।।

आपी से आपी अरहन्ता, पूज्य भए त्रैलोक महन्ता।
स्व-पर भेदविज्ञान बताया, आतमतत्त्व पृथक् दरशाया।।२।।
स्वानुभूतिमय ध्यान जताया, कर्मकाण्ड पालन समझाया।
धर्म अहिंसामय दिखलाया, प्रेमकरन हितकरन बताया।।३।।
वस्तु अनेक धर्म धरतारा, स्याद्वाद परकाशन हारा।
मत विवाद को मेटनहारा, सत्य वस्तु झलकावनहारा।।४।।
धन तीर्थंकर तेरी वाणी, तीर्थ धर्म सुखकारण मानी।
करहु विहार नाथ बहु देशा, करहु प्रचार तत्त्व उपदेशा।।५।।

कर्त्तव्याष्टक

आतम हित ही करने योग्य, वीतराग प्रभु भजने योग्य।
सिद्ध स्वरूप ही ध्याने योग्य, गुरु निर्ग्रन्थ ही वंदन योग्य।।1।।
साधर्मी ही संगति योग्य, ज्ञानी साधक सेवा योग्य।
जिनवाणी ही पढ़ने योग्य, सुनने योग्य समझने योग्य।।2।।
तत्त्व प्रयोजन निर्णय योग्य, भेद-ज्ञान ही चिन्तन योग्य।
सब व्यवहार हैं जानन योग्य, परमारथ प्रगटावन योग्य।।3।।
वस्तुस्वरूप विचारन योग्य, निज वैभव अवलोकन योग्य।
चित्स्वरूप ही अनुभव योग्य, निजानंद ही वेदन योग्य।।4।।
अध्यातम ही समझने योग्य, शुद्धातम ही रमने योग्य।
धर्म अहिंसा धारण योग्य, दुर्विकल्प सब तजने योग्य।।5।।
श्री जिनधर्म प्रभावन योग्य, ध्रुव आतम ही भावन योग्य।
सकल परीषह सहने योग्य, सर्व कर्म मल दहने योग्य।।6।।
भव का भ्रमण मिटाने योग्य, क्षपक श्रेणी चढ़ जाने योग्य।
तजो अयोग्य करो अब योग्य, मुक्तिदशा प्रगटाने योग्य।।7।।
आया अवसर सबविधि योग्य, निमित्त अनेक मिले हैं योग्य।
हो पुरुषार्थ तुम्हारा योग्य, सिद्धि सहज ही होवे योग्य।।8।।

मोक्षकल्याणक स्तुति

जय ऋषभदेव गुणनिधि अपार।
पहुँचे शिव को निज शक्ति द्वार।।
वन्दूँ श्री सिद्ध महंत आज।
सुधरें जासें मम सर्व काज।।१।।

निर्वाण थान यह पूज्य धाम।
यह अग्नि पूज्य हे रमणराम।।
मन वच तन वन्दूँ बार-बार।
जिन कर्मवंश डालूँ उजाड़।।२।।

कैलाश महा तीरथ पुनीत।
जहं मुक्ति लही सब कर्म जीत।।
नहिं तैजस तन नहिं कारमाण।
नहिं औदारिक कोई प्रमाण।।३।।

है पुरुषाकार सुध्यानरूप।
जिम तन में था तिम है स्वरूप।।
तनु वातवलय में क्षेत्र जान।
पीवत स्वातम रस अप्रमाण।।४।।

हो शुद्ध चिदातम सुख निधान।
हो बल अनन्त धारी सुज्ञान।।
वन्दूँ मैं तुमको बार-बार।
भवसागर पार लहुँ अबार।।५।।

मोक्षकल्याणक पूजन

(त्रिभंगी)

जय-जय तीर्थंकर मुक्तिवधूवर भवसागर उद्धार करं,
जय-जय परमातम शुद्ध चिदातम कर्मकलंक निवारकरं।
जय-जय गुणसागर सुखरत्नाकर आत्ममगनता सार लहं,
जय-जय निर्वाणं पाय सुज्ञानं पूजत पद संसारहरं।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरा: मोक्षकल्याणकप्राप्ता: अत्र अवतरत अवतरत संवौषट् आह्वाननम्।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरा: मोक्षकल्याणकप्राप्ता: अत्र तिष्ठत तिष्ठत ठ: ठ: स्थापनम्।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतितीर्थंकरा: मोक्षकल्याणकप्राप्ता: अत्र मम सन्निहितो भवत भवत वषट् सन्निधिकरणम्।

(वसन्ततिलका)

पानी महान भरि शीतल शुद्ध लाऊँ,
जन्मादि रोगहर कारण भाव ध्याऊँ।
पूजूँ सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं,
पाऊँ महान शिवमंगल नाथ कालं।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्य: जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

केशर सुमिश्रित सुगन्धित चन्दनादी,
आताप सर्व भवनाशन मोह आदी।
पूजूँ सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं,
पाऊँ महान शिवमंगल नाथ कालं।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्य: संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दा समान बहु अक्षत धार थाली,
अक्षय स्वभाव पाऊँ गुणरत्नशाली।
पूजूँ सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं,
पाऊँ महान शिवमंगल नाथ कालं।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्य: अक्षयपदप्राप्तये अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

चम्पा गुलाब मरुवा बहु पुष्प लाऊँ,
दुख टार काम हरके निज भाव पाऊँ।
पूजूँ सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं,
पाऊँ महान शिवमंगल नाथ कालं।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्य: कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

ताजे महान पकवान बनाय धारे,
बाधा मिटाय क्षुध रोग स्वयं सम्हारे।
पूजूँ सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं,
पाऊँ महान शिवमंगल नाथ कालं।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्य: क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपावली जगमगाय अंधेर घाती,
मोहादि तम विघट जाय भव प्रतापी।
पूजूँ सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं,
पाऊँ महान शिवमंगल नाथ कालं।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्य: मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

चन्दन कपूर अगरादि सुगन्ध धूपं,
टालूँ जु अष्ट कर्म हो सिद्ध भूपं।

पूजूँ सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं,
पाऊँ महान शिवमंगल नाथ कालं।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

मीठे रसाल बादाम पवित्र लाए,
जासे महान फल मोक्ष सु आप पाए।
पूजूँ सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं,
पाऊँ महान शिवमंगल नाथ कालं।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

आठों सु द्रव्य ले हाथ अरघ बनाऊँ,
संसार वास हरके निज सुक्ख पाऊँ।
पूजूँ सदा चतुर्विंशति सिद्ध कालं,
पाऊँ महान शिवमंगल नाथ कालं।।

ॐ ह्रीं श्रीऋषभादिमहावीरपर्यन्तचतुर्विंशतिजिनेन्द्रेभ्यः अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोक्षकल्याणक मण्डित चौबीस तीर्थंकरों के लिए अर्घ्य

(गीता)

चौदश वदी शुभ माघ की, कैलाशगिरि निजध्याय के।
वृषभेश सिद्ध हुए शचीपति, पूजते हित पाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं माघकृष्णचतुर्दश्यां श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।।१।।

शुभ चैत सुदि पांचम दिना, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
अजितेश सिद्ध हुए भविकगण, पूजते हित पाय के।।

हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लपंचम्यां श्रीअजितनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं।।२।।

शुभ माघ सुदि षष्ठि दिना, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
सम्भव निजातम केलि करते, सिद्ध पदवी पाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं माघशुक्लषष्ठ्यां श्रीसंभवनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं।।३।।

वैशाख सुदि षष्ठी दिना, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
अभिनन्दन शिवधाम पहुँचे, शुद्ध निज गुण पाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लषष्ठयां श्रीअभिनंदननाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।।४।।

शुभ चैत सुदि एकादशी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
सुमतिजिन शिवधाम पायो, आठ कर्म नशाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्ल-एकादश्यां श्रीसुमतिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।।५।।

शुभ कृष्ण फाल्गुन सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री पद्मप्रभ निर्वाण पहुँचे, स्वात्म-अनुभव पाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां श्रीपद्मप्रभजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।।६।।

शुभ कृष्ण फाल्गुन सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री जिन सुपार्श्व स्व स्थान लीयो, स्वकृत आनंद पाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णसप्तम्यां श्रीसुपार्श्वजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं।।७।।

शुभ शुक्ल फाल्गुन सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री चन्द्रप्रभ निर्वाण पहुँचे, शुद्ध ज्योति जगाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लसप्तम्यां श्रीचन्द्रप्रभजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं।।८।।

शुभ भाद्र शुक्ला अष्टमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री पुष्पदंत स्वधाम पायो, स्वात्म गुण झलकाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं भाद्रशुक्ल-अष्टम्यां श्रीपुष्पदंतजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं।।९।।

दिन अष्टमी शुभ क्वाँर सुद, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्रीनाथशीतल मोक्ष पाए, गुण अनन्त लखाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं आश्विनशुक्ल-अष्टम्यां श्रीशीतलनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं।।१०।।

दिन पूर्णमासी श्रावणी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
जिन श्रेयनाथ स्वधाम पहुँचे, आत्मलक्ष्मी पाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लपूर्णिमायां श्रीश्रेयांसनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।११।।

शुभ भाद्र सुद चौदश दिना, मंदारगिरि निज ध्याय के।
श्री वासुपूज्य स्वथान लीनो, कर्म आठ जलाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं भाद्रपदशुक्लचतुर्दश्यां श्रीवासुपूज्यजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं।।१२।।

आषाढ़ वद शुभ अष्टमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री विमल निर्मल धाम लीनो, गुण पवित्र बनाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं आषाढकृष्ण-अष्टम्यां श्रीविमलनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१३।।

अमावसी वद चैत्र की, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
स्वामी अनन्त स्वधाम पायो, गुण अनन्त लखाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्ण-अमावस्यां श्रीअनन्तनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१४।।

शुभ ज्येष्ठ शुक्ला चौथ दिन, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री धर्मनाथ स्वधर्मनायक, भये निज गुण पाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठशुक्लचतुर्थ्यां श्रीधर्मनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं।।१५।।

शुभ ज्येष्ठ कृष्णा चौदसी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री शांतिनाथ स्वधाम पहुँचे, परम मार्ग बताय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां श्रीशांतिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं।।१६।।

वैशाख शुक्ला प्रतिपदा, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री कुन्थुनाथ स्वधाम लीनो, परम पद झलकाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लप्रतिपदायां श्रीकुन्थुनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।१७।।

अमावसी वद चैत की, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री अरनाथ स्वथान लीनो, अमर लक्ष्मी पाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्ण-अमावस्यां श्रीअरनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं।।१८।।

शुभ शुक्ल फाल्गुन पंचमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री मल्लिनाथ स्वथान पहुँचे, परम पदवी पाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनशुक्लपंचम्यां श्रीमल्लिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं।।१९।।

फाल्गुन वदी शुभ द्वादशी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
जिननाथ मुनिसुव्रत पधारे, मोक्ष आनन्द पाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्णद्वादश्यां श्रीमुनिसुव्रतजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं।।२०।।

वैशाख कृष्णा चौदशी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
नमिनाथ मुक्ति विशाल पाई, सकल कर्म नशाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं वैशाखकृष्णचतुर्दश्यां श्रीनमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं।।२१।।

आषाढ़ शुक्ला सप्तमी, गिरनारगिरि निज ध्याय के।
श्री नेमिनाथ स्वधाम पहुँचे, अष्टगुण झलकाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं आषाढशुक्लसप्तम्यां श्रीनेमिनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं।।२२।।

शुभ श्रावणी सुद सप्तमी, सम्मेदगिरि निज ध्याय के।
श्री पार्श्वनाथ स्वथान पहुँचे, सिद्धि अनुपम पाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं श्रावणशुक्लसप्तम्यां श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं।।२३।।

आमावसी वद कार्तिकी, पावापुरी निज ध्याय के।
श्री वर्द्धमान स्वधाम लीनो, कर्म वंश जलाय के।।
हम धार अर्घ्य महान पूजा, करें गुण मन लाय के।
सब राग दोष मिटाय के, शुद्धात्म मन में भाय के।।

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्ण-अमावस्यां श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय मोक्षकल्याणकप्राप्ताय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।२४।।

जयमाला

(भुजंगप्रयात)

नमस्ते नमस्ते नमस्ते जिनन्दा।
तुम्हीं सिद्धरूपी हरे कर्म फंदा।।
तुम्हीं ज्ञानसूरज भविकनीरजों को।
तुम्हीं ध्येयवायू हरो सब रजों को।।१।।
तुम्हीं निष्कलंक चिदाकार चिन्मय।
तुम्हीं अक्षजीतं निजाराम तन्मय।।
तुम्हीं लोकज्ञाता तुम्हीं लोकपालं।
तुम्हीं सर्वदर्शी हता मान कालं।।२।।

तुम्हीं क्षेमकारी तुम्हीं योगिराजं।
तुम्हीं शांत ईश्वर कियो आप काजं।।
तुम्हीं निर्भय निर्मलं वीतमोहं।
तुम्हीं साम्य अमृत पियो वीतद्रोहं।।३।।

तुम्हीं भवउदधि परकर्ता जिनेशं।
तुम्हीं मोहतम के विदारक दिनेशं।।
तुम्हीं ज्ञाननीरं भरे क्षीरसागर।
तुम्हीं रत्न गुण के सुगम्भीर आकर।।४।।

तुम्हीं चन्द्रमा निजसुधा के प्रचारक।
तुम्हीं योगियों के परम प्रेमधारक।।
तुम्हीं ध्यान गोचर सुतीर्थङ्करों के।
तुम्हीं पूज्य स्वामी परम गणधरों के।।५।।

तुम्हीं हो अनादी नहीं जन्म तेरा।
तुम्हीं हो सदा सत् नहीं अंत तेरा।।
तुम्हीं सर्वव्यापी परम बोध द्वारा।
तुम्हीं आत्मव्यापी चिदानंद धारा।।६।।

तुम्हीं हो अनित्यं स्वपरिणाम द्वारा।
तुम्हीं हो अभेदं अमिट द्रव्य द्वारा।।
तुम्हीं भेदरूपं गुणानन्त द्वारा।
तुम्हीं नास्तिरूपं परानन्त द्वारा।।७।।

तुम्हीं निर्विकारं अमूरत अखेदं।
तुम्हीं निष्कषायं तुम्हीं जीत वेदं।।
तुम्हीं हो चिदाकार साकार शुद्धं।
तुम्हीं हो गुणस्थान दूर प्रबुद्धं।।८।।

तुम्हीं हो समयसार निज में प्रकाशी।
तुम्हीं हो स्वचारित्र आतमविकाशी।।
तुम्हीं हो निरास्रव निराहार ज्ञानी।
तुम्हीं निर्जराबिन परम सुखनिधानी।।९।।

तुम्हीं हो अबंधं तुम्हीं हो अमोक्षं।
तुम्हीं कल्पनातीत हो नित्य मोक्षं।।
तुम्हीं हो अवाच्यं तुम्हीं हो अचिन्त्यं।
तुम्हीं हो सुवाच्यं सु गुणराज नित्यं।।१०।।

तुम्हीं सिद्धराजं तुम्हीं मोक्षराजं।
तुम्हीं तीन भू के ऊरध विराजं।।
तुम्हीं वीतरागं तदपि काज सारं।
तुम्हीं भक्तजन भाव का मल निवारं।।११।।

करैं मोक्षकल्याणकं भक्त भीने।
फुरैं भाव शुद्धं यही भाव कीने।।
नमे हैं जजे हैं सु आनन्द धारें।
शरण मंगलोत्तम तुम्हीं को विचारें।।१२।।

(दोहा)

परम सिद्ध चौबीस जिन, वर्तमान सुखकार।
पूजत भजत सु भाव से, होय विघ्न निरवार।।

ॐ ह्रीं ऋषभादिवीरांतचतुर्विंशतिवर्तमानजिनेन्द्रेभ्य: मोक्षकल्याणकप्राप्तेभ्य: महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

बिम्बप्रतिष्ठा हो सफल, नरनारी अघहार।
वीतराग-विज्ञानमय, धर्म बढ़ो अधिकार।।

पुष्पांजलिं क्षिपेत्।

विशेष स्तुति

(त्रिभंगी)

जय जय अरहंता सिद्ध महंता, आचारज उवझाय वरं,
जय साधु महानं सम्यग्ज्ञानं सम्यक्चारित्र पालकरं।
हैं मंगलकारी भवहरतारी पापप्रहारी पूज्यवरं,
दीनन निस्तारन सुख विस्तारन करुणाधारी ज्ञानवरं।।१।।

हम अवसर पाए पूज रचाए करी प्रतिष्ठा बिम्ब महा,
बहुपुण्य उपाए पाप धुवाए सुख उपजाए सार महा।
जिनगुण कथ पाए भाव बढ़ाए दोष हटाये यश लीना,
तन सफल कराया आत्म लखाया दुर्गतिकारण हर लीना।।२।।

निज मति अनुसारं बल अनुसारं यज्ञ विधान बनाया है,
सब भूल चूक प्रभु क्षमा करो अब यह अरदास सुनाया है।
हम दास तिहारे नाम लेत हैं इतना भाव बढाया है,
सच याही से सब काज पूर्ण हों यह श्रद्धान जमाया है।।३।।

तुम गुण का चिन्तन होय निरन्तर जावत मोक्ष न पद पावें,
तुमरी पदपूजा करैं निरन्तर जावत उच्च न हो जावें।
हम पढ़न तत्त्व अभ्यास रहे नित जावत बोध न सर्व लहें,
शुभसामायिक अर ध्यान आत्म का करत रहें निजतत्त्व गहें।।४।।

जय जय तीर्थंकर गुणरत्नाकर सम्यक्ज्ञान दिवाकर हो,
जय जय गुणपूरण औगुणचूरण संशयतिमिर हरणकर हो।
जय जय भवसागर तारणकारण तुम ही भवि आलम्बन हो,
जय जय कृतकृत्यं नमें तुम्हें नित तुम सब संकट टारन हो।।५।।

निर्वाणकाण्ड (भाषा)

(दोहा)

वीतराग वन्दौं सदा, भावसहित सिर नाय।
कहूँ काण्ड निर्वाण की, भाषा सुगम बनाय।।

(चौपाई)

अष्टापद आदीश्वर स्वामी, वासुपूज्य चम्पापुरि नामी।
नेमिनाथ स्वामी गिरनार, बन्दौं भाव-भगति उर धार।।
चरम तीर्थंकर चरम-शरीर, पावापुर स्वामी महावीर।
शिखर समेद जिनेसुर बीस, भावसहित बन्दौं निश-दीस।।
वरदत्तराय रु इन्द्र मुनिन्द, सायरदत्त आदि गुणवृन्द।
नगर तारवर मुनि उठकोड़ि, बन्दौं भावसहित कर जोड़ि।।
श्री गिरनार शिखर विख्यात, कोड़ि बहत्तर अरु सौ सात।
शम्भु प्रद्युम्न कुमर द्वै भाय, अनिरुध आदि नमूँ तसुपाय।।
रामचन्द के सुत द्वै वीर, लाडनरिन्द आदि गुणधीर।
पाँच कोड़ि मुनि मुक्ति मँझार, पावागिरि बन्दौं निरधार।।
पाण्डव तीन द्रविड़-राजान, आठ कोड़ि मुनि मुकति पयान।
श्री शत्रुंजयगिरि के सीस, भावसहित बन्दौं निश-दीस।।
जे बलभद्र मुकति में गये, आठ कोड़ि मुनि औरहु भये।
श्री गजपन्थ शिखर सुविशाल, तिनके चरण नमूँ तिहुँ काल।।
राम हणू सुग्रीव सुडील, गव गवाख्य नील महानील।
कोड़ि निन्याणव मुक्ति पयान, तुंगीगिरि वन्दौं धरि ध्यान।।
नंग-अनंगकुमार सुजान, पाँच कोड़ि अरु अर्द्ध प्रमाण।
मुक्ति गये सोनागिरि शीश, ते बन्दौं त्रिभुवनपति ईस।।
रावण के सुत आदिकुमार, मुक्ति गये रेवा-तट सार।
कोटि पंच अरु लाख पचास, ते बन्दौं धरि परम हुलास।।

रेवानदी सिद्धवर कूट, पश्चिम दिशा देह जहँ छूट।
द्वै चक्री दश कामकुमार, ऊठकोड़ि वन्दौं भव पार।।
बड़वानी बड़नगर सुचंग, दक्षिण दिशि गिरि चूल उतंग।
इन्द्रजीत अरु कुम्भ जु कर्ण, ते बन्दौं भव-सागर-तर्ण।।
सुवरणभद्र आदि मुनि चार, पावागिरि-वर शिखर मँझार।
चेलना नदी-तीर के पास, मुक्ति गये बन्दौं नित तास।।
फलहोड़ी बड़गाम अनूप, पश्चिम दिशा द्रोणगिररूप।
गुरुदत्तादि मुनीश्वर जहाँ, मुक्ति गये बन्दौं नित तहाँ।।
बालि महाबालि मुनि दोय, नागकुमार मिले त्रय होय।
श्री अष्टापद मुक्ति मँझार, ते बन्दौं नित सुरत सँभार।।
अचलापुर की दिश ईसान, तहाँ मेंढ़गिरि नाम प्रधान।
साढ़े तीन कोड़ि मुनिराय, तिनके चरण नमूँ चित लाय।।
वंशस्थल वन के ढिग होय, पश्चिम दिशा कुन्थुगिरि सोय।
कुलभूषण देशभूषण नाम, तिनके चरणनि करूँ प्रणाम।।
जसरथ राजा के सुत कहे, देश कलिंग पाँच सौ लहे।
कोटिशिला मुनि कोटि प्रमान, वन्दन करूँ जोरि जुग पान।।
समवसरण श्रीपार्श्व-जिनंद, रेसन्दीगिरि नयनानन्द।
वरदत्तादि पंच ऋषिराज, ते बन्दौं नित धरम-जिहाज।।
मथुरापुर पवित्र उद्यान, जम्बूस्वामीजी निर्वाण।
चरमकेवली पंचम काल, ते बन्दौं नित दीनदयाल।।
तीन लोक के तीरथ जहाँ, नित प्रति वन्दन कीजै तहाँ।
मन-वच-कायसहित सिरनाय, वन्दनकरहिं भविक गुणगाय।।
संवत् सतरह सौ इकताल, आश्विन सुदि दशमी सुविशाल।
'भैया' वन्दन करहिं त्रिकाल, जय निर्वाणकाण्ड गुणमाल।।

****

जिनमार्ग

कितना सुन्दर, कितना सुखमय, अहो सहज जिनपंथ है।
धन्य धन्य स्वाधीन निराकुल, मार्ग परम निर्ग्रन्थ है।।टेक।।
श्री सर्वज्ञ प्रणेता जिसके, धर्म पिता अति उपकारी।
तत्त्वों का शुभ मर्म बताती, माँ जिनवाणी हितकारी।।
अंगुली पकड़ सिखाते चलना, ज्ञानी गुरु निर्ग्रन्थ है।।1।।
देव-शास्त्र-गुरु की श्रद्धा ही, समकित का सोपान है।
महाभाग्य से अवसर आया, करो सही पहिचान है।।
पर की प्रीति महा दु:खदायी, कहा श्री भगवंत है।।2।।
निर्णय में उपयोग लगाना ही, पहला पुरुषार्थ है।
तत्त्व विचार सहित प्राणी ही, समझ सके परमार्थ है।।
भेद-ज्ञान कर करो स्वानुभव, विलसे सौख्य बसंत है।।3।।
ज्ञानाभ्यास करो मनमाहीं, विषय-कषायों को त्यागो।
कोटि उपाय बनाय भव्य, संयम में ही नित चित पागो।।
ऐसे ही परमानन्द वेदें, देखो ज्ञानी संत हैं।।4।।
रत्नत्रयमय अक्षय सम्पत्ति, जिनके प्रगटी सुखकारी।
अहो शुभाशुभ कर्मोदय में, परिणति रहती अविकारी।।
उनकी चरण शरण में ही हो, दुखमय भव का अंत है।।5।।
क्षमाभाव हो दोषों के प्रति, क्षोभ नहीं किंचित् आवे।
समता भाव आराधन से निज, चित्त नहीं डिगने पावे।।
उर में सदा विराजें अब तो, मंगलमय भगवंत हैं।।6।।
हो निशंक, निरपेक्ष परिणति, आराधन में लगी रहे।
क्लेशित हो नहीं पापोदय में, जिनभक्ति में पगी रहे।।
पुण्योदय में अटक न जावे, दीखे साध्य महंत है।।7।।

परलक्षी वृत्ति ही आकर, शिवसाधन में विघ्न करे।
हो पुरुषार्थ अलौकिक ऐसा, सावधान हर समय रहे।।
नहीं दीनता, नहीं निराशा, आतम शक्ति अनंत है।।8।।

चाहे जैसा जगत परिणमे, इष्टानिष्ट विकल्प न हो।
ऐसा सुन्दर मिला समागम, अब मिथ्या संकल्प न हो।।
शान्तभाव हो प्रत्यक्ष भासे, मिटे कषाय दुरन्त हैं।।9।।

यही भावना प्रभो स्वप्न में भी, विराधना रंच न हो।
सत्य, सरल परिणाम रहें नित, मन में कोई प्रपंच न हो।।
विषय कषायारम्भ रहित, आनन्दमय पद निर्ग्रन्थ हैं।।10।।

धन्य घड़ी हो जब प्रगटावें, मंगलकारी जिनदीक्षा।
प्रचुर स्वसंवेदनमय जीवन, होय सफल तब ही शिक्षा।।
अविरल निर्मल आत्मध्यान हो, होय भ्रमण का अंत है।।11।।

अहो जितेन्द्रिय जितमोही ही, सहज परम पद पाता है।
समता से सम्पन्न साधु ही, सिद्ध दशा प्रगटाता है।।
बुद्धि व्यवस्थित हुई सहज ही, यही सहज शिवपंथ है।।12।।

आराधन में क्षण-क्षण बीते, हो प्रभावना सुखकारी।
इसी मार्ग में सब लग जावें, भाव यही मंगलकारी।।
सद्दृष्टि-सद्ज्ञान-चरणमय, लोकोत्तम यह पंथ है।।13।।

तीन लोक अरु तीन काल में, शरण यही है भविजन को।
द्रव्य दृष्टि से निज में पाओ, व्यर्थ न भटकाओ मन को।।
इसी मार्ग में लगें लगावें, वे ही सच्चे संत हैं।।14।।

है शाश्वत अकृत्रिम वस्तु, ज्ञानस्वभावी आत्मा।
जो आतम आराधन करते, बनें सहज परमात्मा।।
परभावों से भिन्न निहारो, आप स्वयं भगवंत है।।15।।

ज्ञानाष्टक

निरपेक्ष हूँ कृतकृत्य मैं, बहु शक्तियों से पूर्ण हूँ।
मैं निरालम्बी मात्र ज्ञायक, स्वयं में परिपूर्ण हूँ।।
पर से नहीं संबंध कुछ भी, स्वयं सिद्ध प्रभु सदा।
निर्बाध अरु निःशंक निर्भय, परम आनन्दमय सदा।।1।।

निज लक्ष से होऊँ सुखी, नहिं शेष कुछ अभिलाष है।
निज में ही होवे लीनता, निज का हुआ विश्वास है।।
अमूर्तिक चिन्मूर्ति मैं, मंगलमयी गुणधाम हूँ।
मेरे लिए मुझसा नहीं, सच्चिदानन्द अभिराम हूँ।।2।।

स्वाधीन शाश्वत मुक्त अक्रिय अनन्त वैभववान हूँ।
प्रत्यक्ष अन्तर में दिखे, मैं ही स्वयं भगवान हूँ।।
अव्यक्त वाणी से अहो, चिन्तन न पावे पार है।
स्वानुभव में सहज भासे, भाव अपरम्पार है।।3।।

श्रद्धा स्वयं सम्यक् हुई, श्रद्धान ज्ञायक हूँ हुआ।
ज्ञान में बस ज्ञान भासे, ज्ञान भी सम्यक् हुआ।।
भग रहे दुर्भाव सम्यक्, आचरण सुखकार है।
ज्ञानमय जीवन हुआ, अब खुला मुक्ति द्वार है।।4।।

जो कुछ झलकता ज्ञान में, वह ज्ञेय नहिं बस ज्ञान है।
नहिं ज्ञेयकृत किंचित् अशुद्धि, सहज स्वच्छ सुज्ञान है।।
परभाव शून्य स्वभाव मेरा, ज्ञानमय ही ध्येय है।
ज्ञान में ज्ञायक अहो, मम ज्ञानमय ही ज्ञेय है।।5।।

ज्ञान ही साधन, सहज अरु ज्ञान ही मम साध्य है।
ज्ञानमय आराधना, शुद्ध ज्ञान ही आराध्य है।।
ज्ञानमय ध्रुव रूप मेरा, ज्ञानमय सब परिणमन।
ज्ञानमय ही मुक्ति मम, मैं ज्ञानमय अनादिनिधन।।6।।

ज्ञान ही है सार जग में, शेष सब निस्सार है।
ज्ञान से च्युत परिणमन का नाम ही संसार है।।
ज्ञानमय निजभाव को बस भूलना अपराध है।
ज्ञान का सम्मान ही, संसिद्धि सम्यक् राध है।।7।।

अज्ञान से ही बंध, सम्यग्ज्ञान से ही मुक्ति है।
ज्ञानमय संसाधना, दुख नाशने की युक्ति है।।
जो विराधक ज्ञान का, सो डूबता मंझधार है।
ज्ञान का आश्रय करे, सो होय भव से पार है।।8।।

यों जान महिमाज्ञान की, निजज्ञान को स्वीकार कर।
ज्ञान के अतिरिक्त सब, परभाव का परिहार कर।।
निजभाव से ही ज्ञानमय हो, परम-आनन्दित रहो।
होय तन्मय ज्ञान में, अब शीघ्र शिव-पदवी धरो।।9।।

सान्त्वनाष्टक

शान्त चित्त हो निर्विकल्प हो, आत्मन् निज में तृप्त रहो।
व्यग्र न होओ क्षुब्ध न होओ, चिदानन्द रस सहज पियो।।टेक।।

स्वयं स्वयं में सर्व वस्तुएँ, सदा परिणमित होती हैं।
इष्ट-अनिष्ट न कोई जग में, व्यर्थ कल्पना झूठी है।।
धीर-वीर हो मोहभाव तज, आतम-अनुभव किया करो।।
व्यग्र न होओ क्षुब्ध न होओ...... ।।1।।

देखो प्रभु के ज्ञान माहिं, सब लोकालोक झलकता है।
फिर भी सहज मग्न अपने में, लेश नहीं आकुलता है।।
सच्चे भक्त बनो प्रभुवर के ही पथ का अनुसरण करो।।
व्यग्र न होओ क्षुब्ध न होओ......।।2।।

देखो मुनिराजों पर भी, कैसे-कैसे उपसर्ग हुए।
धन्य-धन्य वे साधु साहसी, आराधन से नहीं चिगे।।
उनको निज-आदर्श बनाओ, उर में समता-भाव धरो।।
व्यग्र न होओ क्षुब्ध न होओ......।।3।।

व्याकुल होना तो, दुख से बचने का कोई उपाय नहीं।
होगा भारी पाप बंध ही, होवे भव्य अपाय नहीं।।
ज्ञानाभ्यास करो मन माहीं, दुर्विकल्प दुखरूप तजो।।
व्यग्र न होओ क्षुब्ध न होओ...... ।।4।।

अपने में सर्वस्व है अपना, परद्रव्यों में लेश नहीं।
हो विमूढ पर में ही क्षण, करो व्यर्थ संक्लेश नहीं।।
अरे विकल्प अकिंचित्कर ही, ज्ञाता हो ज्ञाता ही रहो।।
व्यग्र न होओ क्षुब्ध न होओ......।।5।।

अन्तर्दृष्टि से देखो नित, परमानन्दमय आत्मा।
स्वयंसिद्ध निर्द्वन्द निरामय, शुद्ध बुद्ध परमात्मा।।
आकुलता का काम नहीं कुछ, ज्ञानानन्द का वेदन हो।।
व्यग्र न होओ क्षुब्ध न होओ......।।6।।

सहज तत्त्व ही सहज भावना, ही आनन्द प्रदाता है।
जो भावे निश्चय शिव पावे, आवागमन मिटाता है।।
सहजतत्त्व ही सहज ध्येय है, सहजरूप नित ध्यान करो।।
व्यग्र न होओ क्षुब्ध न होओ......।।7।।

उत्तम जिन वचनामृत पाया, अनुभव कर स्वीकार करो।
पुरुषार्थी हो स्वाश्रय से इन, विषयों का परिहार करो।।
ब्रह्मभाव मंगल चर्या, हो निज में ही मग्न रहो।।
व्यग्र न होओ क्षुब्ध न होओ......।।8।।

मेरा सहज जीवन

अहो चैतन्य आनन्दमय, सहज जीवन हमारा है।
अनादि अनंत पर निरपेक्ष, ध्रुव जीवन हमारा है।।टेक।।
हमारे में न कुछ पर का, हमारा भी नहीं पर में।
द्रव्य दृष्टि हुई सच्ची, आज प्रत्यक्ष निहारा है।।1।।
अनंतों शक्तियाँ उछलें, सहज सुख ज्ञानमय विलसें।
अहो प्रभुता परम पावन, वीर्य का भी न पारा है।।2।।
नहीं जन्मूँ नहीं मरता, नहीं घटता नहीं बढता।
अगुरुलघु रूप ध्रुव ज्ञायक, सहज जीवन हमारा है।।3।।
सहज ऐश्वर्य मय मुक्ति, अनंतों गुण मयी ऋद्धि।
विलसती नित्य ही सिद्धि, सहज जीवन हमारा है।।4।।
किसी से कुछ नहीं लेना, किसी को कुछ नहीं देना।
अहो निश्चिंत 'परमानन्द' मय जीवन हमारा है।।5।।
ज्ञानमय लोक है मेरा, ज्ञान ही रूप है मेरा।
परम निर्दोष समता मय, ज्ञान जीवन हमारा है।।6।।
मुक्ति में व्यक्त है जैसा, यहाँ अव्यक्त है वैसा।
अबद्धस्पृष्ट अनन्य, नियत जीवन हमारा है।।7।।
सदा ही है न होता है, न जिसमें कुछ भी होता है।
अहो उत्पाद व्यय निरपेक्ष, ध्रुव जीवन हमारा है।।8।।
विनाशी ब्रह्म जीवन की, आज ममता तजी झूठी।
रहे चाहे अभी जाये, सहज जीवन हमारा है।।9।।
नहीं परवाह अब जग की, नहीं है चाह शिवपद की।
अहो परिपूर्ण निष्पृह ज्ञान, मय जीवन हमारा है।।10।।

समता षोडसी

समता रस का पान करो, अनुभव रस का पान करो।
शान्त रहो शान्त रहो, सहज सदा ही शान्त रहो।।टेक।।
नहीं अशान्ति का कुछ कारण, ज्ञान दृष्टि से देखे अहो।
क्यों कर लक्ष करे रे मूरख, तेरे से सब भिन्न अहो।।1।।
देह भिन्न है कर्म भिन्न हैं, उदय आदि भी भिन्न अहो।
नहीं अधीन हैं तेरे कोई, सब स्वाधीन परिणमित हो।।2।।
पर नहीं तुझसे कहता कुछ भी, सुखदुख का कारण नहीं हो।
करके मूढ कल्पना मिथ्या, तू ही व्यर्थ आकुलित हो।।3।।
इष्ट अनिष्ट न कोई जग में, मात्र ज्ञान के ज्ञेय अहो।
हो निरपेक्ष करो निज अनुभव, बाधक तुमको कोई न हो।।4।।
तुम स्वभाव से ही आनंदमय, पर से सुख तो लेश न हो।
झूठी आशा तृष्णा छोड़ो, जिन वचनों में चित्त धरो।।5।।
पर द्रव्यों का दोष न देखो, क्रोध अग्नि में नहीं जलो।
नहीं चाहो अनुरूप प्रवर्तन, भेद ज्ञान ध्रुव दृष्टि धरो।।6।।
जो होता है वह होने दो, होनी को स्वीकार करो।
कर्तापन का भाव न लाओ, निज हित का पुरुषार्थ करो।।7।।
दया पहले अपने पर, आराधन से नहीं चिगो।
कुछ विकल्प यदि आवे तो भी, सम्बोधन समतामय हो।।8।।
यदि माने तो सहज योग्यता, अहंकार का भाव न हो।
नहीं माने भवितव्य विचारो, जिससे किंचित् खेद न हो।।9।।
हीनभाव जीवों के लखकर, ग्लानिभाव नहीं मन में हो।
कर्मोदय की अति विचित्रता, समझो स्थितिकरण करो।।10।।
अरे कलुषता पाप बंध का, कारण लखकर त्याग करो।
आलस छोड़ो बनो उद्यमी, पर सहाय की चाह न हो।।11।।

पापोदय में चाह व्यर्थ है, नहीं चाहने पर भी हो।
पुण्योदय में चाह व्यर्थ है, सहजपने मन वांछित हो।।12।।
आर्तध्यान कर बीज दुख के, बोना तो अविवेक अहो।
धर्म ध्यान में चित्त लगाओ, होय निर्जरा बंध न हो।।13।।
करो नहीं कल्पना असम्भव, अब यथार्थ स्वीकार करो।
उदासीन हो पर भावों से सम्यक् तत्त्व विचार करो।।14।।
तजा संग लौकिक जीवों का, भोगों के आधीन न हो।
सुविधाओं की दुविधा त्यागो, एकाकी शिवपंथ चलो।।15।।
अति दुर्लभ अवसर पाया है, जग प्रपंच में नहीं पड़ो।
करो साधना जैसे भी हो, यह नर भव अब सफल करो।।16।।

वीतरागी देव तुम्हारे....

वीतरागी देव तुम्हारे जैसा जग में देव कहाँ।
मार्ग बताया है जो जग को कह न सके कोई और यहाँ।।
वीतरागी देव तुम्हारे जैसा जग में देव कहाँ।।टेक।।

है सब द्रव्य स्वतंत्र जगत में कोई न किसी का काम करे।
अपने-अपने स्वचतुष्टय में सभी द्रव्य विश्राम करें।।
अपनी-अपनी सहज गुफा में रहते पर से मौन यहाँ।
वीतरागी देव तुम्हारे जैसा जग में देव कहाँ।।१।।

भाव शुभाशुभ का भी कर्ता, बनता जो दीवाना है।
ज्ञायक भाव शुभाशुभ से भी भिन्न न उसने जाना है।।
अपने से अनजान तुझे भगवान बताते देव यहाँ।
वीतरागी देव तुम्हारे जैसा जग में देव कहाँ।।२।।

पुण्य-पाप भी पर आश्रित है, उसमें धर्म नहीं होता।
ज्ञान भावमय निज परिणति से बन्धन कर्म नहीं होता।।
निज आश्रय से ही मुक्ति है कहते श्री जिनदेव यहाँ।
वीतरागी देव तुम्हारे जैसा जग में देव कहाँ।।३।।

परमार्थ शरण

अशरण जग में शरण एक शुद्धातम ही भाई।
धरो विवेक हृदय में आशा पर की दुखदाई।।1।।

सुख दुख कोई न बाँट सके यह परम सत्य जानो।
कर्मोदय अनुसार अवस्था संयोगी मानो।।2।।

कर्म न कोई लेवे-देवे प्रत्यक्ष ही देखो।
जन्मे-मरे अकेला चेतन तत्त्वज्ञान लेखो।।3।।

पापोदय में नहीं सहाय का निमित्त बने कोई।
पुण्योदय में नहीं दण्ड का भी निमित्त होई।।4।।

इष्ट-अनिष्ट कल्पना त्यागो हर्ष-विषाद तजो।
समता धर महिमामय अपना आतम आप भजो।।5।।

शाश्वत सुखसागर अन्तर में देखो लहरावे।
दुर्विकल्प में जो उलझे वह लेश न सुख पावे।।6।।

मत देखो संयोगों को कर्मोदय मत देखो।
मत देखो पर्यायों को गुणभेद नहीं देखो।।7।।

अहो देखने योग्य एक ध्रुव ज्ञायक प्रभु देखो।
हो अन्तर्मुख सहज दीखता अपना प्रभु देखो।।8।।

देखत होउ निहाल अहो निज परम प्रभू देखो।
पाया लोकोत्तम जिनशासन आतमप्रभु देखो।।9।।

निश्चय नित्यानन्दमयी अक्षय पद पाओगे।
दुखमय आवागमन मिटे भगवान कहाओगे।।10।।

सर्वज्ञ–शासन जयवंत वर्ते !

सर्वज्ञ शासन जयवंत वर्तें! निर्ग्रन्थ शासन जयवंत वर्तें।
यही भाव अविच्छिन्न रहता है मन में, सर्वज्ञ–शासन जयवंत वर्तें।।

निशंक निर्भय रहें हम सदा ही, अरे स्वप्न में भी न कुछ कामना हो।
निरपेक्ष रहकर करें साधना नित, कभी ग्लानि भय या अनुत्साह ना हो।।
बातों में आवें न जग की कदापि, चमत्कार लखकर नहीं मूढ़ होवें।
अरे पर की निंदा, प्रशंसा स्वयं की, करके समय शक्ति बुद्धि न खोवें।।
चलित को लगावें सहज मुक्ति पथ में, व्यवहार सबसे सहज प्रेममय हो।
दुर्भाव मन में भी आवे कभी ना, निर्दोष सम्यक्त्व जयवंत वर्ते।।
सर्वज्ञ शासन जयवंत वर्ते...

अभ्यास हो तत्त्व का ही निरन्तर, संशय विपर्यय अरे दूर भागे।
जिनागम पढ़ें और पढ़ावें सभी को, सदा ज्ञान दीपक सुजलता हो आगे।।
जिन–आज्ञा हो शीश पर नित हमारे, समाधान हो ज्ञानमय सुखकारी।
गुरुवर का गौरव सदा हो हृदय में, बहे ज्ञानधारा सुआनंदकारी।।
वस्तु स्वभावमयी धर्म सुखमय, प्रकाशे जगत में अनेकांत सम्यक्।
ऊँचा रहे ध्वज सदा स्याद्वादी, निर्दोष सद्ज्ञान जयवंत वर्ते।।
सर्वज्ञ शासन जयवंत वर्ते...

अहिंसामयी हो प्रवृत्ति सहज ही, जीवन का आधार हो सत्य सुखमय।
अचौर्य धारें पर प्रीति त्यागें, परमशील वर्ते रहें सहज निर्भय।।
महाक्लेशकारी है आरंभ परिग्रह, उसे छोड़ लग जायें निज–साधना में।
धुल जायें सब मैल समता की धारा से, बढ़ते ही जायें सु आराधना में।।
होवें जितेन्द्रिय परम तृप्त निज में, एकाग्रता हो परम मग्नता हो।
साक्षात् साधन मुक्ति का सुखमय, निर्दोष चारित जयवंत वर्ते।।
सर्वज्ञ शासन जयवंत वर्ते...

रत्नत्रय मुक्ति का मार्ग है अद्भुत, चैतन्य रत्नाकर अद्भुत से अद्भुत।
होवें निमग्न अहो सर्व प्राणी, वीतरागी शासन जयवन्त वर्ते।।
जयवन्त वर्ते सर्वज्ञ देव, जयवंत वर्ते निर्ग्रन्थ गुरुवर।
जयवन्त वर्ते श्री जिनवाणी, जिनधर्म, जिनतीर्थ जयवंत वर्ते।।
शुद्धात्मा का श्रद्धान वर्ते, अनुभूति निर्मल अविच्छिन्न वर्ते।
आवागमन से निर्मुक्ति होवे, मुक्ति का साम्राज्य जयवंत वर्ते।।
सर्वज्ञ शासन जयवंत वर्ते...

ये महा–महोत्सव...

ये महामहोत्सव पञ्चकल्याणक आया मङ्गलकारी.....
ये महा–महोत्सव ।।टेक ।।

जब काललब्धिवश कोइ जीव निज दर्शन शुद्धि रचाते है।
उसके संग में शुभभावों की धारा उत्कृष्ट बहाते हैं।।
उन भावों के द्वारा तीर्थंकर कर्म प्रकृति रज आते हैं।
उनके पकने पर भव्य जीव वे तीर्थंकर बन जाते हैं।।१।।

इस भूतल पर पन्द्रह महीने धनराज रतन बरसाते हैं।
सुरपति की आज्ञा से नगरी दुलहन की तरह सजाते हैं।।
खुशियाँ छाई हैं दश दिश में यूँ लगे कहीं शहनाई बजे।
हर आतम में परमातम की भक्ति के स्वर हैं आज सजे।।२।।

माता ने अजब निराले अद्भुत देखे हैं सोलह सपने।
यह सुना तभी रोमांच हुआ तीर्थंकर होंगे सुत अपने।।
अवतार हुआ तीर्थंकर का क्या मुक्ति गर्भ में आई है।
क्षय होगा भ्रमण चतुर्गति का मंगल संदेशा लाई है।।३।।

जब जन्म हुआ तीर्थंकर का सुरपति ऐरावत लाते हैं।
दर्शन से तृप्त नहीं होते, तब नेत्र हजार बनाते हैं।।

जा पाण्डुशिला क्षीरोदधि जल से बालक को नहलाते हैं।
सुत मात-पिता को सौंप इन्द्र, तब ताण्डव नृत्य रचाते हैं।।४।।
वैराग्य समय जब आता है, प्रभु बारह भावना भाते हैं।
तब ब्रह्मलोक से लौकान्तिक आ, धन्य-धन्य यश गाते हैं।।
विषयों का रस फीका पड़ता चेतनरस में ललचाते हैं।
तब भेष दिगम्बर धार प्रभु संयम में चित्त लगाते हैं।।५।।
नवधा भक्ति से पड़गाहें, हे मुनिवर यहाँ पधारो तुम।
हे गुरुवर अत्र-अत्र तिष्ठो निर्दोष अशन कर धारो तुम।।
है मन-वच-तन आहार शुद्ध अति भाव विशुद्ध हमारे हैं।
जन्मान्तर का यह पुण्य फला, श्री मुनिवर आज पधारे हैं।।६।।
सब दोष और अन्तराय रहित, गुरुवर ने जब आहार किया।
देवों ने पंचाश्चर्य किये, मुनिवर का जय-जयकार किया।।
है धन्य-धन्य शुभ घड़ी आज, आंगन में सुरतरु आया है।
अब चिदानन्द रसपान हेतु, मुनिवर ने चरण बढ़ाया है।।७।।
प्रभु लीन हुए शुद्धातम में निज ध्यान अग्नि प्रगटाते हैं।
क्षायिक श्रेणी आरूढ हुए, तब घाति चतुष्क नशाते हैं।।
प्रगटाते दर्शन-ज्ञान वीर्य-सुख लोकालोक लखाते हैं।
ॐकारमयी दिव्यध्वनि से प्रभु मुक्तिमार्ग बतलाते हैं।।८।।
प्रभु तीजे शुक्लध्यान में चढ़ योगों पर रोक लगाते हैं।
चौथे पाये में चढ़ प्रभुवर गुणस्थान चौदवाँ पाते हैं।।
अगले ही क्षण अशरीरी होकर सिद्धालय में जाते हैं।
थिर रहे अनन्तानन्त काल कृतकृत्य दशा पा जाते हैं।।९।।
है धन्य-धन्य वे कहान गुरु जिनवर महिमा बतलाते हैं।
वे रंग राग से भिन्न चिदातम का संगीत सुनाते हैं।।
हे भव्यजीव आओ सब जन, अब मोहभाव का त्याग करो।
यह पंचकल्याणक उत्सव कर, अब आतम का कल्याण करो।।१०।।

शासन ध्वज लहराओ...

शासन ध्वज लहराओ म्हारा साथी।
पंच कल्याण रचाओ म्हारा साथी।।
आओ रे आओ आओ म्हारा साथी।
जीवन सफल बनाओ म्हारा साथी।।टेक।।

स्वर्गपुरी से सुरपति आये, अनेकान्तमय ध्वज ले आए।
स्याद्वाद का रंग भराकर, सबका संशय तिमिर मिटाए।।
परिणति में लहराओ म्हारा साथी।।१।।
मंगल स्वस्तिक चिह्न बनाओ, चारगति का दुःख नशाओ।
शुद्धातम को लक्ष्य बनाकर, भेदज्ञान की ज्योति जलाओ।।
मोक्ष महल में आओ म्हारा साथी।।२।।
गुण अनन्तमय निर्मल आतम, अनेकान्त कहते परमातम।
धर्म-युगल जो रहे विरोधी रहते एकसाथ निज आतम।।
निज स्वरूप रस पाओ म्हारा साथी।।३।।
मंगल स्वर्णकलश ले आओ, इस पर स्वस्तिक चिह्न बनाओ।
माता के कर कमलों द्वारा, मंगल वेदी पर पधराओ।।
नाँदी विधान रचाओ म्हारा साथी।।४।।

वे मुनिवर कब मिली हैं उपगारी

वे मुनिवर कब मिली हैं उपगारी।
साधु दिगम्बर, नग्न निरम्बर, संवर भूषण धारी।।टेक।।
कंचन-काँच बराबर जिनके, ज्यों रिपु त्यों हितकारी।
महल मसान, मरण अरु जीवन, सम गरिमा अरु गारी।।१।।
सम्यग्ज्ञान प्रधान पवन बल, तप पावक परजारी।
शोधत जीव सुवर्ण सदा जे, काय-कारिमा टारी।।२।।
जोरि युगल कर 'भूधर' विनवे, तिन पद ढोक हमारी।
भाग उदय दर्शन जब पाऊँ, ता दिन की बलिहारी।।३।।

निर्ग्रन्थों का मार्ग....

निर्ग्रन्थों का मार्ग..
निर्ग्रन्थों का मार्ग हमको प्राणों से भी प्यारा है.................
दिगम्बर वेश न्यारा है..................निर्ग्रन्थों का मार्ग।।टेक।।
शुद्धात्मा में ही, जब लीन होने को, किसी का मन मचलता है।
तीन कषायों का, तब राग परिणति से, सहज ही टलता है।।
वस्त्र का धागा..वस्त्र का धागा.., नहीं फिर उसने तन पर धारा है।
दिगम्बर वेश न्यारा है...................निर्ग्रन्थों का मार्ग।।१।।
पंच-इन्द्रिय का, विस्तार नहीं जिसमें, वह देह ही परिग्रह है।
तन में नहीं तन्मय, है दृष्टि में चिन्मय, शुद्धात्मा ही गृह है।।
पर्यायों से पार..., पर्यायों से पार, त्रिकाली ध्रुव का सदा सहारा है।
दिगम्बर वेश न्यारा है...................निर्ग्रन्थों का मार्ग।।२।।
मूलगुण पालन, जिनका सहज जीवन, निरन्तर स्वसंवेदन।
एक ध्रुव सामान्य, में ही सदा रमते, रत्नत्रय आभूषण।।
निर्विकल्प अनुभव, निर्विकल्प अनुभव से ही, जिनने निज को शृंगारा है।
दिगम्बर वेश न्यारा है...................निर्ग्रन्थों का मार्ग।।३।।
आनन्द के झरने, झरते प्रदेशों में, ध्यान जब धरते हैं।
मोह रिपु क्षण में, तब भस्म हो जाता, श्रेणी जब चढ़ते हैं।।
अन्तर्मुहूरत में..अन्तर्मुहूरत में ही, जिनने अनन्त चतुष्ट धारा है।
दिगम्बर वेश न्यारा है.....................निर्ग्रन्थों का मार्ग।।४।।

आनन्द अवसर आयो...

आनन्द अवसर आयो, मुनिवर दर्शन पायो,
परम दिगम्बर संत पधारे जीवन धन्य बनायो-बनायो।।
पुण्य उदय है आज हमारे, ऋषभदेव मुनिराज पधारे।
श्री मुनिवर के दर्शन करके शुद्ध हुए हैं भाव हमारे।।
जीवन सफल बनायो...बनायो।।१।।

राजा श्रेयांश राजा हर्षित भारी आहार दान की है तैयारी।
निराहार चेतन राजा के अनुभव से है आनंद भारी।।
मुनिवर को पडगाह्यो...पडगाह्यो।।२।।
हे स्वामी तुम यहाँ विराजो उच्चासन पर विराजो।
मन-वच-तन आहारशुद्ध हैं भाव हमारे अतिविशुद्ध हैं।।
अपने चरण बढ़ाओ...बढ़ाओ।।३।।
दोष छयालिस मुनिवर टालें, अन्तराय बत्तीसों टालें।
दोषरहित निज के अनुभव से चतुर्गति का भ्रमण निवारें।।
तप को निमित्त बनायो...बनायो।।४।।
मुनिवर अब आहार करेंगे, निज चैतन्य विहार करेंगे।
क्षायिक श्रेणी आरोहण कर मुक्तिपुरी का राज वरेंगे।।
निज में निज को रमायो...रमायो।।५।।

अशरीरी सिद्ध भगवान

अशरीरी-सिद्ध भगवान, आदर्श तुम्हीं मेरे।
अविरुद्ध शुद्ध चिद्घन, उत्कर्ष तुम्हीं मेरे।।टेक।।
सम्यक्त्व सुदर्शन ज्ञान, अगुरुलघु अवगाहन।
सूक्ष्मत्व वीर्य गुणखान, निर्बाधित सुखवेदन।।
हे गुण अनन्त के धाम, वन्दन अगणित मेरे।।१।।
रागादि रहित निर्मल, जन्मादि रहित अविकल।
कुल गोत्र रहित निष्कुल, मायादि रहित निश्छल।।
रहते निज में निश्चल, निष्कर्म साध्य मेरे।।२।।
रागादि रहित उपयोग, ज्ञायक प्रतिभासी हो।
स्वाश्रित शाश्वतसुख भोग, शुद्धात्म-विलासी हो।।
हे स्वयं सिद्ध भगवान, तुम साध्य बनो मेरे।।३।।

भविजन तुम-सम निजरूप, ध्याकर तुम-सम होते।
चैतन्य पिण्ड शिव-भूप, होकर सब दुख खोते।।
चैतन्यराज सुखखान, दुख दूर करो मेरे।।४।।

रोम-रोम पुलकित हो जाए...

रोम रोम पुलकित हो जाय, जब जिनवर के दर्शन पाय।।टेक।।
ज्ञानानन्द कलियाँ खिल जायँ, जब जिनवर के दर्शन पाय।।

जिन-मन्दिर में श्री जिनराज, तन-मन्दिर में चेतनराज।।
तन-चेतन को भिन्न पिछान, जीवन सफल हुआ है आज।।

वीतराग सर्वज्ञ-देव प्रभु, आये हम तेरे दरबार।
तेरे दर्शन से निज दर्शन, पाकर होवें भव से पार।।
मोह-महातम तुरत विलाय, जब जिनवर के दर्शन पाय।।१।।

दर्शन-ज्ञान अनन्त प्रभु का, बल अनन्त आनन्द अपार।
गुण अनन्त से शोभित हैं प्रभु, महिमा जग में अपरम्पार।।
शुद्धातम की महिमा आय, जब जिनवर के दर्शन पाय।।२।।

लोकालोक झलकते जिसमें, ऐसा प्रभु का केवलज्ञान।
लीन रहें निज शुद्धातम में, प्रतिक्षण हो आनन्द महान।।
ज्ञायक पर दृष्टि जम जाय, जब जिनवर के दर्शन पाय ।।३।।

प्रभु की अन्तर्मुख-मुद्रा लखि, परिणति में प्रकटे समभाव।
क्षणभर में हों प्राप्त विलय को, पर-आश्रित संपूर्ण विभाव।।
रत्नत्रय-निधियाँ प्रकटाय, जब जिनवर के दर्शन पाय।।४।।

जिनवर का उपकार अहो,
कुन्दामृत अरु दिव्यध्वनि का।
दिव्यध्वनि के मर्मोद्घाटक,
गुरु कहान पथ-दर्शक का।।

प्रभो आपकी अनुपम परिणति.....

प्रभो ! आपकी अनुपम परिणति, दीक्षा को जो किया विचार।
जगत जनों को भी मंगलमय, नमन करें हम बारम्बार।।
भव भोगों को नश्वर जाना, शुद्धातम जाना सुखकार।
मोह शत्रु का नाश करेंगे, प्रगटेगा सुख अपरम्पार।।१।।

पहले से ही प्रभुवर तुमने, मिथ्यातम का किया विनाश।
हे दीक्षाग्राहक ! वैरागी, चरितमोह का करो परास्त।।
रत्नत्रय आभूषण धारे, जंगल में यह मंगल कार्य।
रागी जन को है अति दुष्कर किन्तु आपको है स्वीकार।।२।।

धन्य धन्य हे मुक्ति पथिक ! तुम सहज सौम्य मुद्राधारी।
लक्ष्योन्मुख है ज्ञान आपका, चरित्र पथ के अनुगामी।।
बारह जय करके दिग्विजयी, सुख वांछक हो हे जगदीश।।३।।

इन्द्रिय अरु प्राणी संयम, धारण करके हो आदरणीय।
शुक्ल ध्यान में कर्मेन्धन को, नष्ट करोगे केवलज्ञान।।
जग को मुक्तिमार्ग बताओ, हे त्रिभुवन के गुरु महान।।४।।

ऐसे साधु सुगुरु.....

ऐसे साधु सुगुरु कब मिलि हैं।।टेक।।
आप तरैं अरु पर को तारैं, निष्पृही निर्मल हैं।।
ऐसे साधु सुगुरु कब मिलि हैं।।१।।
तिल तुष मात्र संग नहिं जिनके, ज्ञान-ध्यान गुण बल हैं।।
ऐसे साधु सुगुरु कब मिलि हैं।।२।।
शांत दिगम्बर मुद्रा जिनकी, मन्दर तुल्य अचल हैं।।
ऐसे साधु सुगुरु कब मिलि हैं।।३।।
'भागचन्द' तिनको नित चाहें, ज्यों कमलनि को अलि हैं।।
ऐसे साधु सुगुरु कब मिलि हैं।।४।।

सिद्धों की श्रेणी में.....

सिद्धों की श्रेणी में आनेवाला जिनका नाम है।
जग के उन सब मुनिराजों को, मेरा नम्र प्रणाम है।।
मेरा नम्र प्रणाम है, मेरा नम्र प्रणाम है।।टेक।।

मोक्षमार्ग पर अंतिम क्षण तक, चलना जिनको इष्ट है।
जिन्हें न च्युत कर सकता पथ से, कोई विघ्न अनिष्ट है।।
दृढ़ता जिनकी है अगाध और, जिनका शौर्य अदम्य है।
साहस जिनका है अबाध और, जिनका धैर्य अगम्य है।।
जिनकी है निस्वार्थ साधना, जिनका तप निष्काम है।
जग के उन सब................।।१।।

मन में किंचित् हर्ष न लाते, सुन अपना गुणगान जो।
और न अपनी निंदा सुनकर, करते हैं मुख म्लान जो।।
जिन्हें प्रतीत एक सी होतीं, स्तुतियाँ और गालियाँ।
सिर पर गिरती सुमनावलियाँ, चलती हुई दुनालियाँ।।
दोनों समय शांति में रहना, जिनका शुभ परिणाम है।
जग के उन सब................।।२।।

हर उपसर्ग सहन जो करते, कहकर कर्म विचित्रता।
तन तज देते किन्तु न तजते, अपनी ध्यान पवित्रता।।
एक दृष्टि से देखा करते, गर्मी वर्षा ठण्ड जो।
तप्त उष्ण लू रिमझिम वर्षा, शीत तरंग प्रचण्ड जो।।
जिनको जो है शीतल छाया, त्यों ही भीषण घाम है।
जग के उन सब................।।३।।

जिन्हें कंकड़ों जैसा ही है, मणि-मुक्ता का ढेर भी।
जिनका समता धन खरीदने, को असमर्थ कुबेर भी।।
दूर परिग्रह से रह माना करते हैं संतोष जो।
रत्नत्रय से भरते रहते, अपना चेतन कोष जो।।
और उसी की रक्षा में, रत रहते आठों याम हैं।
जग के उन सब................।।४।।

मुनिवर आज मेरी...

मुनिवर आज मेरी कुटिया में आए हैं।
चलते फिरते...चलते फिरते सिद्ध प्रभु आए हैं।।टेक।।
हाथ कमंडल बगल में पीछी है, मुनिवर पे सारी दुनिया रीझी है।
नगन दिगम्बर हो... नगन दिगम्बर मुनिवर आए हैं।।१।।
अत्र अत्र तिष्ठो हे मुनिवर, भूमि शुद्धि हमने कराई है।
आहार कराके... आहार कराके नर नारी हर्षाये हैं।।२।।
प्रासुक जल से चरण पखारे हैं, गंधोदक पा भाग्य संवारे हैं।
शुद्ध भोजन के...शुद्ध भोजन के ग्रास बनाये हैं।।३।।
नग्न दिगम्बर मुद्रा धारी हैं, वीतरागी मुद्रा अति प्यारी है।
धन्य हुए ये...धन्य हुए ये नयन हमारे हैं।।४।।
नग्न दिगम्बर साधु बड़े प्यारे हैं, जैन धरम के ये ही सहारे हैं।
ज्ञान के सागर...ज्ञान के सागर ज्ञान बरसाये हैं।।५।।

जंगल में मुनिराज अहो...

जंगल में मुनिराज अहो मंगल स्वरूप निज ध्यावें।
बैठ समीप संत चरणों में, पशु भी बैर भुलावें।।टेक।।
अरे सिंहनी गौ वत्सों को, स्तनपान कराती।
हो निशंक गौ सिंह सुतों पर, अपनी प्रीति दिखाती।।
न्योला अहि मयूर सब ही मिल, तहाँ आनन्द मनावें।
बैठ समीप संत चरणों में, पशु भी बैर भुलावें।।१।।
नहीं किसी से भय जिनको, जिनसे भी भय न किसी को।
निर्भय ज्ञान गुफा में रह, शिवपथ दर्शाय सभी को।।
जो विभाव के फल में भी, ज्ञायक स्वभाव निज ध्यावें।।
बैठ समीप संत चरणों में, पशु भी बैर भुलावें।।२।।

वेदन जिन्हें असंग ज्ञान का, नहीं संग में अटकें।
कोलाहल से दूर स्वानुभव, परम सुधारस गटकें।।
भवि दर्शन उपदेश श्रवण कर, जिनसे शिव पद पावें।
बैठ समीप संत चरणों में, पशु भी बैर भुलावें।।३।।

ज्ञेयें से निरपेक्ष ज्ञानमय, अनुभव जिनका पावन।
शुद्धातम दर्शाती वाणी, प्रशममूर्ति मन भावन।।
अहो जितेन्द्रिय गुरु अतीन्द्रिय, ज्ञायक गुरु दरशावें।
बैठ समीप संत चरणों में, पशु भी बैर भुलावें।।४।।

निज ज्ञायक ही निश्चय गुरुवर, अहो दृष्टि में आया।
स्वयं सिद्ध ज्ञानानन्द सागर, अन्तर में लहराया।।
नित्य निरंजन रूप सुहाया, जाननहार जनावें।
बैठ समीप संत चरणों में, पशु भी बैर भुलावें।।५।।

रोम-रोम से निकले प्रभुवर...

रोम-रोम से निकले प्रभुवर नाम तुम्हारा, हाँ! नाम तुम्हारा।
ऐसी भक्ति करूँ प्रभुजी पाऊँ न जन्म दुबारा।।टेक।।

जिनमंदिर में आया, जिनवर दर्शन पाया।
अन्तर्मुख मुद्रा को देखा, आतम दर्शन पाया।।
जनम-जनम तक न भूलूंगा, यह उपकार तुम्हारा।।१।।

अरहंतों को जाना, आतम को पहिचाना।
द्रव्य और गुण-पर्यायों से, जिन सम निज को माना।।
भेदज्ञान ही महामंत्र है, मोह तिमिर क्षयकारा।।२।।

पंच महाव्रत धारूँ, समिति गुप्ति अपनाऊँ।
निर्ग्रन्थों के पथ पर चलकर, मोक्ष महल में आऊँ।।
पुण्य-पाप की बन्ध शृंखला नष्ट करूँ दुखकारा।।३।।

देव-शास्त्र-गुरु मेरे, हैं सच्चे हितकारी।
सहज शुद्ध चैतन्यराज की महिमा, जग से न्यारी।।
रोम-रोम से निकले प्रभुवर नाम तुम्हारा, हाँ! तुम्हारा।।४।।

धन्य-धन्य मुनिवर का जीवन...

धन्य-धन्य मुनिवर का जीवन, होवे प्रचुर आत्म संवेदन।
धन्य-धन्य जग में शुद्धातम, धन्य अहो आतम आराधन।।१।।

होय विरागी सब परिग्रह तज, शुद्धोपयोग धर्म का धारन।
तीन कषाय चौकड़ी विनशी, सकल चारित्र सहज प्रगटावन।।२।।

अप्रमत्त होवें क्षण-क्षण में, परिणति निज स्वभाव में पावन।
क्षण में होय प्रमत्तदशा फिर, मूल अट्ठाईस गुण का पालन।।३।।

पञ्चमहाव्रत पञ्चसमिति धर, पञ्चेन्द्रिय जय जिनके पावन।
षट् आवश्यक शेष सात गुण, बाहर दीखे जिनका लक्षण।।४।।

विषय-कषायारंभ रहित हैं, ज्ञान-ध्यान-तप लीन साधुजन।
करुणा बुद्धि होय भव्यों प्रति, करते मुक्तिमार्ग सम्बोधन।।५।।

रचना शुभशास्त्रों की करते, निरभिमान निस्पृह जिनका मन।
आत्मध्यान में सावधान हैं, अद्भुत समतामय है जीवन।।६।।

घोर परिषह उपसर्गों में, चलित न होवे जिनका आसन।
अल्पकाल में वे पावेंगे, अक्षय, अचल, सिद्ध पद पावन।।७।।

ऐसी दशा होय कब 'आत्मन्' चरणों में हो शत-शत वंदन।
मैं भी निज में ही रम जाऊँ, गुरुवर समतामय हो जीवन।।८।।

धन्य मुनिराज की समता...

धन्य मुनिराज की समता, धन्य मुनिराज का जीवन।
धन्य मुनिराज की थिरता, प्रचुर वर्ते स्वसंवेदन।।टेक।।

शुद्ध चिद्रूप अशरीरी लखें, निज को सदा निज में।
सहज समभाव की धारा, बहे मुनिवर के अंतर में।।
है पावन अंतरंग जिनका, है बहिरंग भी सहज पावन।
धन्य मुनिराज की समता, धन्य मुनिराज का जीवन।।१।।

कर्मफल के अवेदक वे, परम आनंद रस वेदे।
कर्म की निर्जरा करते, बढ़े जायें सु शिवमग में।।
मुक्तिपथ भव्य प्रकटावें, अहो करके सहज दर्शन।
धन्य मुनिराज की समता, धन्य मुनिराज का जीवन।।२।।

परम ज्ञायक के आश्रय से, तृप्त निर्भय सहज वर्ते।
अवांछक निस्पृही गुरुवर, नवाऊँ शीश चरणन में।।
अन्तरंग हो सहज निर्मल, गुणों का होय जब चिन्तन।
धन्य मुनिराज की समता, धन्य मुनिराज का जीवन।।३।।

जगत के स्वांग सब देखे, नहीं कुछ चाह है मन में।
सुहावे एक शुद्धातम, आराधूँ होंस है मन में।।
होय निर्ग्रन्थ आनन्दमय, आपसा मुक्तिमय जीवन।
धन्य मुनिराज की समता, धन्य मुनिराज का जीवन।।४।।

भावना सहज ही होवे, दर्श प्रत्यक्ष कब पाऊँ।
नशे रागादि की वृत्ति, अहो निज में ही रम जाऊँ।।
मिटे आवागमन होवे, अचल ध्रुव सिद्धगति पावन।
धन्य मुनिराज की समता, धन्य मुनिराज का जीवन।।५।।

धनि मुनिराज हमारे हैं...

धनि मुनिराज हमारे हैं।।टेक।।

सकल प्रपंच रहित निज में रत, परमानन्द विस्तारे हैं।
निर्मोही रागादि रहित हैं, केवल जाननहारे हैं।।१।।

घोर परिषह उपसर्गों को, सहज ही जीतनहारे हैं।
आत्मध्यान की अग्निमाँहि जो सकल कर्म-मल जारे हैं।।२।।

साधैं सारभूत शुद्धातम, रत्नत्रय निधि धारे हैं।
तृप्त स्वयं में तुष्ट स्वयं में, काम-सुभट संहारे हैं।।३।।

सहज होंय गुण मूल अट्ठाईस, नग्न रूप अविकारे हैं।
वनवासी व्यवहार कहत हैं, निज में निवसनहारे हैं।।४।।

निर्ग्रन्थ दिगम्बर साधु...

निर्ग्रन्थ दिगम्बर साधु अलौकिक जग में।
निर्भय स्वाधीन विचरते मुक्ति-मग में।।टेक।।

अन्तर्दृष्टि प्रगटाई निज रूप लख्यो सुखदाई।
बाहर से हुए उदास सहज अंतरंग में।।
निर्भय स्वाधीन विचरते मुक्ति-मग में।।१।।

जग में कुछ सार न पाया, अन्तर पुरुषार्थ बढ़ाया।
तज सकल परिग्रह भोग बसै जा वन में।।
निर्भय स्वाधीन विचरते मुक्ति-मग में।।२।।

निर्दोष अट्ठाईस गुण हैं, देखो निज माँहिं मगन हैं।
कुछ ख्याति लाभ पूजादि चाह नहिं मन में।।
निर्भय स्वाधीन विचरते मुक्ति-मग में।।३।।

जिन तीन चौकड़ी टूटी, ममता की बेड़ी छूटी।
अद्भुत समता वर्ते जिनकी परिणति में।।
निर्भय स्वाधीन विचरते मुक्ति-मग में।।४।।

निस्पृह आतम आराधैं, रत्नत्रय पूर्णता साधैं।
निष्कम्प रहें उपसर्ग और परीषह में।।
निर्भय स्वाधीन विचरते मुक्ति-मग में।।५।।

शुद्धात्मस्वरूप दिखावैं, शिवमार्ग सहज ही बतावैं।
गुण चिंतन कर निज शीश धरें चरणन में।।
निर्भय स्वाधीन विचरते मुक्ति-मग में।।६।।

निर्ग्रन्थ भावना

निर्ग्रन्थता की भावना अब हो सफल मेरी।
बीते अहो आराधना में हर घड़ी मेरी।।टेक।।

करके विराधन तत्त्व का, बहु दुःख उठाया।
आराधना का यह समय, अति पुण्य से पाया।।
मिथ्या प्रपंचों में उलझ अब, क्यों करूँ देरी?
निर्ग्रन्थता की भावना अब हो सफल मेरी।।

जब से लिया चैतन्य के, आनंद का आस्वाद।
रमणीक भोग भी लगें, मुझको सभी निःस्वाद।।
ध्रुवधाम की ही ओर दौड़े, परिणति मेरी।
निर्ग्रन्थता की भावना अब हो सफल मेरी।।

पर में नहीं कर्त्तव्य मुझको, भासता कुछ भी।
अधिकार भी दीखे नहीं, जग में अरे कुछ भी।।
निज अंतरंग में ही दिखे, प्रभुता मुझे मेरी।
निर्ग्रन्थता की भावना अब हो सफल मेरी।।

क्षण-क्षण कषायों के प्रसंग ही बनें जहाँ।
मोही जनों के संग में, सुख शान्ति हो कहाँ।।
जग-संगति से तो बढ़े, दुखमय भ्रमण फेरी।
निर्ग्रन्थता की भावना अब हो सफल मेरी।।

अब तो रहूँ निर्जन वनों में, गुरुजनों के संग।
शुद्धात्मा के ध्यानमय हो, परिणति असंग।।

निजभाव में ही लीन हो, मेटूँ जगत-फेरी।
निर्ग्रन्थता की भावना अब हो सफल मेरी।।

कोई अपेक्षा हो नहीं, निर्द्वन्द्व हो जीवन।
संतुष्ट निज में ही रहूँ, नित आप सम भगवन्।।
हो आप सम निर्मुक्त, मंगलमय दशा मेरी।
निर्ग्रन्थता की भावना अब हो सफल मेरी।।

अब तो सहा जाता नहीं, बोझा परिग्रह का।
विग्रह का मूल लगता है, विकल्प विग्रह का।।
स्वाधीन स्वाभाविक सहज हो, परिणति मेरी।
निर्ग्रन्थता की भावना अब हो सफल मेरी।।

महिमा है अगम जिनागम...

महिमा है, अगम जिनागम की।।टेक।।
जाहि सुनत जड़ भिन्न पिछानी, हम चिन्मूरति आतम की।।१।।
रागादिक दुःखकारन जानैं, त्याग बुद्धि दीनी भ्रम की।।२।।
ज्ञानज्योति जागी उर अन्तर, रुचि बाढ़ी पुनि शम-दम की।।३।।
कर्मबंध की भई निरजरा, कारण परम पराक्रम की।।४।।
'भागचन्द' शिव-लालच लाग्यो, पहुँच नहीं है जहँ जम की।।५।।

धन्य-धन्य जिनवाणी माता...

धन्य-धन्य जिनवाणी माता, शरण तुम्हारी आये।
परमागम का मन्थन करके, शिवपुर पथ पर धाये।।
माता दर्शन तेरा रे! भविक को आनन्द देता है।
हमारी नैया खेता है।।१।।

वस्तु कथंचित् नित्य-अनित्य, अनेकांतमय शोभे।
परद्रव्यों से भिन्न सर्वथा, स्वचतुष्टयमय शोभे।।

ऐसी वस्तु समझने से, चतुर्गति फेरा कटता है।
जगत का फेरा मिटता है।।२।।
नय निश्चय-व्यवहार निरूपण, मोक्षमार्ग का करती।
वीतरागता ही मुक्तिपथ, शुभ व्यवहार उचरती।।
माता! तेरी सेवा से, मुक्ति का मारग खुलता है।
महा मिथ्यातम धुलता है।।३।।
तेरे अंचल में चेतन की, दिव्य चेतना पाते।
तेरी अमृत लोरी क्या है, अनुभव की बरसातें।।
माता ! तेरी वर्षा में, निजानन्द झरना झरता है।
अनुपमानन्द उछलता है।।४।।
नव-तत्त्वों में छुपी हुई जो, ज्योति उसे बतलाती।
चिदानन्द ध्रुव ज्ञायक घन का, दर्शन सदा कराती।।
माता! तेरे दर्शन से, निजातम दर्शन होता है।
सम्यग्दर्शन होता है।।५।।

धन्य-धन्य वीतराग वाणी...

धन्य-धन्य वीतराग वाणी, अमर तेरी जग में कहानी।
चिदानंद की राजधानी, अमर तेरी जग में कहानी।।टेक।।
उत्पाद-व्यय अरु ध्रौव्य स्वरूप, वस्तु बखानी सर्वज्ञ भूप।
स्याद्वाद तेरी निशानी, अमर तेरी जग में कहानी।।१।।
नित्य-अनित्य अरु एक अनेक, वस्तु कथंचित् भेद-अभेद।
अनेकांतरूपा बखानी, अमर तेरी जग में कहानी।।२।।
भाव शुभाशुभ बंधस्वरूप, शुद्ध-चिदानन्दमय मुक्तिरूप।
मारग दिखाती है वाणी, अमर तेरी जग में कहानी।।३।।

चिदानंद चैतन्य आनन्द धाम, ज्ञानस्वभावी निजातम राम।
स्वाश्रय से मुक्ति बखानी, अमर तेरी जग में कहानी।।४।।

सुनकर वाणी जिनवर...

सुनकर वाणी जिनवर की,
म्हारे हर्ष हिये न समाय जी।।टेक।।
काल अनादि की तपन बुझानी,
निज निधि मिली अथाह जी।।१।।
संशय, भ्रम और विपर्यय नाशा,
सम्यक् बुद्धि उपजाय जी।।२।।
नर-भव सफल भयो अब मेरो,
'बुधजन' भेंटत पाय जी।।३।।

शान्ति सुधा बरसाये जिनवाणी...

शान्ति सुधा बरसाये जिनवाणी,
वस्तुस्वरूप बताये जिनवाणी।।टेक।।
पूर्वापर सब दोष रहित है,
पापक्रिया से शून्य शुद्ध है।
परमागम कहलाये जिनवाणी।।१।।
परमागम भव्यों को अर्पण,
मुक्तिवधू के मुख का दर्पण।
भवसागर से तारे जिनवाणी।।२।।
राग रूप अंगारों द्वारा,
महा क्लेश पाता जग सारा।
सजल मेघ बरसाये जिनवाणी।।३।।

सप्त तत्त्व का ज्ञान कराये,
अचल विमल निजपद दरसावे।
सुखसागर लहराये जिनवाणी।।४।।

सांची तो गंगा यह...

साँची तो गंगा यह वीतरागवाणी।
अविच्छिन्न धारा निजधर्म की कहानी।।टेक।।
जामें अति ही विमल अगाध ज्ञानपानी।
जहाँ नहीं संशयादि पंक की निशानी।।१।।
सप्तभंग जहँ तरंग उछलत सुखदानी।
संतचित मरालवृन्द रमैं नित्य ज्ञानी।।२।।
जाके अवगाहनतैं शुद्ध होय प्राणी।
'भागचन्द' निहचैं घटमाहिं या प्रमानी।।३।।

केवलि-कन्ये वाङ्मय...

केवलि-कन्ये, वाङ्मय गंगे, जगदम्बे, अघ नाश हमारे।
सत्य-स्वरूपे, मंगलरूपे, मन-मन्दिर में तिष्ठ हमारे।।टेक।।
जम्बूस्वामी गौतम-गणधर, हुए सुधर्मा पुत्र तुम्हारे।
जगतैं स्वयं पार ह्वै करके, दे उपदेश बहुत जन तारे।।१।।
कुंदकुंद, अकलंकदेव अरु, विद्यानन्दि आदि मुनि सारे।
तव कुलकुमुद चन्द्रमा ये शुभ, शिक्षामृत दे स्वर्ग सिधारे।।२।।
तूने उत्तम तत्त्व प्रकाशे, जग के भ्रम सब क्षय कर डारे।
तेरी ज्योति निरख लज्जावश, रवि-शशि छिपते नित्य विचारे।।३।।
भवभय पीड़ित, व्यथितचित्त जन, जब जो आये शरण तिहारे।
छिन भर में उनके तब तुमने, करुणा करि संकट सब टारे।।४।।
जबतक विषयकषाय नशै नहीं, कर्म-शत्रु नहिं जाय निवारे।
तब तक 'ज्ञानानन्द' रहै नित, सब जीवन तैं समता धारे।।५।।

हे जिनवाणी माता...

हे जिनवाणी माता! तुमको लाखों प्रणाम, तुमको क्रोड़ों प्रणाम।
शिवसुखदानी माता! तुमको लाखों प्रणाम, तुमको क्रोड़ों प्रणाम।।टेक।।
तू वस्तु-स्वरूप बतावे, अरु सकल विरोध मिटावे।
हे स्याद्वाद विख्याता! तुमको लाखों प्रणाम, तुमको क्रोड़ों प्रणाम।।१।।
तू करे ज्ञान का मण्डन, मिथ्यात कुमारग खण्डन।
हे तीन जगत की माता! तुमको लाखों प्रणाम, तुमको क्रोड़ों प्रणाम।।२।।
तू लोकालोक प्रकाशे, चर-अचर पदार्थ विकाशे।
हे विश्वतत्त्व की ज्ञाता तुमको लाखों प्रणाम, तुमको क्रोड़ों प्रणाम।।३।।
शुद्धातम तत्त्व दिखावे, रत्नत्रय पथ प्रकटावे।
निज आनन्द अमृतदाता! तुमको लाखों प्रणाम, तुमको क्रोड़ों प्रणाम।।४।।
हे मात! कृपा अब कीजे, परभाव सकल हर लीजे।
'शिवराम' सदा गुण गाता तुमको लाखों प्रणाम, तुमको क्रोड़ों प्रणाम।।५।।

जिन-बैन सुनत मोरी...

जिन बैन सुनत मोरी भूल भगी।।टेक।।
कर्मस्वभाव भाव चेतन को,
भिन्न पिछानन सुमति जगी।।१।।
निज अनुभूति सहज ज्ञायकता,
सो चिर रुष-तुष-मैल पगी।।२।।
स्याद्वाद धुनि निर्मल जलतैं,
विमल भई समभाव लगी।।३।।
संशय-मोह-भरमता विघटी,
प्रकटी आतम सोंज सगी।।४।।
'दौल' अपूरव मंगल पायो।
शिवसुख लेन होंस उमगी।।५।।

बारह भावना

(कविवर मंगतराय कृत)

(दोहा)

वन्दूँ श्री अरहन्त पद, वीतराग-विज्ञान।
वरणों बारह भावना, जग जीवन हित जान।।१।।

(विष्णुपद छन्द)

कहाँ गये चक्री जिन जीता, भरत खण्ड सारा।
कहाँ गये वह राम रु लछमन, जिन रावण मारा।।
कहाँ कृष्ण रुक्मिणि सतभामा, अरु संपत्ति सगरी।
कहाँ गये वह रंग महल अरु, सुवरन की नगरी।।२।।

नहीं रहे वह लोभी कौरव, जूझ मरे रन में।
गये राज तज पांडव वन को, अग्नि लगी तन में।।
मोह नींद से उठ रे चेतन, तुझे जगावन को।
हो दयाल उपदेश करें, गुरु बारह भावन को।।३।।

अनित्य भावना

सूरज चाँद छिपै निकले, ऋतु फिर-फिर कर आवे।
प्यारी आयु ऐसी बीते, पता नहीं पावे।।
पर्वत पतित नदी सरिता जल, बह कर नहिं हटता।
स्वाँस चलत यों घटे काठ ज्यों, आरे सों कटता।।४।।

ओस बूँद ज्यों गले धूप में, वा अंजुलि पानी।
छिन-छिन यौवन छीन होत है, क्या समझे प्रानी।।
इन्द्रजाल आकाश नगर सम, जग सम्पत्ति सारी।
अथिर रूप संसार विचारो, सब नर अरु नारी।।५।।

अशरण भावना

काल सिंह ने मृग चेतन को, घेरा भव वन में।
नहीं बचावन हारा कोई, यों समझो मन में।।

मन्त्र यन्त्र सेना धन सम्पत्ति, राजपाट छूटे।
वश नहिं चलता काल लुटेरा, काय नगरि लूटे।।६।।

चक्र रतन हलधर-सा भाई, काम नहीं आया।
एक तीर के लगत कृष्ण की, विनश गई काया।।
देव धर्म गुरु शरण जगत में, और नहीं कोई।
भ्रम में फिरे भटकता चेतन, यूँ ही उमर खोई।।७।।

संसार भावना

जनम-मरण अरु जरा रोग से, सदा दुःखी रहता।
द्रव्य क्षेत्र अरु काल भाव भव, परिवर्तन सहता।।
छेदन भेदन नरक पशु गति, वध बन्धन सहना।
राग उदय से दुःख सुरगति में, कहाँ सुखी रहना।।८।।

भोगि पुण्य फल हो इक इन्द्री, क्या इसमें लाली।
कुतवाली दिन चार वही फिर, खुरपा अरु जाली।।
मानुष जन्म अनेक विपत्तिमय, कहीं न सुख देखा।
पंचम गति सुख मिले, शुभाशुभ का मेटो लेखा।।९।।

एकत्व भावना

जन्मे मरे अकेला चेतन, सुख-दुःख का भोगी।
और किसी का क्या ? इक दिन यह देह जुदी होगी।।
कमला चलत न पेंड, जाय मरघट तक परिवारा।
अपने-अपने सुख को रोवे, पिता पुत्र दारा।।१०।।

ज्यों मेले में पन्थी जन मिलि, नेह फिरे धरते।
ज्यों तरुवर पैं रैन बसेरा, पन्छी आ करते।।
कोस कोई दो कोस कोई उड़, फिर थक-थक हारे।
जाय अकेला हंस संग में, कोई न पर मारे।।११।।

अन्यत्व भावना

मोह रूप मृगतृष्णा जल में, मिथ्या जल चमके।
मृग चेतन नित भ्रम में उठ-उठ, दौड़े थक-थक के।।
जल नहिं पावै प्राण गमावे, भटक-भटक मरता।
वस्तु पराई मानै अपनी, भेद नहीं करता।।१२।।

तू चेतन अरु देह अचेतन, यह जड़ तू ज्ञानी।
मिले अनादि यतन तें बिछुड़े, ज्यों पय अरु पानी।।
रूप तुम्हारा सबसों न्यारा, भेदज्ञान करना।
जौलों पौरुष थके न तौलों, उद्यम सो चरना।।१३।।

अशुचि भावना

तू नित पोखे यह सूखे ज्यों, धोवे त्यों मैली।
निश दिन करे उपाय देह का, रोग दशा फैली।।
मात-पिता रज वीरज मिलकर, बनी देह तेरी।
मांस हाड़ नश लहू राध की, प्रकट व्याधि घेरी।।१४।।

काना पौण्डा पड़ा हाथ यह, चूँसे तो रोवै।
फले अनन्त जु धर्म ध्यान की, भूमि विषै बोवे।।
केसर चन्दन पुष्प सुगन्धित, वस्तु देख सारी।
देह परसतैं होय अपावन, निश दिन मल जारी।।१५।।

आस्रव भावना

ज्यों सर जल आवत मोरी त्यों, आस्रव कर्मन को।
दर्वित जीव प्रदेश गहै जब, पुद्गल भरमन को।।
भावित आस्रव भाव शुभाशुभ, निश दिन चेतन को।
पाप-पुण्य के दोनों करता, कारण बंधन को।।१६।।

पन मिथ्यात योग पन्द्रह द्वादश अविरत जानो।
पंच रु बीस कषाय मिले सब, सत्तावन मानो।।

मोह भाव की ममता टारे, पर परिणति खोते।
करे मोख का यतन निरास्रव ज्ञानी जन होते।।१७।।

संवर भावना

ज्यों मोरी में डाट लगावे, तब जल रुक जाता।
त्यों आस्रव को रोके संवर क्यों नहिं मन लाता।।
पंच महाव्रत समिति गुप्तिकर, वचन काय मन को।
दश विध धर्म परीषह बाईस, बारह भावन को।।१८।।

यह सब भाव सतावन मिलकर, आस्रव को खोते।
सुपन दशा से जागो चेतन, कहाँ पड़े सोते।।
भाव शुभाशुभ रहित शुद्धि, भावन संवर पावै।
डाट लगत यह नाव पड़ी, मँझधार पार जावै।।१९।।

निर्जरा भावना

ज्यों सरवर जल रुका सूखता, तपन पड़े भारी।
संवर रोके कर्म निर्जरा, ह्वै सोखन हारी।।
उदय भोग सविपाक समय, पक जाय आम डाली।
दूजी है अविपाक पकावें, पाल विषैं माली।।२०।।

पहली सबके होय नहीं कुछ, सरे काम तेरा।
दूजी करे जु उद्यम करके, मिटे जगत फेरा।।
संवर सहित करो तप प्रानी, मिले मुक्ति रानी।
इस दुलहिन की यही सहेली, जाने सब ज्ञानी।।२१।।

लोक भावना

लोक-अलोक अकाश माँहि थिर, निराधार जानो।
पुरुष रूप कर कटी भये षट् द्रव्यन सों मानो।।
इसका कोई न करता हरता, अमिट अनादी है।
जीव रु पुद्गल नाचे यामैं, कर्म उपाधी है।।२२।।

पाप-पुण्य सों जीव जगत में, निज सुख दु:ख भरता।
अपनी करनी आप भरै सिर, औरन के धरता।।
मोह कर्म को नाश मेटकर, सब जग की आसा।
निज पद में थिर होय लोक के, शीश करो वासा।।२३।।

बोधिदुर्लभ भावना

दुर्लभ है निगोद से थावर, अरु त्रस गति पानी।
नर काया को सुरपति तरसे, सो दुर्लभ प्राणी।।
उत्तम देस सुसंगति दुर्लभ, श्रावक कुल पाना।
दुर्लभ सम्यक् दुर्लभ संयम, पंचम गुण ठाना।।२४।।
दुर्लभ रत्नत्रय आराधन, दीक्षा का धरना।
दुर्लभ मुनिवर को व्रत पालन, शुद्ध भाव करना।।
दुर्लभ तैं दुर्लभ है चेतन, बोधि ज्ञान पावै।
पाकर केवलज्ञान नहीं फिर, इस भव में आवै।।२५।।

धर्म भावना

एकान्तवाद के धारी जग में, दर्शन बहुतेरे।
कल्पित नाना युक्ति बनाकर, ज्ञान हरें मेरे।।
हो सुछन्द सब पाप करें सिर, करता के लावे।
कोई छिनक कोई करता से, जग में भटकावे।।२६।।
वीतराग सर्वज्ञ दोष बिन, श्री जिनकी वानी।
सप्त-तत्त्व का वर्णन जामें, सब को सुख दानी।।
इनका चिन्तन बार-बार कर, श्रद्धा उर धरना।
'मंगत' इसी जतन तें इक दिन, भवसागर तरना।।२७।।

***

बारह भावना (पण्डित दौलतरामजी कृत)

मुनि सकलव्रती बड़भागी, भव-भोगन तैं वैरागी।
वैराग्य उपावन माई, चिंतो अनुप्रेक्षा भाई।।१।।
इन चिंतत सम-सुख जागै, जिमि ज्वलन पवन के लागै।
जब ही जिय आतम जानै, तब ही जिय शिव-सुख ठानै।।२।।
जोबन गृह गोधन नारी, हय गय जन आज्ञाकारी।
इन्द्रीय-भोग छिन थाई, सुरधनु चपला चपलाई।।३।।
सुर असुर खगाधिप जेते, मृग ज्यों हरि काल दले ते।
मणि मन्त्र-तन्त्र बहु होई, मरतैं न बचावे कोई।।४।।
चहुँ गति दु:ख जीव भरे हैं, परिवर्तन पंच करे हैं।
सब विधि संसार-असारा, यामैं सुख नाहिं लगारा।।५।।
शुभ-अशुभ करम फल जेते, भोगे जिय एक हि तेते।
सुत दारा होय न सीरी, सब स्वारथ के हैं भीरी।।६।।
जल-पय ज्यौं जिय तन मेला, पै भिन्न-भिन्न नहिं भेला।
तो प्रकट जुदे धन धामा, क्यों ह्वै इक मिलि सुत रामा।।७।।
पल रुधिर राध मल थैली, कीकस वसादि तैं मैली।
नव द्वार बहै घिनकारी, अस देह करै किम यारी।।८।।
जो योगन की चपलाई, तातैं ह्वै आस्रव भाई।
आस्रव दुखकार घनेरे, बुधिवन्त तिन्हैं निरवेरे।।९।।
जिन पुण्य-पाप नहिं कीना, आतम अनुभव चित दीना।
तिन ही विधि आवत रोके, संवर लहि सुख अवलोके।।१०।।
निज काल पाय विधि झरना, तासों निज काज न सरना।
तप करि जो कर्म खिपावै, सोई शिवसुख दरसावै।।११।।
किन हू न करयो न धरै को, षट् द्रव्यमयी न हरै को।
सो लोक माहिं बिन समता, दुख सहै जीव नित भ्रमता।।१२।।
अन्तिम ग्रीवक लौं की हद, पायो अनन्त बिरियाँ पद।
पर सम्यग्ज्ञान न लाधौ, दुर्लभ निज में मुनि साधौ।।१३।।
जे भावमोह तैं न्यारे, दृग ज्ञान व्रतादिक सारे।
सो धर्म जबै जिय धारै, तब ही सुख अचल निहारै।।१४।।
सो धर्म मुनिन करि धरिये, तिनकी करतूति उचरिये।
ताको सुनिये भवि प्रानी, अपनी अनुभूति पिछानी।।१५।।

महावीर वन्दना

जो मोह माया मान मत्सर, मदन मर्दन वीर हैं।
जो विपुल विघ्नों बीच में भी, ध्यान धारण धीर हैं।।
जो तरण-तारण, भव-निवारण, भव जलधि के तीर हैं।
वे वंदनीय जिनेश, तीर्थंकर स्वयं महावीर हैं।।

जो राग-द्वेष विकार वर्जित, लीन आतम ध्यान में।
जिनके विराट् विशाल निर्मल, अचल केवलज्ञान में।।
युगपद् विशद सकलार्थ झलकें, ध्वनित हो व्याख्यान में।
वे वर्द्धमान महान जिन, विचरें हमारे ध्यान में।।

जिनका परम पावन चरित, जलनिधि समान अपार है।
जिनके गुणों के कथन में, गणधर न पावैं पार है।।
बस वीतराग-विज्ञान ही, जिनके कथन का सार है।
उन सर्वदर्शी सन्मती को, वंदना शत बार है।।

जिनके विमल उपदेश में, सबके उदय की बात है।
समभाव समताभाव जिनका, जगत में विख्यात है।।
जिसने बताया जगत को, प्रत्येक कण स्वाधीन है।
कर्त्ता न धर्त्ता कोई है, अणु-अणु स्वयं में लीन है।।

आतम बने परमातमा, हो शान्ति सारे देश में।
है देशना सर्वोदयी, महावीर के सन्देश में।।

ह्न डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल

दश भक्ति संग्रह

हिन्दी पद्यानुवाद

1. सिद्धभक्ति

असरीरा जीवघना उवजुत्ता दंसणेय णाणेय।
सायारमणायारा लक्खणमेयंतु सिद्धाणं।।१।।

अशरीरी चैतन्य स्वरूपी दर्शन-ज्ञान सुशोभित हैं।
निराकार साकार सिद्ध प्रभु के प्रसिद्ध ये लक्षण हैं।।1।।

मूलोत्तपयडीणं बन्धोदयसत्तकम्म उम्मुक्का।
मंगलभूदा सिद्धा अट्ठगुणा तीदसंसारा।।२।।

मूल और उत्तर प्रकृति के बंध उदय सत्ता विरहित।
मङ्गलमय गुण अष्ट अलंकृत सिद्ध प्रभु संसार रहित।।2।।

अट्ठवियकर्मविघडा सीदीभूदा णिरंजणा णिच्चा।
अट्ठगुणा किदिकिच्चा लोयग्गणिवासिणो सिद्धा।।३।।

नष्ट हुए हैं अष्टकर्म अरु नित्य निरंजन आनंद कंद।
अष्ट गुणान्वित परम तृप्त लोकाग्र विराजें सिद्ध महन्त।।3।।

सिद्धा णट्ठट्ठमला विसुद्धबुद्धी य लद्धिसब्भावा।
तिहुअणसिरिसेहरया पसियन्तु भडारया सव्वे।।४।।

कर्मजन्य मल नष्ट हुए प्रविशुद्ध ज्ञानमय सत्तारूप।
मुझ पर हों प्रसन्न त्रिभुवन के मुकुटमणि हे सिद्ध प्रभु।।4।।

गमणागमणविमुक्के विहडियकम्मपयडिसंघारा।
सासहसुहसंपत्ते ते सिद्धा वंदियो णिच्चा।।५।।

गमनागमन विमुक्त हुए जो किया कर्मरज का संहार।
शाश्वत सुख को प्राप्त सिद्ध प्रभु वन्दनीय हैं बारंबार।।5।।

जयमंगलभूदाणं विमलाणं णाणदंसणमयाणं।
तइलोइसेहराणं णमो सदा सव्वसिद्धाणं।।६।।

मङ्गलमय अरु जयस्वरूप जो निर्मल दर्शनज्ञान स्वरूप।
तीन लोक के मुकुट सिद्ध भगवन्तों को मैं सदा नमूँ।।6।।

सम्मत्तणाणदंसण वीरिय सुहुमं तहेव अवग्गहणं।
अगुरुलघु अव्वावाहं अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं।।७।।

समकितदर्शन ज्ञानवीर्य सूक्ष्मत्व और अवगाहस्वरूप।
अगुरुलघु अरु अव्याबाधी अष्ट गुणान्वित सिद्ध प्रभु।।7।।

तवसिद्धे णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे ये।
णणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमस्सामि।।८।।

तप से सिद्ध तथा नय-संयम-चारित से जो सिद्ध हुए।
ज्ञान और दर्शन से सिद्ध हुए उनको मैं नमन करूँ।।8।।

(कार्योत्सर्ग करें)

इच्छामि भंते सिद्धभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ सम्मणाणसम्मदंसणसम्म चरित्तजुत्ताणं अट्ठविहकम्ममुक्काणं अट्ठगुणसम्पण्णाणं उड्ढलोयमच्छयम्मि पयड्ढियाणं तवसिद्धाणं णयसिद्धाणं संजमसिद्धाणं चरित्तसिद्धाणं सम्मणाणसम्मदंसणसम्मचरित्तसिद्धाणं तीदाणागदवह-माणकालत्तयसिद्धाणं सव्वसिद्धाणं बंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं।

अंचलिका

हे प्रभु सिद्ध भक्ति करके अब मैंने कायोत्सर्ग किया।
इसमें लगे हुए दोषों को अब मैं आलोचन करता।।
समकित दर्शन ज्ञान चरितयुत अष्टकर्म विन गुण संयुक्त।
तप-नय रत्नत्रय से सिद्ध हुए लोकाग्र विराजे सिद्ध।।
उन त्रिकालवर्ती सिद्धों को वन्दन कर हम धन्य हुए।
दु:ख विनष्ट हों कर्म नष्ट हों बोधिलाभ हो सुगति में।।
जिनगुण संपत्ति मुझे प्राप्त हो मरणसमाधि से भव अंत।
पूजा स्तुति कायोत्सर्ग करूँ आचार्यों के अनुसार।।

2. श्रुतभक्ति

(स्रग्धरा)

अर्हद्वक्त्रप्रसूतं गणधररचितं द्वादशांगं विशालं,
चित्रं बह्वर्थयुक्तं मुनिगणवृषभैर्धारितं बुद्धिमद्भि:।
मोक्षाग्रद्वारभूतं व्रतचरणफलं ज्ञेयभावप्रदीपं,
भक्त्या नित्यं प्रबन्दे श्रुतमहमखिलं सर्वलोकैकसारम्।।1।।

अर्हत् वचनों से प्रसूत गणधर विरचित हैं द्वादश अंग।
विविध अनेक अर्थ गर्भित हैं धारें सुधी मुनीश्वर गण।।
अग्रद्वार शिवपुर का, मिलता व्रताचरण फल, ज्ञेय-प्रदीप।
त्रिभुवन सारभूत श्रुत को में नितप्रति वन्दूँ भक्ति सहित।।1।।

(वंशस्थ)

जिनेन्द्रवक्त्रप्रविनिर्गतं वचो यतीन्द्रभूतिप्रमुखैर्गणाधिपै:।
श्रुतं धृतं तैश्च पुन: प्रकाशितं द्विषट्प्रकारं प्रणमाम्यहं श्रुतं।।2।।

जिनध्वनि से निसृत वचनों को इन्द्रभूति आदिक गणधर।
सुनकर धारण किया प्रकाशित द्वादशांग को करूँ नमन।।2।।

कोटीशत द्वादश चैव कोट्यो लक्षाण्यशीतिस्त्र्यधिकानि चैव।
पंचाशदष्टौ च सहस्रसंख्यमेतच्छ्रुतम् पंचपदं नमामि।।3।।

कोटि एक सौ बारह एवं लाख तिरासी अट्ठावन।
सहस पाँच पद भूषित अंग प्रविष्ट ज्ञान को करूँ नमन।।3।।

(अनुष्टुप्)

अंगबाह्यश्रुतोद्भूतान्यक्षराण्यक्षराम्नये।
पंचसप्तैकमष्टौ च दशाशीतिं समर्चये।।4।।

अंग बाह्य श्रुत में पद हैं कुल आठ करोड़ और इक लाख।
आठ हजार एक सौ पचहत्तर पद को नित नमता माथ।।4।।

(आर्या)

अरहंतभासियत्थं गणहरदेवेहिं गंथियं सम्मं।
पणमामि भत्तिजुत्तो सुदणाणमहोबहिं सिरसा।।5।।

अर्हन्तों से कहा गया जो गणधर देवों ने गूँथा।
भक्ति सहित श्रुतज्ञान महोदधि को मैं नमस्कार करता।।5।।

(कार्योत्सर्ग करें)

इच्छामि भंते सदभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ अंगोबंग-पइण्णयपाहु उपरियम्मसुत्तपढमासिओय पुव्वगयचलिया चेव सत्तत्थयत्थुइ-धम्मकहाइयं सुदं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि बंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं सम्मं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

अंचलिका

हे प्रभु श्रुत भक्ति करके अब मैंने कायोत्सर्ग किया।
इसमें लगे हुए दोषों का अब मैं आलोचन करता।।
अङ्ग उपाङ्ग प्रकीर्णक प्राभृत अरु परिकर्म प्रथम अनुयोग।
सूत्र पूर्वगत तथा चूलिका स्तुति धर्मकथामय बोध।।

अर्चन पूजन वन्दन नमन करूँ होवें दुःख कर्मक्षय।
बोधि लाभ हो सुगति गमन हो जिनगुण संपत्ति हो अक्षय।।

3. चारित्रभक्ति

(शार्दूलविक्रीडित)

संसारव्यसनाहतिप्रचलिता नित्योदयप्रार्थिनः
प्रत्यासन्नविमुक्तयः सुमतयः शांतैनसः प्राणिनः।
मोक्षस्यैव कृतं विशालमतुलं सोपानमुच्चेस्तरा-
मारोहंतु चरित्रमुत्तममिदं जैनेंद्रमोजस्विनः।।1।।

(वीरछन्द)

जो भव दुःख से डरते हैं अरु अविनाशी सुख को चाहें।
पाप शान्त हैं निर्मल मति हैं शीघ्र मुक्ति सुख को पावें।।
वे तेजस्वी प्राणी धारें जिन भाषित चारित्र महान।
मोक्ष महल में जाने हेतु जो विशाल अनुपम सोपान।।1।।

(अनुष्टुप्)

तिलोए सव्वजीवाणं हियं धम्मोवदेसणं।
वड्ढमाणं महावीरं बंदित्ता सव्ववेदिनं।।2।।

(हरिगीतिका)

सर्ववेदी वीर जिन द्वारा कहा यह धर्म है।
लोकत्रय को सर्व जीवों को सुहित का मर्म है।।2।।

घाइकम्मविघातत्थं घाइकम्मविणासिणा।
भासियं भव्वजीवाणं चारित्तं पंचभेददो।।3।।

घातिकर्म विनाशकर्ता घातिकर्म विनाश को।
चारित्र पाँच प्रकार कहते भव्य जीवों को अहो।।3।।

सामायियं तु चारित्तं छेदोवट्ठावणं तहा।
तं परिहारविसुद्धिं च संयमं सुहमं पुणो।।4।।

चारित्र सामायिक कहा अरु छेद पद स्थापना।
परिहार शुद्धि और सूक्षम साम्पराय सुबुध कहा।।4।

जहाखायं तु चारित्तं तहाखायं तु तं पुणे।
किच्चाहं पंचहाचार मंगलं मलसोहणं।।5।।

चारित्र पञ्चम यथाख्यात तथाख्यात कहें इसे।
यह पाँच विध चारित्र मंगल पाप शोधक भी कहें।।5।।

अहिंसादीणि वुत्तानि महव्वयाणि पंच च।
समिदीओ तदो पंच पंचइंदियणिग्गहो।।6।।

अहिंसादिक पाँच भेद कहें जिनेश्वर व्रत महा।
पाँच समिति पाँच इन्द्रिय का सुनिग्रह भी कहा।।6।।

छब्भेयावासभूसिज्जा अण्हाणत्तमचेलदा।
लेयत्तं ठिदिभुत्तिं च अदंतवणमेव च।।7।।

षडावश्यक भूशयन अस्नान एवं नग्नता।
खड़े हो इक बार लें आहार, दन्त न धोवना।।7।।

एयभत्तेण संजुत्ता रिसिमूलगुणा तहा।
दसधम्मा तिगुत्तीओ सीलाणि सयलाणि च।।8।।

केशलोंच करें कहे ये मूलगुण अठबीस हैं।
धर्म दश त्रय गुप्ति एवं शील उत्तर गुण कहे।।8।।

सव्वे विय परीसहा वुत्तुत्तरगुणा तहा।
अण्णे वि भासिया संता तेसिंहाणीमयेकया।।9।।

बाईस परीषह जयादिक उत्तर कहे गुण साधु के।
अन्य विविध प्रकार सहकारी कहे गुण मूल के।।9।।

जइ रागेण दोसेण मोहेण णदरेण वा।
वंदित्ता सव्वसिद्धाणं सजुहा सामुमुक्खुण।।10।।

यदि राग द्वेष विमोह से हो हानि-गुण समुदाय में।
वन्दना कर सिद्ध की परिहार हो उस दोष का।।10।।

संजदेण मए सम्मं सव्वसंजमभाविणा।
सव्वसंजमसिद्धीओ लब्भदे मुत्तिजं सुहं।।11।।

सर्व संयमधर मुमुक्षु दोष के परित्याग से।
मोक्ष सुख पायें त्वरित वे सकल संयम सिद्धि से।।11।।

धम्मो मंगलमुक्किट्ठं अहिंसासंजमो तओ।
देवा वितस्स पणमंति जस्स धम्मे सया मणो।।12।।

संयम अहिंसा और तपमय धर्म मंगल श्रेष्ठ है।
इस धर्म में जो मन लगाये देव भी उसको नमें।।13।।

(कार्योत्सर्ग करें)

इच्छामि भंते चारित्तभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ सम्मणाण-जोयस्स सम्मत्ताहिट्ठियस्स सव्वपहाणस्स णिव्वाणमग्गस्स

संजमस्स कम्मणि-ज्जरफलस्स खमाहरस्स पंचमहव्वयसंपण्णस्स तिगुत्तित्तस्स पंचसमिदिजुत्तस्स णाणज्झाणसाहणस्स समयाइपवेसयस्स सम्मचरित्तस्स सदाणिच्चकालं अंचेमि पूजेमि बंदामि णमसामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ वोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

अंचलिका

हे प्रभु! चारित भक्ति करके मैंने कार्योत्सर्ग किया।
इसमें लगे हुए दोषों का अब मैं आलोचन करता।।
सम्यग्दर्शन-ज्ञान सुशोभित सर्वश्रेष्ठ शिवमार्ग स्वरूप।
पंच महाव्रत पंच समिति त्रय गुप्ति निर्जरा क्षमा स्वरूप।।1।।
ज्ञान ध्यान का कारण है यह सम्यक् चारित्र धर्म महान।
निज स्वरूप मं लीनरूप सामायिक का यह द्वार महान।।
अर्चन पूजन वंदन नमन करूँ होवें दु:ख कर्मक्षय।
बोधिलाभ हो सुगति गमन हो जिनगुण संपत्ति हो अक्षय।।2।।

4. आचार्यभक्ति

(आर्या)

देसकुलजाइसुद्धा विसुद्धमणवयणकायसंजुत्ता।
तुम्हं पायपयोरुहमिह मंगलत्थि मे णिच्चं।।1।।

(वीरछन्द)

देश जाति कुल शुद्ध मनोवचतन विशुद्ध से जो संयुक्त।
करें आपके पद पंकज जग में मेरा कल्याण सुनित्य।।1।।
सगपरसमयविदूए आगमहेदूहि चावि जाणित्ता।
सुसमच्छा जिणवयणे विणएसुताणुरूवेण।।2।।
स्व-पर समय के ज्ञाता हैं जो आगम हेतु जाननहार।
श्रुत स्वरूप के ज्ञाता मुनिवर श्रुत स्वरूप के जाननहार।।2।।
बालगुरुबुड्ढसेहे गिलाणथेरेयखमणसंजुत्ता।
अट्ठावयग्गअण्णे दुस्सीले चावि जाणिता।।3।।
बाल वृद्ध रोगी मिलान आदिक सब मुनियों के अपराध।
जानें भलीभांति अरु उनको दृढ़ चारित्र करावन हार।।3।।
वयसमिदिगुत्तिजुत्ता मुत्तिपहे ठावया पुणो अण्णे।
अज्झावयगुणणिलया साहुगुणेणावि संजुत्ता।।4।।

गुप्ति समति व्रत अरु अन्य को करते हो शिवपंथ संयुक्त।
उपाध्याय गुण निलय और तुम साधु गुणों से भी हो युक्त।।4।।
उत्तमखमाइपुढवी पसण्णभावेण अच्छजलसरिसा।
कम्मिंघणदहणादो अगणी वाऊ असंगादो।।5।।
भू-सम क्षमा शील हो निर्मल जल सम रहते सदा प्रसन्न।
कर्मदाह्य को अग्नि तुल्य हो वायु समान सदा नि:संग।।6।।
गयणमिव णिरुवलेवा अक्खोहा सायरुव्व मुनिवसहा।
एरिसगुणणिलयाणं पायं पणमामि सुद्धमणो।।6।।
गगन तुल्य निर्लेप सिन्धु सम हो गंभीर गुणों की खान।
आचार्यों के चरण कमल में निर्मल मन से करूँ प्रणाम।।6।।
संसारकाणणे पुण वंभममाणेहिं भव्वजीवेहिं।
णिव्वाणस्स दु मग्गो लद्धो तुम्हं पसाएण।।7।।
इस संसार भयानक वन में भटक रहे जो भवि प्राणी।
तव प्रसाद से ही पाते हैं मोक्षमार्ग नित सुखदानी।।7।।
अविसुद्धलेसरहिया विसुद्धलेसेहिं परिणदा सुद्धा।
रुद्दट्ठे पुणचत्ता धम्मे सुक्के य संजुत्ता।।8।।
अशुभ लेश्या से विहीन तुम शुभ लेश्याओं से संयुक्त।
आर्त रौद्र ध्यान रहित हो धर्म शुक्ल से हो संयुक्त।।8।।
ओग्गहईहावायाधारणगुणसम्पएहिं संजुत्ता।
सुत्तत्थभावणाए भावियमाणेहि वंदामि।।9।।
अवग्रह ईहा अरु अवाय धारणा गुणों से भूषित हो।
हे श्रुतार्थ भावना सहित गुरु तुम्हें भाव से नमन करूँ।।10।।
तुम्हे गुणगणसंथुदि अयाणमाणेण जं मए वुत्ता।
दिंतु मम बोहिलाहं गुरुभत्तिजुदत्थओ णिच्चं।।10।।
प्रभो! आपका गुण स्तवन मुझ अज्ञानी से किया गया।
गुरु भक्ति संयुक्त मुझे हो बोधिलाभ उपलब्ध सदा।।10।।

(कार्योत्सर्ग करें)

इच्छामि भंते आइरियभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तजुत्ताणं पंचविहाचाराणं आयरियाणं आयारादिसुदणाणो-वदेसणाणं उवज्झायाणं तिरयणगुणपालणरयाणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अच्चेमि पूजेमि वंदामि णमस्सामि

दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुण-सम्पत्ति होउ मज्झं।

अंचलिका

हे प्रभु! सूरि भक्ति करके अब मैंने कायोत्सर्ग किया।
इसमें लगे हुए दोषों का अब मैं आलोचन करता।।
सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित युत पंचाचार धरें आचार्य।
श्रुत उपदेशक उपाध्याय रत्नत्रय लीन रहें मुनिराज।।
अर्चन पूजन वंदन नमन करूँ होंवे दुःख कर्मक्षय।
बोधिलाभ हो सुगति गमन हो जिनगुण संपत्ति हो अक्षय।।

5. योगभक्ति

(आर्या)

थोसामि गणधराणं अणयाराणं गुणेहि तच्चेहि।
अंजुलिमउलियहत्थो अहिबंदंतो सविभवेण।।1।।

(वीरछन्द)

मैं अनगार गुणों से भूषित गणधर की स्तुति करता।
दोनों हाथ जोड़कर मस्तक पर अंजुलि धर वंदन करता।।1।।

सम्मं चेव य भावे मिच्छाभावे तहे व बोद्धव्वा।
चइऊण मिच्छभावे सम्ममि उवट्ठिदे वंदे।।2।।

दो प्रकार के भाव जीव के सम्यक् और कहे मिथ्या।
तज मिथ्यात्व गहें जो सम्यक् मैं उनको वंदन करता।।2।।

दोदोसविप्पमुक्के तिदंडविरदे तिसल्लपरिसुद्धे।
तिण्णियगारवरहिए तियरणसुद्धे णमस्सामि।।3।।

राग-द्वेष से मुक्त दण्डत्रय से विमुक्त त्रय शल्य विहीन।
गारवत्रय प्रविमुक्त रत्नत्रय से विशुद्ध को नमन करूँ।।3।।

चउविहकसायमहणे चउगइसंसारगमणभयभीए।
पंचासवपडिविरदे पंचेंदियणिज्जदे वंदे।।4।।

कृश हैं चार कषायें चउ गति भव संसृति से जो भयभीत।
पाँचों आस्रव से विरक्त पंचेन्द्रिय विजयी को वन्दूँ।।4।।

छज्जीवदयावण्णे छडायदणविवज्जिये समिदभावे।
सत्तभयविप्पमुक्के सत्ताणभयंकरे वंदे।।5।।

दया करें छह काय जीव पर छह अनायतन रहित प्रशान्त।
सप्त भयों से मुक्त सभी को अभयदान दें उन्हें नमन।।5।।

णदट्ठमघट्ठाणे पणट्ठकम्मट्ठसंसारे।
परमट्ठणिट्ठिमट्ठे अट्ठगुणट्ठीसरे वंदे।।6।।

नष्ट हुए आरम्भ परिग्रह अष्ट कर्म संसार विनष्ट।
शोभित हुए परमपद मैं जो, इष्टगुणों के ईश नमन।।6।।

णवबंभचेरगुत्ते णवणयसब्भावजाणगे बंदे।
दसविहधम्मट्ठाई दससंजमसंजुदे वंदे।।7।।

नव विध ब्रह्मचर्य क धारी नव विध नय स्वरूप जानें।
जो दश विध धर्मस्थ रहें दशसंयम युत को नमन करें।।7।।

एयारसंगसुदसायरपारगे बारसंगसुदणिउणे।
बारसविहतवणिरदे तेरसकिरयापडे वंदे।।8।।

एकादश अंग श्रुत पारंगत द्वादशांग में हुए प्रवीण।
बारह तप धारें अरु तेरह क्रिया करें जो उन्हें नमन।।8।।

भूदेसु दयावण्णे चउ दस चउदस सुगंथपरिसुद्धे।
चउदसपुव्वपगब्भे चउदसमल वज्जिदे वंदे।।9।।

चौदह जीव समास दया युत चौदह परिग्रह रहित विशुद्ध।
चौदह पूर्वों के पाठी चौदहमल वर्जित को वंदन।।9।।

वन्दे चउत्थभत्ता जावदि छम्मासखवणि पाडिपुण्णे।
बंदे अदावन्ते सूरस्स य अहिमुहट्ठिदे सूरे।।10।।

एक दिवस से छह महिने तक का धारण करते उपवास।
रवि-सन्मुख तप करें कर्म चकचूर शूर पद में मम वास।।10।।

बहुविहपडिमट्ठाई णिसेज्जवीराणोज्झवासीयं।
अणिट्ठु अकुडुँबदीये चतदेहे य णमस्सामि।।11।।

बहुविध प्रतिमा योग धरें वीरासन पार्श्व निषधा धार।
नहीं थूँकते नहीं खुजाते तन-निर्मम को नमन हजार।।11।।

ठाणियमोणवदीए अब्भोवासी य रुक्खमूलीय।
धुदकेसमंसु लोमे णिप्पडियम्मे च वंदामि।।12।।

ध्यान धरें अरु मौन रहें नभ या तरुतल में करे निवास।
लोंचे केश न दूर करें रोगों को उन्हें नमन शत वार।।12।।

जल्लमललित्तगत्ते बंदे कम्ममलकलुसपरिसुद्धे।
दीहणहणमंसु लोये तवसिरिभरिए णमस्सामि।।13।।
तन मलीन पर कर्ममलों की कलमषता से रहित हुए।
नख अरु केश बढ़ें तप लक्ष्मी से भूषित को नमन करें।।13।।
णाणोदयाहिसित्ते सीलगुणविहूसिये तवसुगन्धे।
ववगयरायसुदट्ठे सिवगइपहणायगे वंदे।।14।।
ज्ञान नीर अभिषिक्त शील गुण भूषित, तप सुगंध भरपूर।
राग रहित श्रुत सहित मुक्तिपथ नायक मुनिवर को वन्दूँ।।14।।
उग्गतवे दित्ततवे तत्ततवे महातवे य घोरतवे।
वंदामि तवमहंते तवसंजमइड्ढिसम्पत्ते।।15।।
उग्र दीप्त अरु तप्त महातप घोर तपों को जो धारें।
तप संयम अरु ऋद्धि सहित सुर पूजित को हम नमन करें।।15।।
आमोसहिएखेलोसहिएजल्लोसहिय तवसिद्धे।
विप्पोसहिए सव्वोसहिए वंदामि तिविहेण।।16।।
आमौषधि खेलोषधि विप्रौषधि सर्वौषधि के धारी।
तप प्रसिद्ध कृतकृत्य हुए उन मुनिराजों को नमन करूँ।।16।।
अमयमुहघीरसथी सव्वी अक्खीण महाणसे वंदे।
मणवत्तिवचंवलिकायवण्णिणो य वंदामि तिविहेण।।17।।
अमृत-मधु-धृत-क्षीरस्रावि अक्षीण महानस के धारी।
मन-वच-तन बल ऋद्धियुक्त को मन-वच-तन से नमन करूँ।।17।।
वरकुट्ठ वीयबुद्धी पयाणुसारीयसमिण्णसोयारे।
उग्गहईहसमत्थे सुतत्थविसारदे वंदे।।18।।
कोष्ठ बीज पादानुसारि संभिन्न श्रोत्र ऋद्धि धारी।
अवग्रह ईहा में समर्थ, सूत्रार्थ निपुण मुनि को वन्दूँ।।18।।
आभिणिबोहियसुदई ओहिणाणमणणाणि सव्वणाणीय।
वंदे जगप्पदीवे पच्चाक्खपरोक्खणाणीय।।19।।
मति-श्रुत अवधि मन:पर्ययज्ञानी अरु केवलज्ञानी को।
वन्दन जग प्रदीप प्रत्यक्ष परोक्ष ज्ञानधारी मुनि को।।19।।
आयासततुजलसे ढिचारणे जंघचारणे वंदे।
विउव्वणइड्ढिहाणे विज्जाहरपण्णसमणे य।।20।।

प्रतिष्ठा पूजाञ्जलि

नभ-तंतु-जल-पर्वत-अटवीगामी जङ्घाधारी को।
वंदन, ऋद्धि विक्रिया, विद्याधर अरु प्रज्ञा श्रमणों को।।20।।
गइचउरंगुलमणे तहेव फलफुल्लचारणे वंदे।
अणुवमतवमहंते देवासुरवंदिदे वंदे।।21।।
चतुरांगल ऊपर एवं फल-फूलों पर चलनेवाले।
अनुपम तप से पूज्य सुरासुर से बन्दित को नमन करूँ।।21।।
जियभयजियउवसग्गे जियइंदियपरिसहे जियकसाये।
जियरायदोसमोहे जियसुहदुक्खे णमस्सामि।।22।।
जीत लिया भय-उपसर्गों को इन्द्रिय और परिग्रह को।
वन्दन मोह-राग-रुष विजयी सुख-दु:ख समताधारी को।।22।।
एवमए अभित्थुआ अणयारा रायदोसपरिसुद्धा।
संघस्स वरसमाहिं मज्झवि दुक्खक्खयं दिंतु।।23।।
राग-द्वेष से रहित और मुझसे स्तुत्य सभी पद-पूज्य।
मुनिगण को उत्तम समाधि दें मेरे भी दु:ख दूर करें।।24।।

(कार्योत्सर्ग करें)

इच्छामि भंते जोगभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ अड्ढाइजजीव-दोससुद्धसु पण्णरसकम्मभूमीसु आदावणरुक्खमूल अब्भोवासठाणमोणवीरा-सणोक्कवासकुक्कडास णचउत्थपरकरक्खवणादिजोगजुत्ताणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंस्सामि दुक्खक्खय कम्मक्खय बोहिलाओ सुगइगमणं सम्म समाहिमरणं जिणगुण सर्पत्ति होउ मज्झं।

अंचलिका

हे प्रभु! योग भक्ति करके अब मैंने कायोत्सर्ग किया।
इसमें लगे हुए दोषों का अब मैं आलोचन करता।।
ढाई द्वीप-द्वय सिन्धु-कर्मभूमि पन्द्रह आतापन योग।
वृक्षमूल नभवास योग वीरासन एक पार्श्वमय योग।।1।।
कुक्कुट आसन योग तथा उपवास पक्ष-उपवास सदा।
योग सहित सब साधु गणों की करता हूँ मैं नित अर्चा।।
पूजन वन्दन नमन करूँ मैं होवै सब दु:ख कर्मक्षय।
बोधिलाभ हो सुगति गमन हो जिनगुण संपत्ति हो अक्षय।।2।।

6. निर्वाणभक्ति

(आर्या)

अट्ठावयम्मि उसहो चंपाए वासुपुज्ज जिणणाहो।
उज्जंते णेमिजिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो।।1।।

(चौपाई)

अष्टापद आदीश्वर स्वामि, वासुपूज्य चम्पापुरि नामि।
नेमिनाथ स्वामी गिरनार, बन्दौं भाव-उगति उर धार।।1।।

वीसं तु जिणवरिंदा अमरासुरवंदिता धुदकिलेसा।
सम्मेदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं।।2।।

चरम तीर्थंकर चरम-शरीर, पावापुरि स्वामी महावीर।
शिखर समेद जिनेसुर बीस, भावसहित बन्दौं निश-दीस।।2।।

वरदत्तो य बरंगो सायरदत्तो य तारवरणयरे।
आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं।।3।।

वरदत्तराय रु इन्द्र मुनिन्द, सायरदत्त आदि गुणवृन्द।
नगर तारवर मुनि उठकोड़ि, बन्दौं भावसहित कर जोड़ि।।3।।

णेमिसामि पज्जण्णो संबुकुमारो तहेव अणिरुद्धो।
बाहत्तरिकोडीओ उज्जंते सत्तसया सिद्धा।।4।।

श्री गिरनार शिखर विख्यात, कोड़ि बहत्तर अरु सौ सात।
शम्भु प्रद्युम्न कुमर द्वै भाय, अनिरुध आदि नमूँ तसुपाय।।4।।

रामसुबा वेण्णि जणा लाडणरिंदाण पंचकोडीओ।
पावागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं।।5।।

रामचन्द्र के सुत द्वै वीर, लाडनरिन्द आदि गुणधीर।
पञ्चँच कोड़ि मुनि मुक्ति मँझार, पावागिरि बन्दौं निरधार।।5।।

पंडुसुआ तिण्णिजणा दविडणरिंदाण अट्ठकोडीओ।
सेत्तुंजयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं।।6।।

पाण्डव तीन द्रविड़-राजान, आठ कोड़ि मुनि मुकति पयान।
श्री शत्रुंजयगिरि के सीस, भावसहित बन्दौं निश-दीस।।6।।

संते जे बलभद्दा जदुवणरिंदाण अट्ठकोडीओ।
गजपंथे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं।।7।।

जे बलभद्र मुकति में गये, आठ कोड़ि मुनि औरहु भये।
श्री गजपंथ शिखर सुविशाल, तिनके चरण नमूँ तिहुँ काल।।7।।

रामहणू सुग्गीओ गवयगवाक्खो य णीलमहाणीलो।
णवणवदीकोडीओ तुंगीगिरिणिव्वुदे वंदे।।8।।

राम हणू सुग्रीव सुडील, गव गवाख्य नील महानील।
कोड़ि-निन्याणव मुक्ति पयान, तुंगीगिरि वन्दौं धरि ध्यान।।8।।

णंगाणंगकुमारा कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया।
सुवणागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं।।9।।

नंग-अनंगकुमार सुजान, पाँच कोड़ि अरु अर्द्ध प्रमाण।
मुक्ति गये सोनागिरि शीश, ते बन्दौं त्रिभुवनपति ईस।।9।।

दहमुहरायस्स सुवा कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया।
रेवाउहयतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं।।10।।

रावण के सुत आदिकुमार, मुक्ति गये रेवा-तट सार।
कोटि पंच अरु लाख पचास, ते बन्दौं धरि परम हुलास।।10।।

रेवाणइए तीरे पच्छिमभायम्मि सिद्धवरकूडे।
दो चक्की दह कप्पे जाहुट्ठयकोडिणिव्वुदे वंदे।।11।।

रेवानदी सिद्धवर कूट, पश्चिम दिशा देह जहँ छूट।
द्वै चक्री दश कामकुमार, ऊठकोड़ि वन्दौं भव पार।।11।।

वड़वाणीवरणयरे दक्खिणभायम्मि चूलगिरिसिहरे।
इंदजीदकुंभयाणे णिव्वाणगया णमो तेसिं।।12।।

बड़वानी बड़नगर सुचंग, दक्षिण दिशि गिरि चूल उत्तंग।
इन्द्रजीत अरु कुम्भ जु कर्ण, ते बन्दौं भव-सागर-तर्ण।।12।।

पावागिरिवरसिहरे सुव्वण्णभद्दाइमुणिवरा चउरो।
चलणाणईतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं।।13।।

सुवरणभद्र आदि मुनि चार, पावागिरि-वर शिखर मँझार।
चेलना नदी-तीर के पास, मुक्ति गये बन्दौं नित तास।।13।।

फलहोडीवरगामे पच्छिमभायम्मि दोणगिरिसिहरे।
गुरुदत्ताइमुणिंदा णिव्वाणगया णमो तेसिं।।14।।

फलहोड़ी बड़ग्राम अनूप, पश्चिम दिशा द्रोणगिरिरूप।
गुरुदत्तादि मुनीश्वर जहाँ, मुक्ति गये बन्दौं नित तहाँ।।14।।

णायकुमारमुणिंदो बालि महाबाली चेव अज्झेया।
अट्ठावयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं।।15।।

बालि महाबालि मुनि दोय, नागकुमार मिले त्रय होय।
श्री अष्टापद मुक्ति मँझार, ते बन्दौं नित सुरत सँभार।।15।।

अच्चलपुरवरणयरे ईसाण भाए मेढगिरिसिहरे।
आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं।।16।।

अचलापुर की दिश ईसान, तहाँ मेंढगिरि नाम प्रधान।
साढ़े तीन कोड़ि मुनिराय, तिनके चरण नमूँ चित लाय।।16।।

वंसत्थल वरणियरे पच्छिमभायम्मि कुन्थुगिरिसिहरे।
कुलदेसभूसणमुणी णिव्वणाणगया णमो तेसिं।।17।।

वंशस्थल वन के ढिग होय, पश्चिम दिशा कुन्थुगिरि सोय।
कुलभूषण देशभूषण नाम, तिनके चरणनि करूँ प्रणाम।।17।।

जसरटरायस्स सुआ पंचसयाइं कलिंगदेसम्मि।
कोडिसिलाकोडिमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं।।18।।

जसरथ राजा के सुत कहे, देश कलिंग पाँच सौ लहे।
कोटिशिला मुनि कोटि प्रमान, वन्दन करूँ जोरि जुग पान।।18।।

पासस्स समवसणे सहिया वरदत्तमुणिवरा पंच।
रिस्सिंदे गिरिसिहरे णिव्वाणगण णमो तेसिं।।19।।

समवसरण श्रीपार्श्व-जिनंद, रेसन्दीगिरि नयनानन्द।
वरदत्तादि पंच ऋषिराज, ते बन्दौं नित धरम-जिहाज।।19।।

(कार्योत्सर्ग करें)

इच्छामि भंते परिणिव्वाणभत्ति काओसग्गो कओ तस्सालोचेओ इमम्मि अवसप्पिणीए चउत्थसमयस्स पच्छिमे भागे आहुट्ठयमासहीणे वासचउक्कम्मि सेस-कालिम्मि पावाए णयरीए कत्तियमासस्स किण्हचउद्दसिए रत्तीए सादीए णखत्ते पच्चसे भयवदोमहदि महावीरो वड्ढमाणो सिद्धिंगदो तीसुवि लोएसु भवणवासियवाणविंतर-जोइसिइकप्पवासिय त्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेण गंधेण दिव्वेण पुप्फेण दिव्वेण धुवेण दिव्वेण चुण्णेण दिव्वेण वासेण दिव्वेण ण्हाणेण णिच्चकालं अच्चंति पुज्जंति वंदंति णमंसंति परिणिव्वाण-तहाकल्लाणपुज्जं करंति अहमिव इहसंतो तत्थ सत्ताइ णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमंस्सामि परिणिव्वाण महाकल्लाणपुज्जं करेमि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं सम्मं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

अंचलिका

प्रभु निर्वाण भक्ति करके अब मैंने कायोत्सर्ग किया।
इसमें लगे हुए दोषों का अब मैं आलोचन करता।।
तीनवर्ष अरु साढ़े आठ माह थे शेष चतुर्थम् काल।
अन्त समय पावानगरी में कार्तिक कृष्ण अमावस प्रात।।1।।
प्रातःकाल नक्षत्र स्वाति में अन्तिम तीर्थंकर वर्धमान।
कर्म अघाति वीर प्रभु ने पाया निर्वाण महान।।
चार निकायी देव तभी परिवार सहित सब आते हैं।
गन्ध पुष्प अरु चूर्ण धूप सब दिव्य वस्तुएँ लाते हैं।।2।।
निवार्ङ्ण महाकल्याणक की पूजा करते हैं भलीप्रकार।
करें अर्चना और वन्दना नमन करें वे विविध प्रकार।।
मैं भी अर्चन पूजन वन्दन नमन करूँ हो सब दुःख क्षय।
बोधिलाभ हो सुगति गमन हो जिनगुण सम्पत्ति हो अक्षय।।3।।

7. तीर्थंकर भक्ति

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंतजिणे।
णरपवरलोयमहिए बिहुयरयमले महप्पण्णे।।1।।

स्तुति करूँ अनन्त केवली, तीर्थंकर भगवन्तों की।
महाप्राज्ञ रजमल विहीन, चक्री एवं जग-वन्दित की।।1।।

लोयस्सुज्जोययरे धम्मंतित्थंकरे जिणे वंदे।
अरहंते कित्तिस्से चउवीसं चेव केवलिणो।।2।।

लोक प्रकाशक धर्मतीर्थकर्त्ता जिन को वन्दन करता।
चौबिस केवलि भगवन्तों का ही मङ्गल कीर्तन करता।।2।।

उसहमजियं च वंदे संभवमभिणंदणं च सुमई च।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वंदे।।3।।

ऋषभ अजित संभव अभिनन्दन एवं सुमति जिनेश्वर को।
वन्दूँ पद्मप्रभ सुपार्श्व एवं चन्द्रप्रभ जिनवर को।।3।।

सुविहिं च पुष्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च।
विमलमणंतं भयवं धम्मं संति च वंदामि।।4।।

सुविधिनाथ या पुष्पदन्त, शीतल, श्रेयांस अरु वासुपूज्य।
विमल, अनन्त-रु धर्म शान्ति भगवन्तों को मैं नमन करूँ।।4।।

कुंथुं च जिणवरिदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं।
वंदामि रिट्ठणेमिं तह पासं वड्ढमाणं च।।5।।

कुंथुनाथ, अरनाथ, मलिल, मुनिसुव्रत नमि भगवंतों को।
वन्दन करूँ अरिष्टनेमि, पारस श्रीवीर जिनेश्वर को।।5।।

एवं मए अभित्थुया विहुय-रय-मला पदीणजरमरणा।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु।।6।।

रज-मल और जरा-मरणान्तक, जो मुझसे स्तुत्य हुए।
चौबीसों जिनवर तीर्थङ्कर भगवन् हों प्रसन्न मुझ पर।।6।।

कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा।
आरोग्गणाणलाहं दितु समाहि च मे बोहि।।6।।

मुझसे कीर्तित, वन्दित, पूजित, लोकोत्तम कृतकृत्य जिनेन्द्र।
ज्ञान-बोधि-आरोग्य-समाधि-लाभ सदैव प्रदान करें।।7।।

चंदेहि णिम्मलपरा आइच्चेहिं अहिय पहासत्ता।
सायरमिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु।।8।।

जो हैं शशि से भी अति निर्मल रवि से अधिक प्रभा-मण्डित।
सागर-सम गम्भीर, सिद्ध पद, मुझे भी दें सिद्धि।।8।।

8. शांति भक्ति

(शार्दूलविक्रीडित)

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन्पादद्वयं ते प्रजाः।
हेतुस्तत्र विचित्रदुःखनिचयः संसारघोरार्णवः।।
अत्यन्तस्फुरदुग्र रश्मिनिकर व्याकीर्णभूमण्डलो।
ग्रैष्मः कारयतीन्दुपादसलिलच्छायानुराग रविः।।1।।

(शान्त्यष्टक)

प्रभो! आपकी चरण-शरण में भक्तिवशात् न जन आते।
विविध कर्म संतप्त भव्य जन शान्ति हेतु शरणा लेते।।
अति प्रचंड किरणों से रवि जब जग को व्याकुल कर देता।
चन्द्र-किरण, जल, छाया से अनुरागोत्पन्न करा देता।।1।।

क्रुद्धाशीविषदष्टदुर्जयविषय-ज्वालावलीविक्रमो।
विद्याभेषजमन्त्रतोयहवनैर्याति प्रशांतिं यथा।।
तद्वत्ते चरणारुणांबुजयुगस्तोत्रोन्मुखानां नृणाम्।
विघ्नाः कायविनायकाश्च सहसा शामयंत्यहो विस्मयः।।2।।

क्रुद्ध सर्प से डसे मनुज के दुर्जय विष का तीव्र प्रभाव।
विद्या, औषधि, मन्त्र, हवन, जल से हो जाता शीघ्र प्रशान्त।।
जो भविजन प्रभु के चरणाम्बुज की स्तुति सन्मुख होते।
क्या आश्चर्य कि उनके आधि-व्याधि विघ्नादि शान्त होते।।2।।

संतप्तोत्तमकांचनक्षितिधर- श्रीस्पर्द्धिगौरद्युते।
पुंसां त्वच्चरणप्रणामकरणात्पीडाः प्रयान्ति क्षयम्।।
उद्यद्भास्करविस्फुरत्करशतव्याघात निष्कासिता।
नानादेहिविलोचनद्युतिहरा शीघ्रं यथा शर्वरी।।3।।

तप्त स्वर्णगिरि की शोभा से ईर्ष्या करती जिनकी कान्ति।
प्रभु-चरणों में वन्दन से जग की पीड़ा हो जाती शान्त।।
प्रातःकाल दैदीप्यमान रवि-किरणों का पाकर आघात।
यथा नेत्र की कान्ति विनाशक निशा विलय को होती प्राप्त।।3।।

त्रैलोक्येश्वरमंगलब्ध विजयादत्यंतरौद्रात्मकान्।
नानाजन्मशतांतरेषु पुरतो जीवस्य संसारिणः।।
को वा प्रस्खलतीय केन विधिना कालोग्रदावानला-
न्न स्याच्चेत्तव पादपद्मयुगल - स्तुत्यापगावारणम्।।4।।

त्रिभुवन अधिपतियों पर विजय प्राप्त करने से गर्व हुआ।
कालरूप दावानल जग में अतिशय क्रूर प्रचण्ड हुआ।।
बच सकता संसारी प्राणी कहो कौन किस विधि द्वारा।
तव पद-पङ्कज की स्तुति सरिता ने यदि न उसे तारा।।4।।

लोकालोकनिरंतरप्रवितत ज्ञानैकमूर्ते विभो !
नानारत्नपिनद्धदण्डरुचिर श्वेतातपत्रत्रय।।
त्वत्पादद्वयपूतगीतरवतः शीघ्रं द्रवन्त्यामयाः।
दर्पाध्मातमृगेन्द्रभीमनिनदा- द्वन्यायथा कुंजराः।।5।।

लोकालोक झलकते जिसमें ऐसी ज्ञानमूर्ति जिनराज।
रत्नजड़ित सुन्दर दण्डों से शोभित श्वेत छत्रत्रय नाथ।।
जैसे गर्वित सिंह-गर्जना से जंगली हाथी भागें।
तव चरणों की पावन-स्तुति के गीतों से रोग नशें।।5।।

दिव्यस्त्रीनयनाभिरामविपुल- श्रीमेरुचूडामणे।
भास्वद्बालदिवाकरद्युतिहर प्राणीष्टभामंडलम्।।

अव्याबाधमचिंत्यसारमतुलं त्यक्तोपमं शाश्वतम्।
सौख्यं त्वच्चरणारविंदयुगलस्तुत्येव संप्राप्यते।।6।।
सुर-वनिता के लोचन-वल्लभ श्रीवर चूड़ामणि जिनराज।
बाल-दिवाकर शोभाहारी जन-प्रिय भामण्डल युत आप।।
प्रभो! आपके चरण-कमल की स्तुति करती सहज प्रदान।
अव्याबाध अचिन्त्य अतुल अनुपम शाश्वत आनन्द प्रदान।।6।।

यावन्नोदयते प्रभापरिकरः श्रीभास्करो भासयं-
स्तावद्धारयतीह पंकजवन निद्रातिभारश्रमम्।।
यावत्वच्चरणद्वयस्य भगवन्न स्यात्प्रासादोदय-
स्तावज्जीवनिकाय एष वहति प्रायेण पापं महत्।।7।।
जबतक प्रभासमूहयुक्त जगभासक रवि का उदय न हो।
तबतक पङ्कज वन धारण करते हैं सुप्त अवस्था को।।
हे प्रभु! जबतक उदित न होता तव चरणों को मधुर प्रसाद।
तबतक जग के जीव वहन करते रहते पापों का भार।।7।।

शान्तिं शान्तिजिनेन्द्र शांतमनसस्त्वत्पादपद्माश्रयात्।
संप्राप्ताः पृथिवीतलेषु बहवः शान्त्यर्थिनः प्राणिनः।।
कारुण्यान्मम भाक्तिकस्य च विभो दृष्टिं प्रसन्नां कुरु।
त्वत्पादद्वयदैवतस्य गदतः शांत्यष्टकं भक्तितः।।8।।
शान्तचित्त हो शान्ति चाहनेवाले भूतलवासी जीव।
तव चरणों में शान्ति प्रदान करते हैं निश्चित शान्ति जिनेन्द्र।।
चरण-युगल आराध्य हमारे, पढ़ूँ शान्ति अष्टक हे नाथ।
करुणा कर अब मेरी दृष्टि निर्मल करो जिनेश्वर आज।।8।।

(चौपाई)

शांतिजिनं शशिनिर्मलवस्त्रं शीलगुणव्रतसंयमपात्रं।
अष्टशतार्चितलक्षणगात्रं नौमि जिनोत्तममंबुजनेत्रम्।।
पंचमभीप्सितचक्रधराणां पूजितमिन्द्रनरेन्द्रगणैश्च।
शांतिकरं गणशांतिमभीप्सुः षोडशतीर्थंकर प्रणमामि।।9।।
शशि-सम निर्मल वदन, शील-गुण-व्रतधारी हे शान्ति जिनेन्द्र।
शत-अठ लक्षण से शोभित तन, नमूँ जिनोत्तम कमल नयन।।9।।

दिव्यतरुः सुरपुष्पसुवृष्टिर्दुन्दुभिरासनयोजनघोषौ।
आतपवारणचामरयुग्मे यस्य विभाति य मण्डलतेजः।।

तं जगदर्चितशांतिजिनेन्द्रं शांतिकरं शिरसा प्रणमामि।
सर्वगणाय तु यच्छतु शांतिं मह्यमरं पठते परमां च।।10।।
मन वाञ्छित पञ्चम चक्री हो, पूजित इन्द्र नरेन्द्रों से।
शान्ति प्रदायक, शान्ति हेतु मैं सोलहवें जिननाथ नमूँ।।10।।

(वसंततिलका)

येऽभ्यर्चिता मुकुटकुण्डलहाररत्नैः।
शक्रादिभिः सुरगणैः स्तुतपादपद्मा।।
ते मे जिनाः प्रवरवंशजगत्प्रदीपाः।
तीर्थंकराः शततशांतिकरा भवन्तु।।11।।
तरु-अशोक, सुर पुष्पवृष्टि दुन्दुभि सिंहासन दिव्यवचन।
छत्रत्रय, भामण्डल, चौंसठ चंवर, प्रातिहार्य अनुपम।।11।।

(इन्द्रवज्रा)

संपूजकानां प्रतिपालकानां यतीन्द्रसामान्यतपोधनानां।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः करोतु शांतिं भगवान् जिनेन्द्रः।।12।।
जगत्-पूज्य हे शांति प्रदायक, शीश झुकाऊँ शान्ति जिनेन्द्र।
सर्व गणों को शान्ति करो, मुझ पाठक को दो शान्ति परम।।12।।

(स्रग्धरा)

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु बलवान्धर्मिको भूमिपालः।
काले काले च वृष्टिं बिकिरतु मघवा व्याधयो यांतु नाशम्।।
दुर्भिक्षं चौरमारी क्षणमपि जगतां मास्मभूज्जीवलोके।
जैनेन्द्र धर्मचक्रं प्रभवतु सततं सर्वसौख्यप्रदायि।।13।।
कुन्डल, मुकुट हार रत्नोंयुत, इन्द्रों द्वारा पूज्य हुए।
उत्तम वंश, प्रदीप जगत के, सतत शान्ति दो प्रभो मुझे।।13।।

(वसंततिलका)

तद्द्रव्यमन्व्ययमुदेतु शुभः स देशः।
सन्तन्यता प्रतपतां सततं स कालः।।
भावः स नन्दतु सदा यदनुग्रहेण।
रत्नत्रयं प्रतपतीह मुमुक्षुवर्गे।।14।।
सम्यक् पूजक, प्रतिपालक, सामान्य तपोधन यतियों को।
देश, राष्ट्र अरु नगर भूप को, हे जिन! शान्ति प्रदान करो।।14।।

राजा हो बलवान, धार्मिक, सर्वजनों का हो कल्याण।
बरसें मेघ, समय पर, होवें सर्व व्याधियाँ क्षय को प्राप्त।।
जीवों को पलभर भी चोरी मारी अरु दुर्भिक्ष न हो।
सबको दुखदायी जिनवर का धर्मचक्र जयवन्त रहो।।15।।

रत्नत्रय हो सदा प्रकाशित, ऐसा द्रव्य सुदेश मिले।
समीचीन तप की वृद्धि हो, ऐसा उत्तम काल मिले।।
निर्मल परिणति हो प्रसन्न, प्रभु! ऐसा उत्तम भाव मिले।
मोक्षार्थी मुनिगण की परिणति में रत्नत्रय सुमन खिलें।।16।।

(अनुष्टुप्)

प्रध्वस्त-घाति-कर्माण: केवलज्ञान-भास्करा:।
कुर्वन्तु जुगतां शान्तिं वृषभाद्या जिनेश्वरा:।।17।।

घातिकर्म क्षय किये जिन्होंने उदित हुआ कैवल्य प्रकाश।
शान्ति प्रदान करें जग को वृषभादिक चौबीसों जिनराज।।17।।

(कार्योत्सर्ग करें)

इच्छामि भंते शांतिभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउ। पंचमहाकल्याण-सम्पण्णाणं, अट्ठमहापाडिहेरसहियाणं चउतीसातिसयविसेससंजुत्ताणं, बत्तीसदेवेंद्र-मणिमउड-मत्थमहियाणं, बलदेववासुदेवचक्कहररिसिमुणिज-दिअणगारो-वगूढाणं, थुइ-समसहस्सणिलयाणं, उसहाइवीरपच्छिममंगल-महापुरिसाणं णिच्चकालं अंचेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्ख-क्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइगमणं समाहि-मरणं, जिणगुणसम्पत्ति होउ मज्झं।

अंचलिका

हे प्रभु! शान्ति भक्ति करके अब मैंने कायोत्सर्ग किया।
इसमें लगे हुए दोषों का अब मैं आलोचन करता।।

पञ्च महाकल्याण सुशोभित प्रातिहार्य अतिशय भूषित।
बत्तिस इन्द्रों के मणिमय किरीटयुत मस्तक से पूजित।।

चक्री नारायण बलभद्र ऋषि यति अनगार सहित।
लाखों स्तुतियों के घर ऋषभादि वीर पर्यन्त जिनेन्द्र।।

सदा अर्चना पूजा वन्दन नमन करूँ हों सब दु:खक्षय।
बोधिलाभ हो सुगति गमन हो जिनगुण सम्पत्ति हो अक्षय।।

9. समाधि भक्ति

(अनुष्टुप्)

स्वात्माभिमुखसंवित्तिलक्षणं श्रुतचक्षुषा।
पश्यन्पश्यामि देव त्वां केवलज्ञानचक्षुषा।।1।।

हे प्रभु! निज-संवेदन लक्षण-भूषित श्रुत-चक्षु द्वारा।
केवलज्ञान चक्षु से मंडित, आज आपको देख रहा।।1।।

(मन्दाक्रान्ता)

शास्त्राभ्यासो जिनपतिनुति: संगति: सर्वदार्यै:।
सद्वृत्तानां गुणगणकथा दोषवादे च मौनम्।।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे।
संपद्यतां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्ग:।।2।।

शास्त्राभ्यास जिनेन्द्र भक्ति संगति की आर्यों की रहे सदा।
सज्जन का गुणगान करूँ मैं दोष कथन नहिं करूँ कदा।।
हित-मित-प्रिय वाणी हो सबसे आत्म भावना ही आऊँ।
गति अपवर्ग न होवे जब तक भव-भव में यह वर पाऊँ।।2।।

(स्वागता)

जैनमार्गरुचिरन्यमार्गनिर्वेगता जिनगुणस्तुतौ मति:।
निष्कलंकविमलोक्तिभावना: संभवन्तु मम जन्मजन्मनि।।3।।

जिनपथ में रुचि विरति अन्य से जिनगुण स्तवन मैं अति लीन।
निष्कलंक निर्दोष भावना हो मेरी भव-भव में पीन।।3।।

(आर्या)

गुरुमूले यतिनिचिते चैत्यसिद्धांतवार्धिसद्घोषे।
मम भवतु जन्मजन्मनि सन्यसनसमन्वितं मरणम्।।4।।

गुरु-चरणों में यति समूह में जिनशासन का हो जय घोष।
भव-भव में हो प्राप्त मुझे संन्यास पूर्वक देह वियोग।।4।।

(अनुष्टुप्)

जन्मजन्मकृतं पापं जन्मकोटिसमर्जितम्।
जन्ममृत्युजरामूलं हन्यते जिनवन्दनात्।।5।।

जन्म-जन्म में किये पाप जो कोटि जन्म से संचित हैं।
जन्म-मृत्यु अरु जरा मूल जो जिन वन्दन से शीघ्र नशें।।5।।

(शार्दूलविक्रीडित)

आबाल्याज्जिनेदेवदेव भवतः श्रीपादयोः सेवया।
सेवासक्तविनेयकल्पलतया कालोद्ययावद्गतः।।
त्वां तस्याः फलमर्थये तदधुना प्राणप्रयाणक्षणे।
त्वन्नामप्रतिबद्धवर्णपठने कण्ठोऽष्ठकुण्ठो मम।।6।।

सेवार्पित भक्तों को है जो, कलपबेलि तव चरण कमल।
उनकी सेवा में बीता है, बचपन से अब तक का काल।।
हे प्रभु! प्राण-प्रयाण क्षणों में मेरा कण्ठ न हो असफल।
नाथ! आपके नाम कथन में चाहूँ आराधन का फल।।6।।

(आर्या)

तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनम्।
तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद्यावन्निर्वाणसंप्राप्तिः।।7।।

तेरे चरण-युग मम उर में मम उर भी तव चरणों में।
सदा बसे हे जिनवर जब तक मुक्ति लक्ष्मी प्राप्त हमें।।7।।

एकापि समर्थेयं जिनभक्तिर्दुर्गति निवारयितुम्।
पुण्यानि च पूरयितुं दातुँ मुक्तिश्रियं कृतिनः।।8।।

जिन-भक्तों की भक्ति मात्र ही कुगति निवारण में पर्याप्त।
भरे पुण्य भण्डार और शिवपद प्रदान में पूर्ण समर्थ।।8।।

पंचसुअ दीवणामे पंचम्मिय सायरे जिणे वंदे।
पच जसोयरणामे पंचम्मियं मंदरे वंदे।।9।।

पञ्चमेरु संबंधी पाँच अरिंजप जिन मतिसागर पाँच।
पाँच यशोधर जिनवर वन्दूँ, वन्दूँ जिन सीमन्धर पाँच।।9।।

रयणत्तयं च वंदे चव्वीसजिणे च सव्वदा वंदे।
पंचगुरूणं वंदे चारणचरणं सदा वंदे।।10।।

रत्नत्रय को नमन करूँ, चौबीस जिनेश्वर को वन्दूँ।
पञ्च परमगुरु को वन्दूँ मुनि चारण चरण सदा वन्दूँ।।10।।

(अनुष्टुप्)

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म वाचकं परमेष्ठिनः।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणमाम्यहं।।11।।

आत्मब्रह्म का वाचक अथवा परमेष्ठी पद का वाचक।
सिद्धचक्र के बीज भूत अर्हं अक्षर का ध्यान करूँ।।11।।

प्रतिष्ठा पूजाञ्जलि

कर्माष्टकविनिमुक्तं मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम्।
सम्यक्त्वादि गुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम्।।12।।

अष्टकर्म से मुक्त हुए जो मुक्ति श्री के भव्य सदन।
सम्यक्त्वादि गुणों से भूषित सिद्धचक्र को करूँ नमन।।12।।

(शार्दूलविक्रीडित)

आकृष्टिं सुरसम्पदां विदधते मुक्तिश्रियो वश्यतां।
उच्चाटं विपदां चतुर्गतिभुवा विद्वेषमात्मैनसाम्।।
स्तम्भं दुर्गमनं प्रति प्रयततो मोहस्य सम्मोहनम्।
पायात्पंचनमस्क्रियाक्षरमयी साराधना देवता।।13।।

सुर-संपत्ति का आकर्षण है, मुक्तिश्री का वशीकरण।
चहुँगति विपदा का उच्चाटन पापों का है नाशकरण।।
दुर्गति का रोधक स्तम्भन मोह हेतु सम्मोहन मन्त्र।
नमस्कार परमेष्ठी वाचक मम रक्षक हो आराधन।।13।।

(अनुष्टुप्)

अनन्तानन्तसंसार-सन्ततिच्छेदकारणम्।
जिनराजपदाम्भोजस्मरणं शरणं मम।।14।।

इस संसार अनन्तानन्त जन्म-संतति के छेदक हैं।
जिन-पद-पंकज का सुमरन ही शरणभूत है सदा मुझे।।14।।

अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम।
तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वरः।।15।।

तुम बिन नहीं शरण है कोई एक मात्र हो शरण तुम्हीं।
अतः जिनेश्वर! करुणा करके रक्षा करो सदा मेरी।।15।।

नहि त्राता नहि त्राता नहि त्राता जगतत्रये।
वीतरागात्परो देवो न भूतो न भविष्यति।।16।।

नहीं नहीं है नहीं अरे! रक्षक कोई इस त्रिभुवन में।
वीतराग जिनदेव सिवा, नहिं हुआ और होगा जग में।।16।।

जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने दिने।
सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु भवे भवे।।17।।

जिनवर भक्ति जिनवर भक्ति जिनवर भक्ति प्रतिदिन हो।
सदा मुझे हो सदा मुझे हो सदा मुझे हो भव भव में।।17।।

याचेहं याचेहं जिन तव चरणारविंदयोर्भक्तिम्।
याचेहं याचेहं पुनरपि तामेव तामेव।।18।।

हे जिन! तेरे चरण कमल की भक्ति सदा ही मैं चाहूँ।
पुनः पुनः तव चरणों की ही भक्ति सदा ही मैं चाहूँ।।18।।

विघ्न समूह, शाकिनी एवं भूत, सर्प हों नष्ट सभी।
विष भी हो जाता है निर्विष, स्तुति करें जिनेश्वर की।।19।।

(कार्योत्सर्ग करें)

इच्छामि भंते समाहिभत्तिकाउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं। रयणत्तयपरूव परमप्पझाणलक्खणं समाहिभत्तीये णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

अंचलिका

यह समाधि भक्ति करके अब मैंने कायोत्सर्ग किया।
इसमें लगे हुए दोषों का अब मैं आलोचन करता।।

रत्नत्रय के प्रतिपादक अरु परमातम के ध्यान स्वरूप।
शुद्ध आत्मा की करता मैं सदा वन्दना मङ्गल रूप।।

सदा अर्चना पूजन वन्दन नमन करूँ हों सब दुःख क्षय।
बोधि लाभ हो सुगति गमन हो जिनगुण संपत्ति हो अक्षय।।

लघु चैत्य भक्ति

(अनुष्टुप्)

वर्षेषु वर्षान्तर..........

भरतादिक के गिरि-शिखरों पर पंचमेरु नन्दीश्वर में।
जितने चैत्यालय त्रिलोक में नमन करूँ जिन-चरणों में।।1।।

अवनितलगतानां.....

पृथ्वी तल पर कृत्रिम अकृत्रिम, व्यन्तर, भवनवासि, दिवि में।
यहाँ मनुजकृत, सुरपति वन्दित जिन चैत्यालय को वन्दूँ।।2।।

जम्बू घातविक पुष्करार्ध.....

जम्बू-घातकि-पुष्करार्ध के ढाई द्वीप में जो विचरें।
चंद्र, कमल अरु मोरकंठ, कञ्चन मेघों सम कान्ति धरें।।

प्रतिष्ठा पूजाञ्जलि

सम्यग्ज्ञान चरित लक्षण धर भस्म करें कर्मेन्धन को।
भूत भविष्यत वर्तमान के वन्दूँ सर्व जिनेश्वर को।।3।।

श्रीमन्मेरो कुलाद्रौ.....

पञ्चमेरु अरु कुलाचलौ, विजयार्धो, जम्बू, शाल्मलि पर।
चैत्यवृक्ष, वक्षार, रुचकगिरि, रति, कुण्डल, मनुजोत्तर पर।।
इष्वाकार गिरि, अञ्जन, दधिमुख, व्यन्तर सुर लोकों में।
ज्योतिर्लोक, भवन, भूतल पर जिनमंदिर को नमन करूँ।।4।।

देवासुरेन्द्र नर नाग समर्चितेभ्यः।
पाप प्रणाशकर भव्यं मनोहरेभ्यः।।
घंटाध्वजादि परिवार विभूषितेभ्यो।
नित्यं नमो जगति सर्व जिनालेभ्यः।।5।।

इन्द्र, नरेन्द्रों, असुरेन्द्रों से धरणेन्द्रों से पूजित हैं।
पाप प्राणाशक, भव्यजनों का मन आकर्षित करते हैं।।
घन्टा, ध्वजा, घूपघट माला मङ्गल द्रव्य विभूषित हैं।
जग के सब जिन चैत्यालय को नित प्रति वन्दन करता मैं।।5।।

(कार्योत्सर्ग करें)

अंचलिका

हे प्रभु! चैत्य भक्ति करके अब मैंने कायोत्सर्ग किया।
इसमें लगे हुए दोषों का अब मैं आलोचन करता।।
अघो-मध्य अरु ऊर्ध्व लोक के कृत्रिम-अकृत्रिम चैत्यालय।
चतुर्निकाय सुर परिवार भक्ति से आते जिन-आलप।।
दिव्य गन्ध, जल अक्षत दिव्य सुमन धूप फल अरु नैवेद्य।
नित्य वन्दना पूजा अर्चा नमस्कार करते सब देव।।
मैं भी नित्य वन्दना पूजा अर्चा करता, हों दुख क्षय।
बोधि लाभ हो सुगति गमन हो जिन गुण सम्पत्ति हो अलभ।।